आनन्द की खोज

(निबन्ध-संग्रह)

पुरुषोत्तम मिश्र 'संकुल'

आई0बी0एस0 पब्लिकेशन
4, सरस्वती पुरम, गोमती नगर, लखनऊ

आई0एस0बी0एन0	:	978-81-910558-6-3
सर्वाधिकार	:	लेखक
प्रकाशक	:	**आई0बी0एस0 पब्लिकेशन** 4, सरस्वती पुरम, गोमती नगर लखनऊ (उ0प्र0) पिन-226016
प्रथम संस्करण	:	2015
मूल्य	:	295.00
शब्द संयोजक	:	मनीष कम्प्यूटर्स, लखनऊ
आवरण	:	मुस्कान कम्प्यूटर्स, दिल्ली
मुद्रक	:	बी0के0 आफसेट, शाहदरा, दिल्ली-110032

ANAND KI KHOJ

by - Purushottam Mishra 'Sankul'



समर्पण

सत्य से प्रेम है जिनको।
समर्पित यह रचना उनको ॥

अपनी बात



मेरे पास सीमित ज्ञान एवं अनेक त्रुटियाँ हैं सर्वप्रथम इसके लिए विज्ञजनों से क्षमा प्रार्थी हूँ। आनन्द की खोज निबन्ध संग्रह में अनुभवों को रंग देने का प्रयास किया है यद्यपि जीवन का वास्तविक रंग मेरे समझ से परे है, परन्तु जीवन को जिस तरह देख रहा हूँ विचित्र लग रहा है। अत्याधिक भावुकता जहाँ मुझे लेखन की शक्ति प्रदान करती है तो कभी–कभी अधीर भी कर देती है। स्वभाव पर अंकुश लगाना सचमुच कठिन है। कोई कवि या कलाकार अपनी रचना का आधार प्रकृति से ही लेता है मेरे अभिमत से बिना केन्द्र के वृत्त का निर्माण नहीं हो सकता परन्तु कोई भी केन्द्र प्रथम स्तर पर बिन्दु ही होता है कलाकार वही है जो इस बिन्दु में सिन्धु को देख लेता है।

भावनाएँ आहत होती हैं तो दुःख होता है हमारे प्रयास के बावजूद भी भावनाओं का टूटना निश्चित है। रंग अपने ही रंग में रंगा होने के बावजूद भी रंग को नाम नहीं दे पाता, ऐसी स्थिति में दूसरे के रंग को कैसे समझा जा सकता है। मेरा अभिप्राय यह नहीं कि संसार में प्रेम, करुणा, दया, ममता का स्थान नहीं, परन्तु ये सब कहाँ निवास करती हैं, वह जगह खोज नहीं पाया। असल में मानव हृदय में स्पंदन तो है परन्तु जो वायु इसे संचालित कर रही है वह गुब्बारे में सिमट कर रह गयी है।

हर प्राणी में रिक्तता है इसकी पूर्ति में सारा जीवन इति हो जाता है। अपनी रिक्तता भरने का भौतिक जगत में अत्याधिक प्रयास किया परन्तु प्यास बुझ न सकी, क्या जीवन की यही वास्तविकता है। संसार में ऐसा कुछ भी नहीं मिला जो मेरे दग्ध अन्तःस्थल को शीतलता दे पाया। स्यात् सौन्दर्य चक्षुओं का विषय है नेत्रों ने मुझे बार–बार भ्रम की स्थिति में डाल दिया मैं वह भी करता रहा जो मुझे पसन्द नहीं। किसी को दोष देने से बेहतर है मन को नियन्त्रण में रखना। बाहरी दृश्यों का हम चित्र बना सकते हैं परन्तु इन चित्रों को संसार में खोज नहीं सकते। अस्तु कलाकार को सिर्फ अपनी कला से ही प्रेम करना चाहिए।

अपना कौन है इस द्वन्द्वमय जगत् में खोज पाना कठिन है रक्त के रिश्तों में अपनापन दिखायी तो देता है, पर पकड़ में नहीं आता इस स्थिति में ईश्वर को ही स्मरण करना पड़ेगा। जब हमारे मन में आस्था उत्पन्न हो जाती है, तो जो नहीं है प्रतीत होने लगता है। ठीक इसी तरह संसार में यदि हम किसी से निश्छल हृदय से

प्रेम कर बैठें, और वह हमारे शब्दों के अर्थ का अनसुना कर दे, तो वह होकर भी न होने से अधिक कष्टदायी हो जाता है। यद्यपि प्रेम में कुछ पाना नहीं होता, परन्तु भौतिक जगत् में मानव स्वार्थ से पूर्णतया मुक्त नहीं हो सकता। अस्तु प्रेम रिक्तता की पूर्ति करने का साधना मात्र है। हमारी रागात्मक वृत्तियों का संकेत है यह ठीक है कि बुद्धि इसका संचालन करती है। अस्तु ज्ञानी का प्रेम वासना शान्ति का माध्यम बनकर भी विशुद्ध होगा। यदि ऐसा नहीं हुआ तो ज्ञान का महत्त्व जगत में क्षीण हो जायेगा।

विशाखापट्टनम् की धरती पर एक तेलगू माणविका के सौन्दर्य से अभिभूत होकर हृदय में ऐसा क्रंदन उठा कि स्पात् यह मेरी पुत्री होती। इसी भाव के प्रवाह में बहकर मेरे हृदय में सुप्तस्थ कवित्व का बीज अंकुरित हुआ। 'बेटी' लिखने का प्रयोजन वह बालिका मेरे अन्तःस्थल में समा गयी। कैसी घोर विडम्बना है कि पत्नी, पुत्री, पुत्र सब कुछ होकर भी मेरे हृदय में उसके लिए जो वात्सल्य का भाव जगा अप्रतिम है। वह मुझे इतनी अनिंद्य लगी कि उसका सानिध्य मेरे लिये अपरिहार्य हो गया। मेरे सिद्धान्तो ने मुझे कल्पना लोक में भी आदर्श से बाँध रखा। परिणाम स्वरूप 'बेटी' मेरा दर्शन बन गयी।

तुम सा सुन्दर यदि और कोई
मेरे मन पर छा जायेगा।
तो निश्चित वह बेटी होगी,
या बेटी सा दिखलायेगा। — 'बेटी' से

अपनी कविता संग्रह 'बेटी' को लेकर एक दिन जे.बी. अकादमी, फैजाबाद गया। वहाँ की लाइब्रेरियन शिल्पा आनन्द नामक माणविका से परिचय हुआ। उसकी अवक्रता एवं सदयता से अत्यंत प्रभावित हुआ, जब उसने निःस्वार्थ भाव से मुझे सहायता प्रदान करने की बात कही तो उर गद्गद हो गया। तेलगू बाला को लेकर मन में बनी आदर्श बेटी का छवि उसमें दिखने लगी। प्रपंचात्मक जगत् में क्या वह मेरी भावना समझ पायेगी नहीं जानता। पर मैं उसे मानस पुत्री के रूप में सदैव याद करता रहूँगा। मेरे स्वजन अथवा अन्य जन मेरी बात पर यकीन करेगें या नहीं सारे प्रश्न अवांछनीय है। इस संदर्भ में होनी वाली आलोचना मेरी पथ प्रदीप करेगी।

आस्था मूल्यांकन नहीं करती फिर भी अनेक चिंतकों ने आस्था को महत्त्वपूर्ण स्थान दिया है। भक्त के लिये प्रतिमा–प्रतिमा नहीं स्वयं भगवान होते है भक्ति के प्रवाह में जो अनुरक्त हो जाता है वही इस सत्य का साक्षात्कार कर सकता है। ईश्वर साकार है या निराकार इस प्रश्न पर चिंतन करने से बेहतर साकार रूप

को स्वीकार करता हूँ। जो लोग निराकार ब्रह्म की उपासना करते है वे मस्जिद, गिरजा या गुरूद्वारा का निर्माण किस प्रयोजन हेतु करते है विचारणीय है। सूक्ष्म को समझने के लिए स्थूल की भी जरूरत है।

कल्पना का यथार्थ से कोई सम्बन्ध नहीं हो सकता मैंने आदर्श बेटी की कल्पना की जो भौतिक जगत में नहीं मिल सकती। शिल्पा आनन्द में उसको खोजना भूल है, पर मुझे इसका पछतावा नहीं। संसार से बनने वाले सगे सम्बन्धी सारे रक्त के रिश्तों को मैंने गहन–मंथन किया है घोर निराशा के सिवा कुछ नहीं मिला। कल्पना की बेटी को साकार कर मैंने अपने घावों को कुरेदने का ही कार्य किया।

सम्बन्ध लौकिक हो या अलौकिक सब का सूत्रधार मन है मन की शुचिता ही मुक्ति है। मूर्ति के टूटने पर मूर्तिकार को जो पीड़ा होती है उसका दर्द तो वह ही समझ सकता है। रिश्तों के टूटने का दर्द हर प्राणी जान सकता है। परन्तु आदर्श के विखंडन होने पर कलाकार को जो पीड़ा होती है वह उसे जड़ बना देती है, स्यात् इसीलिए नारी से मर्माहत होकर अनेक कवियों ने नारी जाति के प्रति आक्रोश व्यक्त कर डाला। ऐसा इसलिए होता है कि कलाकार का प्रेम निश्छल होता है, जिसके बल वह पत्थर की मूर्ति को सजीव कर देता है। इसी कारण प्रेम को जगत का सार कहा जाता है।

अर्थ प्रधान युग में मानवीय संवेदना शव में परिवर्तित हो गयी है मेरे आँसू सूख चुके हैं। बस टुकुर–टुकुर देखने के सिवा कर भी क्या सकता हूँ अच्छा होता नेत्र ही न होते। नेत्र है तो दृश्य हृदय तक पहुँच जाता है इसलिए छटपटा उठता हूँ, इस छटपटाहट में कलम एवं कागज के सिवा कौन मित्र हो सकता है, यही दो चीजे मेरे सच्चे मित्र हैं। सचमुच इन से बात कर मुझे सुकून मिलता है। देखना है धरती पर मेरे जैसे कितने लोग है जो मेरी इन बातों पर विश्वास कर आनन्द की खोज निबंध संग्रह की ऊँचाई छूना चाहेंगे। बुराई की गहराई का पता इस धरती पर लगाया जा सकता है, परन्तु अच्छाई की ऊँचाई को छुआ नहीं जा सकता, अस्तु अच्दा आदमी बनने की चाह कभी परिपूर्ण नहीं हो पाती। विज्ञजन मेरे निबंध–संग्रह की त्रुटियों को नजर अंदाज कर मुझे अपने स्नेह से वंचित नहीं करेंगे यह उम्मीद ही मेरे लेखन की पूंजी है।

मानवीय दोषों से रहित होने का दावा नहीं करता परन्तु वर्तमान समाज जहाँ तक मुझे दिखायी दे रहा है इसमें रहकर सांस लेने में घुटन महसूस हो रही है। अनुभव के आधार पर संसार का मूल्यांकन करने की क्षमता मेरे पास नहीं है परन्तु लोगों ने जिस तरह मेरे साथ व्यवहार किया उसका उत्तर इस संसार को देना

भी आवश्यक है। आनन्द की खोज निबन्ध संग्रह में मैंने यह भी कोशिश की है।

सत्य निष्ठा एवं ईमानदारी पर चलने वालों को प्रताड़ना मिल रही है आचरण हीन लोगों का वर्चस्व निरन्तर बढ़ता जा रहा है इसका खामियजा राष्ट्र को भुगतना पड़ेगा। शीर्ष पदों पर आसीन लोग इसका चिंतन करना नहीं चाहते। आज का शिक्षित वर्ग धन कमा लेना ही जीवन का लक्ष्य समझ बैठा है। इस धरती पर अनेकों भौतिकवादी विचारक हुए परन्तु उनमें भी मानवता के कल्याण की कामना कहीं–कहीं दिखायी देती है। परन्तु आज का मानव मानवता का मर्म ही भूलता जा रहा है।

शब्दों का विस्तार हो रहा है परन्तु अर्थ लुप्त होता जा रहा है। वाणी का सर्वत्र दुरुपयोग हो रहा है किस पर भरोसा करे? इस प्रश्न का उत्तर मेरे पास नहीं है विज्ञजन की इसका निर्णय करे यह मेरी उन से प्रार्थना है। मैंने जो महसूस किया लिख दिया यदि मेरी बात धरती पर एक भी व्यक्ति के हृदय में उतर जाये तो मैं अपनी रचना को सफल समझूँगा। मुझे ऐसे व्यक्ति की तलाश है जो मानव की परिभाषा समझ सकता हो?

अंधकार को खत्म करने के लिए प्रकाश की एक किरण पर्याप्त होती है मानव मन में जो घोर तिमिर छा गया है इसे शिक्षा के माध्यम से ही खत्म किया जा सकता है। इसलिए देश के बुद्धिजीवियों को इस विषय पर चिंतन करने की आवश्यकता है कि मानवीय संवेदना मरने न पाये। इसके लिए हमें शिक्षा प्रणाली का मूल्यांकन करने की जरूरत है। आर्थिक उन्नति के साथ व्यक्ति का चारित्रिक विकास नहीं होगा तो भारत वर्ष अपनी पुरानी गरिमा खो देगा विश्व में भारत की पहचान लुप्त हो जायेगी। अतः यह परम आवश्यक है कि हम अपने नागरिकों के जीवन स्तर उठाने हेतु सारा ध्यान उदर पर ही केन्द्रित न रखें। डॉक्टर, इंजीनियर, वैज्ञानिक या राजनेता गढ़ते वक्त हम यह भी प्रयास करें कि इनके अंदर की संवेदना जीवित रहे। धन साधन है साध्य नहीं आज इस ज्ञान की परम आवश्यकता है।

आनन्द की खोज निबन्ध संग्रह में मैंने इन्हीं बिन्दुओं पर चिंतन करने का प्रयास किया है। मेरे विचार से आचरण ही जीवन की सर्वोत्तम निधि है। संसार की नजर में गिर कर जीना इतना कष्टदायी नहीं होता जितना अपनी नजरों में गिरकर होता है। आवश्यकता इस बात की है कि हम स्वयं का मूल्यांकन करना सीखें। इस प्रयास में सफल होने वाले की निश्चित दिनचर्या बदल जायेगी। स्वयं पर स्वयं का अनुशासन होना परम आवश्यक है। मैं अपने विचार किसी पर थोपना नहीं चाहता परन्तु इस पुस्तक के माध्यम से लोगों को आत्म विश्लेषण कराना चाहता हूँ। यदि मैं

ऐसा कर सका तो मेरा लेखन ही नहीं अपितु मेरा जन्म भी सार्थक हो जायेगा।

अनुभव ज्ञान नहीं होता फिर भी मैं इस निष्कर्ष पर पहुँचा कि नारियाँ पुरुषों से कहीं अधिक निष्कपट, भावुक दयालु ही नहीं अपितु अपने कर्तव्य के प्रति अधिक सजग होती है। श्रीमती शान्तवना तिवारी संयुक्त निदेशक उत्तर प्रदेश माध्यमिक शिक्षा अभियान लखनऊ एवं श्रीमती किरण संजय आशुलिपिक कार्यकारी अध्यक्ष उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान, लखनऊ की सरलता एवं विशाल हृदय की कांति मेरे मानस पाटल पर सदैव जगमगाती रहेगी। इस रचना के निर्माण में जिन लोगों ने मुझे सहयोग दिया उन सब के प्रति कृतज्ञता व्यक्त करता हूँ। मेरे मित्र वहीं है जो मुझे मेरी कमियों का ज्ञान कराते है विज्ञ जनो की प्रति क्रिया की प्रतीक्षा में...

■ ■ ■

– पुरुषोत्तम मिश्र 'संकुल'

अभिमत



कवि पुरुषोत्तम मिश्र 'संकुल' स्व–रचित कविता संग्रह 'बेटी' लेकर मेरे पास आए, उनकी कविता सुनकर मैं अत्यन्त प्रभावित हुई। मैंने उनकी पुस्तक लाइब्रेरी के लिए ले ली तो उन्होंने कहा– बेटी मैं साहित्य द्वारा समाज सेवा करना चाहता हूँ, मेरे पास शिक्षा नगण्य है पुत्री तुम विदुषी हो, निःस्वार्थ भाव से मेरी मदद करोगी। उनके प्रति मेरे मन में आदर भाव था अतः मैं इंकार न कर सकी और 01 फरवरी 2014 को उनकी मूल प्रति पर सहयोग देने का वचन देकर साइन कर दिया। उन्होंने भी मुझे मानस पुत्री के रूप में सदैव याद रखने का वचन दिया।

उनकी बात पर विश्वास नहीं हुआ। हो भी तो कैसे? रिश्तों से सड़ने की बदबू आने लगी है, ऐसे में किसी अपरिचित पर विश्वास कैसे किया जा सकता है। यह सोचकर मैंने उन्हें कई बार इग्नोर किया पर वे मुझसे निरन्तर फोन पर बात करते रहे। धीरे–धीरे मुझे महसूस होने लगा, सचमुच वे मुझे बेटी तुल्य स्नेह करते हैं, पर क्यों? इस रहस्य की तह में मैं नहीं जा सकती, पर अब उनकी भावनाओं को नजरअंदाज करना मेरे लिए कठिन हो गया। मेरे हृदय में उनके प्रति पिता समान श्रद्धा और प्यार उत्पन्न हो गया। मैं उन्हें सर कहती हूँ हाँ एक दिन उनके बेटी के प्रति उत्तर में पापाजी कह दिया, तब से मैं उन्हें पापा जी ही कहती हूँ। वे मेरे पिता तुल्य हैं, माता–पिता की पवित्र भावनाओं का कद्र करना संतान का कर्त्तव्य है इसी भाव के वशीभूत मैं उनकी पुस्तक की त्रुटियों को सुधारकर अपना अभिमत लिख रही हूँ।

पुरुषोत्तम मिश्र 'संकुल' की पुस्तक आनन्द की खोज वर्तमान समाज का आईना है। आज का इन्सान इंसानियत को भूलकर जिस तरह सभ्य बनने का नाटक कर रहा है, उस नाटकीयता की तह में पहुँचने का लेखक ने प्रयास किया है। समुद्र मंथन करने वालों को सर्वप्रथम विष प्राप्त होता है। इसी तरह सच्चाई एवं नेकी की राह में चलने वालों को कष्टों से गुजरना होगा, तभी अमृत की प्राप्ति होगी। इस पुस्तक द्वारा नेक एवं इमानदार लोगों को सान्त्वना प्रदान करने का प्रयास लेखक का सराहनीय है। महान् आत्मा के बिना किसी कवि या लेखक की रचना अमर नहीं हो सकती। जिस व्यक्ति का आचरण मजबूत नहीं होगा उसकी रचना मानवता के मूल तत्त्व से भटक जायेगी। मेरे मत से इस पुस्तक में लेखक ने मानवता के मर्म को मूल स्थान देकर राष्ट्र ही नहीं, अपितु समस्त विश्व के कल्याण

की कामना की है, जाति, धर्म, लिंग, रंग एवं समस्त भेदों से परे आदर्श लोक की कल्पना लेखक के उदात्त भाव का परिणाम है जो उसके चरित्र, आचार एवं व्यवहार का प्रमाण है।

सरल, सुबोध शैली में लिखी यह किताब इंसान को आत्मविश्लेषण करने को विवश करती है। मेरा मानना है कि यह किताब सीधे दिल से लिखी गयी है। जीवन की विवशताओं के इन चित्रों में दुःख, दर्द, दौड़ और दहन ऐसी जीवंत धड़कन है कि पाठक इसके साथ खुद को बँधा अनुभव करने लगता है। इक्कीसवीं सदी में भी नारी के प्रति पुरुष के सोच में कोई विशेष बदलाव नहीं आया है, यह दुःख लेखक को कचोटता जरूर रहा होगा तभी वह नारी की वेदना को समझ पाया है। राष्ट्र को मजबूत बनाने हेतु लेखक के विचार समाज को दिशा दे सकते हैं। बच्चों एवं युवाओं के लिए यह पुस्तक उपयोगी सिद्ध होगी। मेरे विचार से यह पुस्तक सबको पढ़ना जरूरी है। इसमें जीवन के अनुभवों की परख भी है, और उनसे सीखने की सलाहियत भी।

लेखक के इस निबन्ध–संग्रह में जिन्दगी में जब तब उठ खड़े होने वाले सवालों से रचनात्मक संवाद है जो हमारे दिल को छूने का सामर्थ्य रखते हैं। साहित्य का उद्‌देश्य ऐसे समाज का निर्माण करना है जहाँ आदमी–आदमी के दर्द को समझ सके। कविता या निबन्ध मात्र मनोरंजन का साधन नहीं अपितु इसका उद्‌देश्य ज्ञानवर्द्धन मानसिक एवं नैतिक स्वास्थ्य तथा सुखानुभूति में वृद्धि करना होना चाहिए। जो इस किताब में सहजता से प्राप्त होता है। लेखक पुरुषोत्तम मिश्र का कथेतर गद्य समय की चिंताओं और समाज की परख से जुड़ा है। उनके जमीनी चिन्तन के आधार पर यह बात सहज अनुभव की जा सकती है कि मनुष्य हो या राष्ट्र वह उतना ही आगे बढ़ता है जितने उसके स्वप्न बड़े होते हैं।

आधुनिक जीवन की चमक में बिलबिला रहे मूल्यों और सोते जा रहे विवेक को फिर जगाने की कोशिश में यह पुस्तक विविधता भरी रोचक एवं विचारोत्तेजक है। यह पुस्तक हमारे मनोभावों पर प्रभाव डाल कर हमें सत्कर्म करने की प्रेरणा देती है। विद्यार्थियों के लिए यह पुस्तक विशेष उपयोगी सिद्ध होगी, मुझे विश्वास है कि यह पुस्तक साहित्य में अपनी पहचान बनाएगी इसी कामना के साथ......!

■ ■ ■

– शिल्पा प्रकाश आनन्द
पुस्तकालयाध्यक्ष
जे.बी. अकादमी फेजाबाद (उ0प्र0)

समीक्षा

– डॉ0 बलराज पांडेय
पूर्व अध्यक्ष हिन्दी विभाग
काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी

पुरुषोत्तम मिश्र 'संकुल' का निबंध संग्रह है 'आनन्द की खोज'। शीर्षक से ही पता चलता है कि लेखक ने सांसारिक दुःख–दैन्य पर गहन चिन्तन–मनन किया है और संसार के दुःख से दुःखी हुए बिना कुछ भी लिखना कठिन है। इसलिए इस निबंध संग्रह में जितने निबंध हैं, सभी में देश की, दुनिया की चकित कर देने वाली और विचलित कर देने वाली स्थितियों का वर्णन है। जैसे एक निबंध है – राष्ट्रहित। लेखक का यह कथन सही है कि किसी भी राष्ट्र का मतलब सिर्फ देश की सीमाओं से नहीं होता, बल्कि उस देश की सीमा में रहने वाले प्राणियों, वनस्पतियों, नदी, समुद्र और पहाड़ों से भी होता है। यदि हम सबकी रक्षा के प्रति चिंतित हैं, हमारे अंदर देश के प्रति लगाव है। यदि हम किसी के प्रति चिंतित नहीं हैं, इसका मतलब कि हमें सिर्फ अपनी चिंता है। लेखक झूठी शान–शौकत दिखाने वालों पर भी चोट करता है। वास्तव में झूठी शान शौकत हम लोगों को खाए जा रही है और हम चेतते नही हैं। लेखक ने यह बहुत सही लिखा है कि मंत्री, अधिकारी और उद्योगपति ही देश का विकास नहीं कर सकते। लेकिन इतना तो जरूर है कि देश के विकास या विनाश में इनकी बहुत बड़ी भूमिका है। किसान मजदूर समेत देश का हर नागरिक देश के विकास में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। हर व्यक्ति प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से एक दूसरे से जुड़ा हुआ है। लेखक देश के लोगों से आत्मचिंतन और आत्मविश्लेषण का आग्रह करता है।

लेखक के इस विचार से सहमत नहीं हुआ जा सकता है कि राष्ट्रविरोधी तत्वों का समूल विनाश न्यायोचित है। सबसे बड़ी समस्या तो यह है कि राष्ट्रविरोधी तत्वों की पहचान कैसे की जाय? क्या बड़ी तनख्वाह पाने वाले अधिकारी अपने मातहतों पर जुल्म ढाते हैं, वे राष्ट्रविरोधी नहीं हैं? क्या काली कमाई और अपराधियों के बल पर चुनाव जीतने वाले और सरकार चलाने वाले लोक देश के हितैषी कहे जा सकते हैं? हमारा दुर्भाग्य यही है कि जिनको तिरस्कार मिलना चाहिए, उनको हम सम्मान देते हैं, और जिनको सम्मान मिलना चाहिए, उनको हम तिरस्कृत करते हैं। सब कुछ स्वार्थ के चलते होता है। लेखक की इस बात से भी सहमत नहीं हुआ जा सकता कि यदि हर व्यक्ति अपना सुधार कर ले तो देश सुधर

जाय। मनुष्य सामाजिक प्राणी है। उसका बहुत कुछ चरित्र समाज से प्रभावित होता है। यदि मनुष्य की प्रगति में बाधक सामाजिक रूढ़ियों और कुप्रथाओं को लोग खारिज कर दें तो बहुत कुछ स्थिति में बदलाव हो सकता है।

'आनन्द की खोज' निंबंध में लेखक की स्थापना है कि दुनिया का हर व्यक्ति आनन्द की तलाश में रहता है, जबकि वास्तविकता यह है कि दुनिया के करोड़ों लोग अपने वर्तमान के दुःख को दूर करने के लिए परेशान रहते हैं। दुःख की भी कई कोटियाँ हैं। किसी को अपना पेट भरने की चिंता है तो किसी को कपड़े की चिंता है तो किसी को रहने के लिए थोड़ी सी जगह की चिंता है। बहुत से विचारक तर्क देते हैं कि पेट भरना ही सब कुछ नहीं है, लेकिन इतना जरूर है कि बिना पेट भरे न तो दिमाग में अच्छे विचार आ सकते हैं और न ही किसी दूसरे के विचार उठ सकते हैं। इसलिए रोटी, कपड़ा और मकान जो मनुष्य की मूलभूत समस्या है, उसके समाधान के लिए लेखक समुदाय को चिंता करनी चाहिए। इन समस्याओं का समाधान पा लेने के बाद ही आनन्द, आध्यात्मिक आनन्द की बात की जानी चाहिए।

इस संग्रह का बहुत ही महत्वपूर्ण निबंध है, 'पर्यावरण'। आज समूचा संसार पर्यावरण को स्वच्छ रखने के लिए चिंतित है। हमारी समस्या है कि जिनके हाथ में सत्ता है, पर्यावरण को क्षति पहुंचाने के वही सबसे बड़े जिम्मेदार हैं। बड़ी–बड़ी कंपनियों के लाभ के लिए नये–नये उद्योग धन्धों को वे मंजूरी देते हैं और पर्यावरण की सर्वाधिक चिंता भी वही करते हैं। ऐसे सत्ताधारी वर्ग के पाखंड को जनता समझ नहीं पाती। लेखक ने इस निबंध में वनों की सुरक्षा को लेकर चिंता प्रकट की है। हमारे देश में जिस रफ्तार से पेड़ों की कटाई हो रही है, उस रफ्तार से पेड़ लगाए नहीं जा रहे हैं। इसके लिए आम जनता में जागरूकता पैदा करना जरूरी है। लेखक के इस निबंध से निश्चित रूप से अधिक से अधिक पेड़ लगाने और अपनी आवश्यकताओं को सीमित रखने के लिए हमें प्रेरणा मिलती है। इसी निबंध में लेखक ने कन्याभ्रूण हत्या पर भी चिंता प्रकट की है। हमें सिखाया जाता है कि बिना पुत्र के आदमी का उद्धार नहीं होता। हालांकि धीरे–धीरे लोगों में चेतना आ रही है कि बेटे और बेटी एक समान होते हैं, लेकिन यह उद्धार वाली ग्रंथि जब तक दूर न होगी और बेटी के विवाह के लिए दहेज रूपी दानव को जब तक खत्म नहीं किया जायेगा तब तक बेटी–बेटे का फर्क समाज में और परिवार में बना रहेगा।

संग्रह में एक मुग्ध कर देने वाला निबंध है – 'फागुन की धूप!' इस निबंध में लेखक की वर्णन शैली देखते बनती है, जैसे – ''मंद वायु के झोंकों से झुमते द्रुमों

की फुनगी को जब फागुन की धूप छूती है, तो लगता मानों जननी के के स्वर्णिम कर अपने शिशु के कुंतल को संवार रहे हैं। माँ का स्पर्श पाकर जैसे शिशु प्रमुदित होता है, उसी तरह तरु भी फागुन की धूप के आलिंगन में बद्ध होकर मचल उठते हैं।'' यहाँ फागुनी हवा, धूप और वृक्ष के लिए माँ और शिशु का जो उदाहरण दिया गया है, वह प्रभावकारी है। इसी निबंध में लेखक कहता है कि ''फागुन की धूप धरती को सुहागिन बना देती है।''

'प्रेम' निबंध में प्रेम की विस्तृत व्याख्या की गई है। कबीर को उद्‌धृत करते हुए लेखक ने स्वीकार किया है कि 'हर प्राणी सर्वप्रथम अपनी देह से प्रेम करता है।' लेकिन प्रेम एक ऐसा मानवीय भाव है जो हमें जीवन में बड़ा से बड़ा उत्सर्ग करने की प्रेरणा देता है। देश के लिए तथा अपने सिद्धान्तों पर मर मिटने वाले लोगों के अनेक उदाहरण हमारे सामने भरे पड़े हैं। हिन्दी के **आचार्य रामचन्द्र शुक्ल** का भी एक निबंध है **'लोभ और प्रीति'**। शुक्ल जी का मानना है कि किसी व्यक्ति विशेष के रूप को देखकर हम पहले आकर्षित होते है। धीरे–धीरे उसे प्राप्त करने के लिए प्रयत्न करते हैं और उस पर एकाधिकार चाहते हैं। लेकिन इस प्रकार का प्रेम हमें कर्म के विस्तृत क्षेत्र से अलग कर हमें सीमित करता है। इसलिए प्रेम की तुलना में 'करूणा' और श्रद्धा' को महत्व दिया गया है, क्योंकि ये भाव मनुष्य को कर्म के विस्तृत क्षेत्र से परिचित कराते हैं। संकुल जी ने अपने 'प्रेम' नामक निबंध में देह के आकर्षण से विरत रहने की सलाह दी है, क्योंकि यह देह का आकर्षण हमारे मानवीय मूल्यों को ध्वस्त कर देता है। यह देह का आकर्षण हमारे अन्दर वासना को जन्म देता है। हालाँकि यह वासना ही नए के सृजन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है, इसलिए पूर्ण रूप से इसका त्याग नहीं किया जा सकता, करना भी नहीं चाहिए। संकुल जी का यह मत स्वीकार्य है कि अतिशय वासना पर मनुष्य अपने विवेक से विजय प्राप्त कर सकता है। लेखक लोक प्रचलित इस अवधारणा का खंडन करता है कि 'प्रेम अंधा होता है।' प्रेम अंधा नहीं होता, बल्कि त्याग के द्वारा विकसित होता है।

इस संग्रह के 'वर्षा सुन्दरी' निबंध में लेखक ने प्रचंड गर्मी के वर्णन के साथ वर्षा की आवश्यकता का एहसास कराया है। यहाँ वर्षा का वर्णन बहुत ही मनोहारी है। लेखक लिखता है, ''आषाढ़ का आगमन होते ही प्राची की तरफ से घनों के काफिले ने आगे बढ़ते हुए सूर्य की किरणों को रोक दिया। धरती आत्म विभोर हो गयी।'' लेकिन शब्द प्रयोग की दृष्टि से अगर देखें तो लेखक संस्कृत के तत्सम शब्दों तथा जटिल शब्दों के प्रयोग से अपने को बचाता हुआ नहीं दिखता। उपर्युक्त उद्धरण में 'घनों के काफिलें' की जगह यदि 'बादलों के काफिलें' का

प्रयोग किया गया होता तो बात को समझने में आसानी होती।

संग्रह में कुछ ऐसे भी निबंध हैं, जो हमारे समाज में बढ़ रही दिखावटी प्रवृत्ति की ओर संकेत करते हैं। 'प्रीतिभोज', कागज के फूल' ऐसे ही निबंध हैं। लेखक की चिंता यह है कि कागज के फूलों ने लोगों के दिल–दिमाग को इतना प्रभावित किया है कि समाज में वास्तविक फूलों की परख करने वाला दिखाई नहीं दे रहा है। यह लेखक की वाजिब चिंता है। इस संग्रह में 'सौंदर्य, कुटिया, आत्मविश्वास, स्वाभिमान, शिष्टाचार जैसे कई निबंध हैं, जो हमारे मानव जीवन की भिन्न–भिन्न परिस्थितियों का विश्लेषण करते हैं।

पुरुषोत्तम मिश्र 'संकुल' के पास विषय और उससे संबंधित विचारों का विशाल भंडार है। उन विचारों को प्रभावशाली ढंग से व्यक्त करने के लिए उनके पास समृद्ध शब्द संपदा है। यदि विचारों को विश्रृंखलित होने से अपने को बचाया जाय तो रचना में जिस कसावर की अपेक्षा की जाती है, वह संभव हो सकती है। संस्कृत के तत्सम शब्दों की अधिकता भी विचारों को पाठक तक संप्रेषित करने में बाधक हुई है। हमें ध्यान में रखना चाहिए कि साधारण लोगों तक यदि अपनी बात पहुंचानी है तो उनकी भाषा में, उनके शब्दों में हमें लिखना होगा। अन्यथा हमारी रचना 'सवान्तः सुखाय' बनकर ही रह जाएगी।

■ ■ ■

बलराज पांडेय

दिनांक : 07.09.2015

(डॉ0 बलराज पांडेय)

उत्तर प्रदेश माध्यमिक शिक्षा अभियान

राज्य परियोजना कार्यालय,

18 पार्क रोड लखनऊ–226001 दूरभाष 0522–2239115 फैक्स 0522–2239940
website:www.uprmsa.in E-mail:rmsaup.spc@gmail.com



शान्त्वना तिवारी

संयुक्त निदेशक(निर्माण)

दिनांक–07 अक्टूबर 2015

मुझे यह जानकर अति प्रसन्नता हो रही है कि श्री पुरूषोत्तम मिश्र 'संकुल' द्वारा अपने विचार/भावनाओं को 19 निबन्धोंकी माला में पिरोकर ''आनन्द की खोज'' नामक पुस्तक के माध्यम से जन–मानस तक पहुँचाने का सार्थक प्रयास किया है।

श्री मिश्र द्वारा अपनी इस पुस्तक में लघु निबन्धों के माध्यम से संसार की विचित्रता से निकल कर यथार्थ का चिंतन करते हुए राष्ट्रहित के दृष्टिगतआनन्द की खोज में अज्ञानता का पर्दा हटा कर संसार का वास्तविक स्वरूप दिखाते हुए जीत व वन को मिलाकर जीवन शब्द के निर्माण के साथ जीवन के सन्तुलन में पर्यावरण की परिभाषा को व्यक्त करने का प्रयास किया है। वहीं स्मृतियों की अनुभूतियों मानस पटल में सुरक्षित रखते हुए फागुन की धूप में मंद वायु के झोकों के आत्मविश्वासके मूल्यांकन करने की क्षमता रखी है। जहाँ मन क्षुधापूर्ति के उपरान्त आश्रय मिलने के बादप्रेम पाने के लिए वर्षा सुन्दरी के साथ प्रीतिभोज करने का आतुर हो उठता है परन्तु कागज के फूल के सौन्दर्य में उलझकर हमसफर से प्रेम पाने की लालसा में स्वाभिमान सामने आ जाता है, तो शिष्टाचार के दर्पण में अपने सौन्दर्य को देखते हुए वास्तविक धर्म में मुक्ति का मंत्र का मंत्रजाप देकर एक सराहनीय प्रयास किया गया है।

अन्त में मैं इस पुस्तक के सफल प्रकाशन की कामना करते हुए आशा करती हूँ कि लेखक के विचार जन–मानस में अपनी पहचान बनाने में सफल हो सके।

(शान्त्वना तिवारी)

मोबाइल नं0 : 9455004790
9968399398

उदय प्रताप सिंह
कार्यकारी अध्यक्ष

उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान
राजर्षि पुरुषोत्तम दास टण्डन, हिन्दी भवन
6–महात्मा गांधी मार्ग, लखनऊ–226001
दूरभाष : 0522.2616464 (का.)



कीरति भनिति भूति भलि सोई।
सुरसरि सम सब कहँ हित होई।।

दिनांक : 10 नवम्बर, 2015

शुभाकांक्षा

श्री पुरुषोत्तम मिश्र ''संकुल'' द्वारा सृजित ''आनन्द की खोज'' शीर्षक पुस्तक के प्रकाशन पर हार्दिक शुभकामनाएं। 'संकुल' जी एक विचारवान रचनाकार हैं। हिन्दी साहित्य की प्रतिष्ठित विधा निबन्ध के माध्यम से ज्ञान, अनुभव को पाठकों के मध्य बांटने का सफल प्रयास इस पुस्तक द्वारा किया गया है।

''आनन्द की खोज'' कृति में संग्रहीत निबन्ध यर्थाथ, पर्दा, राष्ट्रहित पर्यावरण, फागुन की धूप, आत्मविश्वास, प्रेम, वर्षा सुन्दरी, प्रीतिभोज, कागज के फूल, हमसफर, स्वाभिमान, शिष्टाचार, सौन्दर्य, वास्तविक धर्म, मुक्ति का मंत्र आदि विचार और भाषा की दृष्टि से सकारात्मक दृष्टिकोण को रेखांकित करते है। आशा ही नहीं पूर्ण विश्वास है कि 'संकुल' जी की यह नवीन प्रकाशित कृति ''आनन्द की खोज'' साहित्य जगत के लिए महत्वपूर्ण होगी और पुरुषोत्तम मिश्र ''संकुल'' को यथेष्ट यश कीर्ति प्रदान करने में सहायक होगी।

(उदय प्रताप सिंह)

स्थायी आवास : 302, राजेन्द्र मार्ग, शिकोहाबाद, उ0प्र0

अनुक्रम

प्रेम

महाकवि कबीर का अभिमत था कि प्रेम को पढ़े बिना कोई पंडित नहीं हो सकता। किसी शब्द का उच्चारण कर लेने से यह नहीं कहा जा सकता कि हम ने उस शब्द को पढ़ लिया। पढ़ने का अभिप्राय यहाँ शब्द नहीं अर्थ है, परन्तु मात्र किसी शब्द के अर्थ को समझ लेने के उपरान्त भी हमें तब तक अभीष्ट की प्राप्त नहीं हो सकती जब तक हम उसका अनुगमन नहीं करते। प्रेम का अर्थ स्पष्ट कर पाना यद्यपि कठिन है पर किसी हद तक प्रेम भाव तथा रागात्मक वृत्तियों का संकेत है इसे परिष्कृत करके मानव जीवन को वृहद कर सकता है। प्यार पाने के लिये किया जाने वाला प्रेम चाहे लौकिक ही क्यों न हो, मेरे विचार से प्रेम नहीं अपितु व्यापार होगा।

माँ के कुक्षि से जन्म लेने वाले शिशु के प्रति माँ का प्रेम स्वदेह सदृश होता है परन्तु शिशु का अस्तित्व पृथक हो जाता है इस पृथकता की अनुभूति शिशु रो कर करता है। शिशु का रोना उसके स्वास्थ्य का प्रमाण माना जाता है। परन्तु यहीं से शिशु अपने से प्रेम करना शुरू कर देता है। अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिये शिशु भिन्न–भिन्न प्रकार की चेष्टाएँ करने लगता है। माँ की देह ही शिशु के अमोद–प्रमोद का प्रथम सोपान होती है इसी के सहारे वह आगे बढ़ता है। दूसरी तरफ माँ के देह से यद्यपि शिशु का अस्तित्व पृथक हो जाता है परन्तु माँ उसे अपने अंदर समेटने के प्रयास में रत रहती है, इसी कारण शिशु की आवश्यकताएँ माँ की अपनी आवश्यकता बन जाती है। शिशु के प्रति माँ का प्रेम वात्सल्य युक्त होता है परन्तु शिशु का माँ से प्रेम अपनी सुरक्षा के लिये होता है। प्रकृति प्रदत्त शक्ति इस नाटक के संचालन में अहम भूमिका निभाती है।

हर प्राणी सर्वप्रथम अपने देह से ही प्रेम करता है इसके उपरान्त देह से बनाने वाले अन्य प्राणियों से भी वे प्रेम करना शुरू कर देते है। एक वृक्ष से निकलने वाली अनेक शाखाओं से वृक्ष प्रेम करता है। इसलिये जड़ों से लिया हुआ भोजन हर पत्ते को पहुँचा देता है। इसी प्रकार मानव भी अपनी संतान का भरण–पोषण करता है। परन्तु जैसे वृक्ष से पृथक् होकर बीज अंकुरित होकर अपना अलग आस्तित्व बना लेता है उसी प्रकार शिशु भी अपना अस्तित्व स्थापित कर लेता है। इस कारण संसार में प्रेम की धारा प्रतिपल दिशा बदलती रहती है।

प्रेम धारा है जिस प्रकार धरती पर अनेक नदियाँ बहती है उसी प्रकार मानव हृदय में भी अनेक धाराएँ बहती है। किसी के हृदय में यह धारा गंगा के समान

पवित्र निर्मल एवं धवल बहती है तो किसी के हृदय में सिकुड़ते–सिकुड़ते सागर तक पहुँचने से पहले ही विलुप्त हो जाती है। हिम से आच्छादित गिरि शिखर तापमान के बढ़ने से पिघलने लगते है इसी प्रकार उम्र शिशु प्रेम को भी पल्लवित करती है। भूतल की गहराई को माध्यम बनाकर जिस प्रकार जल की धारा आगे बढ़ती है उसी प्रकार शिशु भी प्रेम प्रकट करने लगता है। आवश्यकताओं की पूर्ति जिन माध्यमों के द्वारा होती है सम्भवतः शिशु उसकी ओर आकर्षित हो जाता है। बे जुबान प्राणी भी अपने हित–अनहित को समझने में प्रवीण होते है कसाई के पास आते ही बकरी अपनी मौत को भाँप लेती है। पशु–पक्षी भी प्रेम की भाषा समझने में निपुण होते है।

प्रेम शब्दों से परे अन्तःस्थल की गहराई में अदृश्य बीज के रूप में छुपा होता है कई बार अंकुरित होकर झुलस जाता है परन्तु यह इतना शक्तिशाली होता है कि अन्नत बार उगने की क्षमता रखता है इसलिये जब–जब अनुकूल वातावरण बनता है तब–तब यह अंकुरित होता रहता है। शिशु जब किशोर अवस्था में पहुँचता है तब उसका प्रेम बहु आयामी हो जाता है। मानव का प्रेम विभिन्न रिश्तों में विभक्त होता है और इसका आधार स्वार्थ होता है। प्रेम के उत्थान एवं पतन में देह आकर्षण का महत्त्वपूर्ण स्थान है।

देह आकर्षण इतना सशक्त होता है कि यह मानव मूल्यों को भी ध्वस्त कर देता है। महाकवि कबीर ने स्यात् यही देखकर प्रेम को पढ़ने की बात लिखी होगी। चिंतकों ने देह आकर्षण के पीछे वासना को देखा यद्यपि यह प्रकृति प्रदत्त है एवं इसका लक्ष्य नव्यता को बनाये रखने के लिये विषम लैगीय प्राणियों को आकर्षित कर रति द्वारा नये जीवों का सृजन है। इस माध्यम से प्रकृति नये जीवों का सृजन कर पुराने प्राणियों को शैनेः–शैनेः जर्जर करती हुई समाप्त कर देती है। स्यात् देह आकर्षण का यही रहस्य है।

मानव विवेकशील प्राणी है इस विषय पर वह सदा चिंतन करता रहा है यद्यपि इसका कोई सर्वमान्य मत आज तक विकसित नहीं हो पाया परन्तु संसार के अधिकांश विद्वानों ने वासना पूर्ति का सुसंस्कृत माध्यम विवाह को माना है। पशु–पक्षी भी अपनी सुरक्षा के लिये संगठित होकर जीवन यापन करते है। मानव सर्वप्रथम भय वंश संगठित हुआ फिर धीरे–धीरे परिष्कृत सोच ने समाज का गठन कर दिया। समाज बना तो नियम भी बन गये। धरती पर अनेकों समाज है एवं उनके रीति–रिवाज पृथक्–पृथक है इसलिये यह कह पाना कि किसका सही है कठिन है।

मानव जिस समाज में जन्म लेता है उसके संस्कारों से ही उसका निर्माण

होता है। हर धर्म एवं जाति के लोग शिशु मस्तिष्क में अपने विचार ही भरते रहते हैं। अपने धर्म एवं जाति को ही अपने जीवन का आधार बनाकर मानव अपनी पहचान स्थापित करने का प्रयास करता है, वह यही समझता है कि हमारे सिद्धान्त ही सर्वश्रेष्ठ है ईश्वर द्वारा निर्मित है। इस संसार का मूल कारण एक है लोग यह सामान्य सी बात को भी समझना नहीं चाहते। इस सत्य से परे लोग धर्म एवं जाति के मोह से मुक्त होना नहीं चाहते इसी मोह ने वासना पूर्ति का मूल्यांकन करने में भी नारी एवं पुरुष का भेद बरकरार रखा है।

सौन्दर्य अंतस् की गहराई छूने का सामर्थ्य रखता है परन्तु हमारा हृदय जब तक इस अनुभूति से आह्लादित नहीं होता जब तक सौन्दर्य दामिनी सदृश चक्षुओं को चुँधियाता रहेगा। मानता हूँ सौन्दर्य इन्द्रिय अनुभूति है परन्तु कहीं न कहीं इसका तारतम्य हृदय से जुड़ा अवश्य है इसीलिये क्षणिक ही सही पर सौन्दर्य आनन्द प्रदान करता है। सौन्दर्य कहीं भी हो उसका दर्शन अभिमत को परिष्कृत करने में सहायक होता है। प्यासे को जल की तरह जीवन में नव स्फूर्ति भरने में सौन्दर्य सहायक है परन्तु जब हम सौन्दर्य को आत्मसात् करने के बजाय उसके प्रति लोभी बन जाते है तब सौन्दर्य पाने की कामना जागृत हो जाती है। इस कामना की पूर्ति हेतु भी प्रेम शब्द का प्रयोग किया जाता है।

विषम लैंगीय आकर्षण के वशीभूत जब एक युवा किसी रमणी पर आसक्त होता है तो प्रथम सोपान युवती का लावण्य होता है। यह ठीक है कि सौन्दर्य के प्रति हर व्यक्ति का अपना पृथक् दृष्टिकोण होता है परन्तु नारी सौन्दर्य से ऐसा कोई व्यक्ति नहीं जो प्रभावित न हुआ हो। नारी सौन्दर्य जब हृदय को छू लेता है तो व्यक्ति महान हो जाता है संसार के महान कवि कलाकार एवं दार्शनिक भी नारी सौन्दर्य से लाभान्वित हुये है। इसलिये कि वे इसके प्रवाह में बहे नहीं अपितु एक साधक की तरह इस सौन्दर्य को कृति बनाकर साधना की है। सामान्य मानव को यह सोच पाना भी सम्भव नहीं है। जिसे देखकर मन में ऐसी छवि बन जाय कि उससे सुन्दर और कुछ हो ही नहीं सकता उसका दीवाना हो जाना प्रेम की उत्कृष्ट पराकाष्ठा है।

सागर की गहराई सतह देख कर बता पाना जिस तरह कठिन है उसी तरह किसी व्यक्ति के सौन्दर्य को देखकर उसके व्यक्तित्व की थाह लगना भी दुरह है। सतह की स्वच्छता जिस तरह आकर्षण का कारण है उसी तरह रमणी का लावण्य सम्मोहन का हेतु है। हृदय की पवित्रता के वशीभूत सौन्दर्य में स्वच्छता का दर्शन होता है परन्तु यदि सोच मलिन हो तो नेत्र रहते भी मानव अंधा हो जाता है परन्तु प्रेम कभी अंधा नहीं होता। प्रेम के उत्पत्ति का कारण सतह ही है परन्तु जिस तरह

बीज का अंकुरण चाहे जिस कारण हो परन्तु अंकुर को बढ़ने के लिये वायु जल एवं प्रकाश की आवश्यकता होती है इसी तरह त्याग एवं उत्कर्ष के बिना प्रेम भी विकसित नहीं हो सकता।

मानव के समस्त कार्य वासना एवं लोभ के वशीभूत होते है तो प्रेम को स्वार्थ से परे नहीं कहा जा सकता। मानव का स्वार्थ वस्तुओं के मूल्य पर टिका होता है। मूल्यवान वस्तुओं से स्वाभाविक ढंग से मानव का आकषर्ण होता है। सौ रुपये का मूल्य समझने वाले बालक के लिये एक रुपये का सिक्का नगण्य हो जाता है। मानव अपने स्वार्थ पूर्ति हेतु प्रेम शब्द को परिभाषित करता आया है।

नारी पुरुष के आकर्षण का केन्द्र–बिन्दु वासना है परन्तु इस केन्द्र के माध्यम से जिस परीधि का निर्माण होता है उसकी त्रिज्या अगम्य है, इसलिये प्रेम को जीवन का सार कहा जाता है। प्रेम जीवन का आरम्भ ही नहीं अंत भी है। प्रेम के प्रारम्भिक अवस्था में ही प्रेमी का अस्तित्व प्रेमिका के अस्तित्व में विलय हो जाता है इस स्थिति में प्रेमिका की सर्दी–गर्मी की अनुभूति स्वयं में होने लगती है। प्रेमिका की भी यही स्थिति होगी यदि उसने सचमुच प्यार किया है। दो देहों की अनुभूति पृथक् न होकर एक में होने लगती है। प्रेम की यह स्थिति निःसंदेह चिंतनीय हो जाती है जब हम प्रेमिका के अवगुणों को भी नजर अंदाज करने लगते है परन्तु यह ध्रुव सत्य है कि जब हमें किसी से प्रेम हो जाता है तो उसको सुखी देखना ही जीवन का लक्ष्य बन जाता है। इसका अनुभव वही कर सकता है जिसने किसी से वास्तविक प्रेम किया है।

प्रेम में कुछ पाना नहीं अपितु स्वयं को खो देना है जो स्वयं को खो देता है उसके पास कोई कामना हो ही नहीं सकती। उसका अपना सुख–दुःख नहीं होता यहाँ तक वह मान एवं अपमान से भी मुक्त हो जाता है। प्रेम हृदयानुभूति है। हृदय में जब यह चक्रवात घूमने लगता है तो नेत्रों से वर्षा होने लगती है। प्रेमिका का कपटपूर्ण व्यवहार भी हृदय को भुलावा नहीं दे पाता ऐसे स्थिति में प्रेमी को यही लगता है उसकी प्रेमिका स्वयं अपना पतन कर रही है, इसलिये वह उसे भूलने की जगह उसे समझने का प्रयास करता है। हर प्रयास सफल होगा इसकी कोई गारंटी नहीं है परन्तु प्रेमी–प्रेमिका से कभी घृणा नहीं कर सकता, यदि ऐसा नहीं होता है तो मेरे विचार से प्रेम, प्रेम नहीं अपितु व्यापार होगा। निष्कपट प्रेम हमारे अंदर प्रकाश उत्पन्न कर देता है यही कारण हम स्वयं से अधिक प्रेम को समझने लगते है। प्रेम गूढ़ है इसके रहस्य को शब्दों से व्यक्त नहीं किया जा सकता स्यात् इसीलिये महाकवि कबीर ने प्रेम शब्द को पढ़ने की बात कही। प्रेम शब्द का अर्थ अनंत है इसलिये यह शब्द ही ग्रन्थ है जो प्राणी इस ग्रन्थ के पन्नों को पल्टना शुरू

करेगें उनका कायाकल्प होना निश्चित है धीरे–धीरे उसे संसार का वास्तविक स्वरूप दिखायी देने लगता है। संसार में जो इस प्रकार के प्रेमी थे और आगे होंगे 'संकुल' सबको वंदन एवं नमन करता है क्योंकि इस प्रकार के प्रेमियों को वास्तविक स्वार्थ का ज्ञान हो जाता है।

■ ■ ■

सौन्दर्य

सौन्दर्य चक्षुओं को क्षणिक विश्राम ही नहीं अपितु विचार को दिशा भी प्रदान करता है। सौन्दर्य का निवास स्थान कहाँ है यद्यपि यह कहना कठिन है परन्तु यह हमारे मनस्थल को प्रभावित अवश्य करता है। यह बात दीगर है कि यह प्रभाव हर व्यक्ति में एक जैसा नहीं होता इसलिये सौन्दर्य को लेकर जितनी दृष्टि उतनी बाते है। विश्व के चिंतकों में इस विषय पर मतभेद होने के उपरान्त भी दिशा एक ही है। जिस तरह अंशुमाली का प्रकाश गृह, उपग्रह से टकरा कर विलग अस्तित्व धारण कर लेता है, उसी तरह परम सौन्दर्य परमात्मा का प्रकाश भूतल पर जड़ चेतना में अपना सौन्दर्य प्रकटीकरण करता है, इसीलिये सौन्दर्य आकर्षण का केन्द्र बिन्दु एवं सृष्टि का मूल है।

मानव क्या जीव जगत में भी सौन्दर्य के प्रति आकर्षण है। दीपक के आकर्षण में पतंगे का बलिदान इसका ज्वलंत प्रमाण है। अक्षरी में नभ जब श्वेत श्याम अभ्रों से आच्छादित हो जाता है उस समय व्योम में विचरण करते पंक्ति बद्ध सोनबालक कितने प्रसन्नचित दिखते है। मयूर नृत्य के द्वारा आनन्द प्रकट करते है। प्रकृति का सौन्दर्य मूक है इसलिये मानव को यह नहीं समझना चाहिए कि उसके अतिरिक्त अन्य जीव इसका रसस्वादन नहीं करते। पुष्पों के पास भ्रमर क्यों गुनगुनाते है, तितलियाँ पुष्पों की तरफ खिंची हुई चली आती हैं। सायं होते ही पपीहा पी कहाँ–पी–कहाँ में कुछ–न–कुछ जरूर कहता है। वसन्त का सौन्दर्य कोयल के मनोभाव को जागृत कर देता है तभी तो वह कू–कू करने लगती है। पक्षी नीड़ के निर्माण में व्यस्त हो जाते है। प्रकृति के सौन्दर्य का आनन्द प्राप्त करने हेतु अनेक पक्षी प्रवासी हो जाते है। अपने देश से विदेश में चले जाते है। सौन्दर्य सिर्फ आनन्दानुभूति ही नहीं कराता अपितु हमारे विवेक को जागृत करने का भी कार्य करता है। पक्षियों के पलायन के पीछे यही रहस्य है।

प्रकृति का सौन्दर्य इतना मनोरम है कि इसकी अनिंद्यता का वर्णन नहीं किया जा सकता। अक्षरी निशा का स्वच्छ वितान अगणित नभ सरिताओं में टिमटिमाते असंख्य तारों के सौन्दर्य के गर्त में डूबा नहीं जा सकता। मयंक का सौन्दर्य वर्णनीय है क्योंकि वह समीप है। सौन्दर्य को लेकर हर व्यक्ति का पृथक्–पृथक् दृष्टिकोण होता है। हम इस विषय पर भी उतना ही देख सकते है जितनी हमारी दृष्टि है। अंतरिक्ष विज्ञान का अध्ययन करने वाले यंत्रों का प्रयोग कर अपनी दृष्टि को बढ़ाते है तभी वे खगोलीय पिन्डों को देख पाते हैं। सौन्दर्य चक्षुओं का विषय एवं इन्द्रिय

अनुभूति है परन्तु कही–न–कहीं इसका तारतम्य हृदय से जुड़ा जरूर है यही कारण है कि सौन्दर्य हर प्राणी को अपने दृष्टिकोण के अनुसार दृष्टिगोचर होता है। सौन्दर्य हर प्राणी को अपनी तरफ आकृष्ट करता है, परन्तु प्रभाव पृथक्–पृथक् होता है।

विभात के सौन्दर्य की मनोरम छटा हृदयग्राही होती है। मंद बहती पवन अस्वस्थ व्यक्ति के तन में स्फूर्ति भर देती है। प्राची का पथिक जब अपनी यात्रा आरम्भ करने की तैयारी शुरू करता है वैसे ही शर्वरी का तिमिर अपना असबाब बाँधकर नौ दो ग्यारह हो जाता है। उषा का आगमन हो जाता है, इस समय की प्रकृतिक अनिंद्यता हृदय तंत्री में झंकार भर देती है। खग कुल अपनी रव में ऊषा सुन्दरी का अभिनन्दन करने लगता है। प्रसून अपनी स्मित बिखेर देते है। पटल खिल जाते है इनके सौन्दर्य पर मुग्ध भृंग इन्हें रिझाने के लिये इनके पास चक्कर काटने लगते है। बाल भास्कर प्राची से यह दृश्य देख मोहित हो जाते है। धरा के इस सौन्दर्य का रसपान करने के लिये आतुर हो अपनी रशमियों को अहिस्ता–अहिस्ता इस सौन्दर्य के स्पर्श हेतु भेज देते है। रवि की प्रथम किरण जब भूतल का स्पर्श करती है, तो इसकी छटा मनोग्राही हो जाती।

प्रभात का सौन्दर्य धरा की प्रकृतिक विविधता के अनुसार पृथक्–पृथक् दृष्टिगोचर होता है। हिम से आच्छादित गिरि शिखर पर यह सौन्दर्य अत्याधिक मोहक हो जाता है वहीं सागर तट पर प्रभात का सौन्दर्य वस्त्र भूषणों से अलंकृत अलौकिक हो जाता है। भूतल की विविधता के अनुसार प्रभात की छटा आँख मिचौली करती अनिर्णय की स्थिति उत्पन्न कर देती है। असल में प्रकृति का सौन्दर्य विराट है जो इसकी अनिंद्यता में खो जाता है वह कलाकार हो जाता है। विराट का दर्शन चक्षुओं द्वारा संभव नहीं अस्तु सौन्दर्य की अनुभूति हृदय द्वारा ही होती है।

सौन्दर्य का मूल हृदय में विद्यमान होता है संगीत का स्वर श्रवण द्वारा जब हमारे अंतःस्थल में प्रवेश करता है तब हम आत्मविभोर हो जाते है। इस स्थिति में नेत्र स्वमेय बंद हो जाते है। श्रवण द्वारा जो आनन्द की अनुभूति होती है वह चक्षुओं द्वारा प्राप्त सौन्दर्यानुभूति से उत्कृष्ट होती है। इसका प्रभाव नीर राशि में कंकड़ की तरह सिर्फ सतह पर ही हलचल नहीं अपितु गहराई में भी उतराने का प्रयास करता है। प्रकृति प्रदत्त सौन्दर्य की नकल कला है यद्यपि कलाकृति प्रकृतिक सौन्दर्य से भी अनिंद्य होती है। परन्तु हमें यह स्वीकार करना ही पड़ेगा कि बिना प्रकृतिक सौन्दर्य में डूबे कला का सृजन नहीं हो सकता।

प्रकृति का सौन्दर्य विराट है कलाकार अपनी कला द्वारा असीमित को व्यक्त

करता है। असीम का सरलीकरण कर आम जन तक पहुँचाना कलाकार का धर्म होता है। कला को समझे बिना प्रकृतिक सौन्दर्य में डूबा नहीं जा सकता। सौन्दर्य हर प्राणी को अपनी तरफ आकृष्ट करता है परन्तु इसका सोत्र कहा है उत्तर जटिल है। मार्ग यदि अवरुध हो जाये तो लोग दूसरे रास्ते का तलाश करने लगते है संसार में बिरले ही पुरुष होते है जो अपने पथ से विचलित नहीं होते। अपितु अपने मार्ग के अवरोधन को हटा देते है। सौन्दर्य ने कला का निर्माण किया फिर सौन्दर्य ही कला में समा गया।

जिसे कला का ज्ञान न हो क्या वह सौन्दर्य का रसस्वादन नहीं कर सकता ऐसा नहीं है। सौन्दर्य समस्त चेतन जगत को अपनी तरफ आकर्षित करता है। पौधे संगीत का आनन्द लेते है विज्ञान इस तथ्य की पुष्टि करता है भृंग पुष्पों के सौन्दर्य में खिंचे चक्कर लगाते दृष्टिगोचर होते है, तो मधुमक्खियाँ भी सौन्दर्य की प्यास मिटाने हेतु सुमनों से बाते करती रहती है। सौन्दर्य आकर्षण का केन्द्र बिन्दु है। वस्तु या व्यक्ति का सौन्दर्य मानव हृदय में स्पंदन करता है इसी के वशीभूत लोग सुन्दर वस्तुओं का संग्रह करते है। उपयोगिता सुन्दरता से अधिक महत्त्वपूर्ण होती है परन्तु हम देख रहे है कि सुन्दरता के आकर्षण में गुणवत्ता की पहचान बिरले ही लोग करते है, जहाँ दोनों का संगम होता है वहाँ सौन्दर्य अद्वितीय हो जाता है। प्रकृति के पास सौन्दर्य का विपुल भण्डार है परन्तु, जो व्यक्ति कला पारखी नहीं वे यदि इसका दर्शन करना चाहे तो उन्हें नारी सौन्दर्य का अवलोकन करना चाहिए। संसार में जो महान पुरुष हुये उनकी महानता में नारी सौन्दर्य का कहीं–न–कहीं योगदान जरूर रहा होगा।

नारी सौन्दर्य से संसार में महान विचारक एवं चिंतक भी प्रभावित हुये है। अनेक कलाकारों ने अपनी कलाकृति में नारी सौन्दर्य का निरूपण किया है। मूर्ति कला, चित्रकला, एवं काव्य कला में नारी सौन्दर्य को लेकर गहन चिंतन हुआ है। नारी सौन्दर्य कलाकार को कला सृजन की प्रेरणा प्रदान करती है। नारी प्रकृति की विलक्षण कृति है। सत्य, निष्ठा एवं ईमानदारी का जिस प्रकार संसार में यदा–कदा ही दर्शन होता है, उसी तरह संसार की कुरूपता में सौन्दर्य भी यत्र–तत्र ही दृष्टिगोचर होता है। जब कोई अद्वितीय रमणी किसी कलाकार की दृष्टि में आती है तो वह भाव–विभोर हो जाता है। ऐसी स्थिति में वह समस्त प्रकृतिक सौन्दर्य उसमें देखने लगता है। कवियों ने नारी अवयवों की उपमा हेतु भूतल क्या मंयक नक्षत्र एवं ग्रहों को भी समाहित कर दिया है।

सौन्दर्य का आकर्षण कामना को जन्म दे देता है परिणाम स्वरूप हम उसे पाने को लालयित हो जाते है, इस स्थिति में मस्तिष्क में खिचाव शुरू हो जाता है।

अधजल गगरी छलकत जाय, की लौकोक्ति यहाँ चरित्रार्थ हो जाती है। लोगों की भाव भंगिमा देखकर एवं उनके संवाद सुनकर मानव की विवेकशीलता संदिग्ध दृष्टिगोचर होती है। वासना संसारिक कार्यो का मूल आधार है परन्तु जिस तरह भोजन पकाने हेतु अग्नि का प्रयोग होता है, उसी तरह वासना की पूर्ति सुसंस्कृत तरीके से होनी चाहिए। निःसंदेह सौन्दर्य में ऊर्जा है परन्तु हमें इसका प्रयोग करना आना चाहिए। सौन्दर्य का लुलुप पतंग दीपक से लिपट तो जाता है, परन्तु परिणाम में प्राण को खोना पड़ता है।

सौन्दर्य कहीं भी हो वह विचारों को उदात्त बनाने में सहायता प्रदान करता है परन्तु यह अनुभूति तब तक नहीं हो सकती जब तक हमारा हृदय स्वच्छ नहीं होगा। मालिन जल में प्रतिबिम्ब दिखायी नहीं दे सकता, जिन्हें अपना रूप देखना है उन्हें जल की मालिनता खत्म करना होगा। सौन्दर्य हृदय में निवास करता है जब हम बाहरी सौन्दर्य का दर्शन करते है, तो आत्मविभोर हो जाते है परन्तु हृदय की मलिनता के कारण सौन्दर्य दृग तक सीमित रह जाता है, एवं लोभ के वशीभूत हम उसे पाने के लिये व्याकुल हो जाते है। कामना कर्म को प्रेरणा देती है, इसलिये कामना कभी बुरी नहीं होती है, लोग इसकी पूर्ति का जो पथ चुनते है वह अक्सर सही नहीं होता।

तेल बत्ती एवं पावक का संसर्ग पाकर दीप प्रज्ज्वलित हो जाता है। इसी तरह रूप, रंग, एवं अवयवों के समानुपात सुकुमारता में सौन्दर्य दृष्टिगोचर होता है। सौन्दर्य गुण रहित प्रभाव छोड़ता है, जिसके प्रवाह के स्थिर रहा नहीं जा सकता। सौन्दर्य अनुभूति जीव जगत को प्रमुदित कर देती है तो मानव इससे अछूता कैसे रह सकता है। सौन्दर्य के दर्शन से जो अनुभूति होती है उसे इन्द्रिय अनुभूति मानना तर्क संगत प्रतीत नहीं होता। जब हमें सौन्दर्य का दर्शन होता है तो वह दृश्य लोचन से ओझल हो जाने के उपरान्त भी हमारी चेतना पर हावी रहता है। निद्रा में वह दृश्य स्वप्न के रूप में अवचेतन मन से अपना तारतम्य जोड़े रहता है। भाव–विह्वलता में कभी–कभी ऐसा भी लगता है जैसे वह दृश्य सामने प्रकट हो गया। हो सकता है यह मेरा भ्रम हो, परन्तु अनुभव यही कहता है कि सौन्दर्य चक्षुओं से पृथक होकर हृदय में कहीं–न–कहीं अपना स्थान बना लेता है और चिंतन को दिशा दे देता है।

मानव जीवन कामनाओं से युक्त सुख दुःख की दोलनगति में झूलता रहता है। सौन्दर्य आनन्द प्रदाता है। जब कोई सुन्दर रचना चाहे वह नारी ही क्यों न हो, हमारे चक्षुओं को अपने आकर्षण के फाँस में बाँध लेती है, तो उस समय दृग उसे सिर्फ–सिर्फ अपलक निहारना चाहते है। आनन्द की यह अनुभूति विचारों में

शिथिलता ला देती है। यदि हमारा विचार इस समय शून्य हो जाय, तो इस सौन्दर्य में विलक्षण अनुभूति होगी। इस अनुभूति के प्रवाह में जो बह जाता है उसके लिये सौन्दर्य इन्द्रिय अनुभूति से परे हो जाता है। इस अनुभूति को परमानन्द कहा जा सकता है। सौन्दर्य कामनाओं से रहित होकर अद्भुत हो जाता है। जो बात अनुभव में आती है, वह समझ से परे हो सकती है। अनुभव को यद्यपि ज्ञान नहीं माना जा सकता, फिर भी अनुभव ज्ञान प्राप्त का प्रथम सोपान तो है ही।

सौन्दर्य आनन्द प्रदाता है परन्तु इस आनन्द को सहेज लेना ज्ञान की कसौटी है। जो इस आनन्द को सहेजने की क्षमता रखता है वह व्यक्ति ही कलाकार हो सकता है। सौन्दर्य दर्शन से जो व्यक्ति निष्काम हुए, वे महात्मा योगी एवं दार्शनिक हो गये। सौन्दर्य के आनन्द को जिन्होंने अपने में समाहित कर वासना को दिशा दिया, उनके धरती पर आने का प्रयोजन सफल हो गया। सौन्दर्य एवं कला के सौन्दर्य में भेद नहीं होता, अपितु भौतिक सौन्दर्य प्रतिपल अपना रूप परिवर्तित करता सुख–दुःख के द्वन्द्वों में उलझा देता है जबकि कला का सौन्दर्य सदैव आनन्द ही प्रदान करता है। सौन्दर्य अपने आकर्षण द्वारा प्राणियों को उलझाकर सृष्टि का सृजन करता है। जगत की नव्यता का मूल कारण सौन्दर्य है। सौन्दर्य ऊर्जा से परिपूर्ण है चाहे वह कहीं भी हो, जिन्होंने इस शक्ति का संचय किया, उन्होंने जगत को सुन्दर बनाने का कार्य किया। सुन्दरता को देखकर आनन्द सागर में डूब जाओ निश्चित तुम्हारी कलुषता धुल जायेगी।

■ ■ ■

आत्मविश्वास

सफलता का मूल मंत्र आत्मविश्वास है। जिसके पास आत्मविश्वास नहीं वह लक्ष्य को प्राप्त नहीं कर सकता, इसलिये परम आवश्यक है कि हम अपने अन्दर आत्मविश्वास जागृत करें। आत्मविश्वास ही हमें दृढ़ संकल्प की शक्ति प्रदान करता है। दृढ़ संकल्प सफलता की कुँजी है। आत्मविश्वास को सशक्त करने के लिये हमें विश्व के उन महापुरुषों का चरित्र अवलोकन करना चाहिए जिन्होंने जीवन की हर चुनौती का सामना कर लक्ष्य को प्राप्त किया। जन्म से सभी समान होते है यह ठीक है कि घर, परिवार विद्यालय एवं परिवेश का शिशु मस्तिष्क पर प्रभाव पड़ता है, परन्तु इसके बावजूद भी जिसने अपने वास्तविक स्वरूप को पहचान कर आत्मविश्वास जागृत किया, उसने अपने व्यक्तित्व पर कुहासे को जमने नहीं दिया।

स्वयं के मूल्यांकन करने की क्षमता बिना, हम में आत्मविश्वास पैदा नहीं हो सकता। जिसे अपनी कमी का ज्ञान न हो वह अपना सुधार नहीं कर सकता। एक ही उदर से उत्पन्न संतानों के विचारों में पृथकता होती है यद्यपि माता–पिता समान रूप से अपने बच्चों का भविष्य संवारना चाहते है। गुरु बिना पक्षपात के समान रूप से शिष्यों को ज्ञान देता है परन्तु ज्ञान को ग्रहण करने की क्षमता हर शिष्य की अलग–अलग होने के कारण हर शिष्य योग्य नहीं हो पाता। सब कुछ समान होने के उपरान्त भी यह विषमता हमें यह बोध करती है कि, पात्र में ही कमी होती है।

विद्या संसार का सर्वोत्तम धन है जो विद्या संग्रह करने में कोताही करता है उसकी पहचान सहजता से हो जाती है। ज्ञान अन्तःकरण को प्रकाशित करता है परिणाम स्वरूप व्यक्ति में आत्मविश्वास पैदा हो जाता है जिनके पास आत्मविश्वास नहीं होता वे दूसरों पर विश्वास करना प्रारम्भ कर देते है, यही कारण है कि समान रूप से सब कुछ होने के बावजूद हर व्यक्ति का अपना पृथक्–पृथक् व्यक्तित्व बन जाता है। जिसकी जितनी दृष्टि होती है उसी के अनुसार वह कार्य भी करता है। आत्मविश्वास से विहीन मनुष्य अपने सुख के लिये सही गलत का चिंतन नहीं करते इनके जीवन का ध्येय धन संग्रह बन जाता है। धन से श्रेष्ठ इन्हें कुछ दिखायी भी दे तो उसे पाने के लिये पतन के पथ पर चलने से संकोच नहीं होता।

जिसके पास आत्मविश्वास होता है वह ही आत्मचिंतन कर सकता है। जो आत्मचिंतन करता है वह सही गलत निर्णय करने की क्षमता प्राप्त कर लेता है। हंस पय से जल को पृथक् कर देता है इसी तरह आत्मविश्वास जीवन से बुराइयों को निकालता रहता है, वह अपने सुख में मग्न नहीं होता इसलिए दूसरों की पीड़ा समझने की शक्ति समाप्त नहीं होती अस्तु उसके विचार उदात्त हो जाते है।

परिष्कृत विचार आत्मविश्वास का सोपानिक क्रम है। जो व्यक्ति स्वयं की त्रुटियों को नजर अंदाज करता है वह कभी भी आत्मविश्वासी नहीं हो सकता।

सुख, दुःख सफलता असफलता से हर व्यक्ति को सामना करना पड़ता है। संसार में जो उच्चतम् शिखर पर पहुँचे उन्हें अनेकों बार असफलता का सामना करना पड़ा है। असफलता हमें इस बात का बोध कराती है कि हमारे प्रयास में कहीं–न–कहीं कमी रह गयी है। जिन्हें अपना मूल्यांकन करना आता है वे सहजता से अपनी त्रुटियों को पहचान लेते है एवं उसे हर पल सुधार करते रहते है तथा अनवरत लक्ष्य के लिये संघर्षरत रहते है। आत्मविश्वासी अपनी क्षमता के अनुसार ही लक्ष्य का निर्धारण करते हैं एवं तब तक प्रयासरत रहते है जब तक अपना अभीष्ट प्राप्त नहीं हो जाता।

जो अपने आप को पहचान नहीं सकता उसमें कभी भी आत्मविश्वास पैदा नहीं हो सकता। जो दूसरों पर अवलम्बित होकर जीवन यापन करते है उनका व्यक्तित्व सिकुड़ जाता है। ऐसे लोग दूसरों का गुणगान करने में माहिर होते है। अपनी प्रशंसा करना तो जन्म सिद्ध अधिकार समझतें हैं। इज्जत का मतलब वाह्य दिखाया आडम्बर एवं बात–बात पर झूठ बोलना एवं बड़े लोगों की नकल करना बुद्धिमता का प्रतीक समझते हैं, दूसरों को धोखा देने में इन्हें आत्मसंतुष्टि मिलती है। वास्तव में जिनके पास आत्मविश्वास नहीं होता वे गुणों की जगह दूसरों के दोषों को अपने आचरण में शामिल कर गौरवान्वित होते रहतें हैं।

दूसरों की नकल हमें अवश्य करनी चाहिए परन्तु हम में परखने की क्षमता भी होनी चाहिए। दूसरों की अच्छाई का नकल करना कभी भी गलत नहीं हो सकता परन्तु दूसरों की बुराई का नकल करना पतन का वर्त्म है। यद्यपि सही गलत की कोई निश्चित परिभाषा दे पाना कठिन है, इसलिए समय एवं परिस्थित के अनुसार विवेक से निर्णय लेना ही सही कहा जा सकता है। इसका नकल करना गर्व की बात होगी। जिसमें आत्मविश्वास होता है, वह इस सत्य से भलीभाँति परिचित होता है।

शरीरिक बल से आत्मबल सशक्त होता है परन्तु बिना आत्मविश्वास के आत्मबल पैदा हो ही नहीं सकता। आत्मविश्वास को पैदा करने की आवश्यकता नहीं, क्योंकि यह हर मानव में सर्वदा विद्यमान रहता है। आवश्यकता इसे पहचानने की है जब तक हम इसे पहचानेंगे नहीं तब तक हमारी पहचान नहीं बन सकती। इसलिये सर्वप्रथम हमें इसे पहचानने की जरूरत है। आत्ममंथन किये बिना संशय का अंत नहीं हो सकता। जब तक संशय का निवारण नहीं होगा तब तक अन्तःस्थल में आत्मविश्वास उत्पन्न नहीं हो सकता। भ्रम का अंत केवल वास्तविक ज्ञान द्वारा ही संभव है, अतः जिन्हें संशय से निकलता है उन्हें ज्ञान का आश्रय लेना

होगा, बिना उपयुक्त ज्ञान के आत्मविश्वास पैदा नहीं हो सकता।

ज्ञान के द्वारा ही हमें अपनी शक्तियों का बोध होता है। जब तक हमें अपनी शक्तियों का बोध नहीं होगा तब तक स्वयं पर विश्वास नहीं हो सकता, जिन्हें स्वयं पर विश्वास नहीं वे जीवन के किसी भी क्षेत्र में सफल नहीं हो सकते। जब हमारा हृदय आत्मविश्वास से ओत–प्रोत भरा होता है तो देह में स्फूर्ति स्वतः उत्पन्न हो जाती है। स्यात् इसीलिए रोगी को दवा से कहीं अधिक सांत्वना की आवश्यकता होती है। मनोबल ऊँचा हो तो कठिन कार्य भी सरल हो जाता है। मनोबल को उच्च बनाये रखने के लिए आत्मविश्वास होना नितान्त आवश्यक है। अपनी दृष्टि को अंतर्मुखी बनाये बिना आत्मविश्वास उत्पन्न नहीं हो सकता।

हमारी दृष्टि तब तक अंतर्मुखी नहीं हो सकती जब तक हम बाहरी दृश्यों से प्रभावित होते रहेंगे, बाहर जो दृश्य बनते है उनका सिर्फ अवलोकन करना चाहिए परन्तु ग्रहण उसे ही करना चाहिए जो हमारे विचारों को उत्कर्षता प्रदान करने में सहायक हो। द्वन्द्वमय जगत् में सब को संतुष्ट नहीं किया जा सकता लोग क्या कह रहे है, इससे अधिक महत्त्वपूर्ण है कि हम कर क्या रहे है। लोगों से परामर्श अवश्य लेना चाहिए परन्तु निर्णय स्व विवेक से ही करना चाहिए। विवेक को स्वस्थ रखने के लिये साहित्य का अध्ययन करना चाहिए। पुस्तकें हमारी सच्ची मित्र है इनका प्रभाव आत्मविश्वास को सबल बना देता है।

मानव के उत्थान एवं पतन में संगति का विशिष्ट योगदान है इसलिए हमें सर्वदा ऐसे लोगों का साथ करना चाहिए जिनके अन्तःस्थल में ज्ञान का प्रकाश हो। यदि हमने ऐसा नहीं किया तो कुसंगत का परिणाम उन्नति के मार्ग को अवरुद्ध कर देगा, इस स्थिति में भटक जाना स्वाभाविक है। जो भटक जाते वे पिछड़ जाते हैं इसलिये दौड़ना शुरू कर देते है, परन्तु वे यह नहीं जानते उन्हें जाना कहाँ है। सबसे महत्त्वपूर्ण बात यह है कि हम स्वयं निश्चित कर ले कि हमें जाना कहा है, यदि लक्ष्य नहीं होगा तो प्रयास शुरू हो ही नहीं सकता। किसी के देखा–देखी कहने सुनने से भी लक्ष्य का निर्धारण नहीं करना चाहिए। स्वप्न देखना अच्छी बात है परन्तु हममें उड़ने की शक्ति कितनी है इसका ध्यान रखना परम आवश्यक है। अपनी क्षमता के दायरे में लक्ष्य का निर्धारण वही कर सकता है जिसके पास आत्मविश्वास की पूँजी होती है।

आत्मविश्वास ही मानव की सर्वोत्तम पूँजी है इसके बल पर ही हम सच्चा सौदा कर सकते है। आत्मविश्वास असम्भव को सम्भव बना देता है। आत्मविश्वास दुविधा से सर्वदा के लिये मुक्त कर देता है। मानवीय गुणों का आभूषण आत्मविश्वास है यह वह पारस पत्थर है जो सारे दोषों को गुणों में परिवर्तित कर देता है। आत्मविश्वासी अपनी ज्ञान सीमा से परे लक्ष्य को भी अनवरत अभ्यास द्वारा साकार

कर लेता है। आत्मविश्वासी व्यक्ति धैर्य एवं आशा को कभी नहीं छोड़ता।

अपनी आन्तरिक शक्ति को पहचान लेना ही आत्मविश्वास है, परन्तु इसे जान लेना ही पर्याप्त नहीं, अपितु इन शक्तियों को उजागर करने के लिये संघर्ष करना पड़ेगा, जो संघर्ष से घबरा जाता है वह शिखर पर पहुँच नहीं सकता। संसार में एक दो प्रयास से कोई सफल नहीं हुआ है, सफल वही हुआ है जो अनवरत प्रयास करता रहा है। साहस हमारा सबसे बड़ा सम्बल है, यही हमारे व्यक्तित्व में निखार लाता है।

बून्द–बून्द के संग्रह से घड़ा भर जाता है इसी प्रकार एक–एक शब्द का भंडार करने से व्यक्ति विद्वान् हो जाता है। मानव कभी परिपूर्ण नहीं होता हम जीवन की अंतिम साँस तक सीखते रहते है। स्यात् इसी कारण ज्ञानी पुरुष जहाँ विनम्र होते है वह अल्प ज्ञान वाले घंमडी हो जाते है। जब हम अपने को बड़ा समझने लगते हैं तो समझ लेना चाहिए कि हमारा ज्ञान सीमित है। इस ब्रह्माण्ड में धरती की तुलना राई से भी नहीं हो सकती, फिर इस मानव की क्या विसात है जो अपने को भूल जाता है वह दूसरों का कभी भी कल्याण नहीं कर सकता। अहंकार आत्मविश्वास का प्रदर्शन करना शुरू कर देता है। जिस प्रकार दूध में फेना अपना आकार तो दिखाता है परन्तु शीघ्र ही समाप्त हो जाता है, अतः आत्मविश्वास का प्रदर्शन अवांछनीय है।

जिस तरह लता को ऊपर चढ़ने के लिये सहारे की आवश्यकता होती है, उसी तरह मनुष्य को आगे बढ़ने के लिये सम्बल की जरूरत पड़ती है। बिना प्रेरणा के कोई शिखर पर पहुँच नहीं सकता, परन्तु सब को प्रेरणा का स्रोत नहीं मिल सकता। मनुष्य स्वार्थी ही नहीं विचित्र प्राणी है इसे समझना अगम्य है। रिश्ते नाते प्यार सब अपना रूप बदलते रहते है, संसार में बिना स्वार्थ कोई किसी की सहायता नहीं करता, इसलिये संसारिक प्राणियों का आश्रय लेकर अभीष्ट तक पहुँचने की कल्पना करना तो ठीक है परन्तु इसे मूर्त रूप देने के लिये आत्मविश्वास को कभी भी खोना नहीं चाहिए।

मानता हूँ आत्मविश्वास भी डगमगा जाता है। मानव हृदय पाषाण का नहीं है सुख–दुःख सर्दी–गर्मी से विचलित हो जाना स्वाभाविक है। जब हम आगे अनवरत बढ़ेगे तो थकेंगे और गिरेंगे भी, गिरने का कभी भी अफसोस नहीं करना चाहिए अपितु इसे विश्राम समझ तुरन्त सावधान हो जाना चाहिए तथा पुनः कदम आगे बढ़ा देना चाहिए।

■ ■ ■

स्वाभिमान

रमणी के मुखमण्डल पर जिस तरह लज्जा का भाव प्रदीप्त होने पर उसके सौन्दर्य में चार चाँद लग जाता है उसी तरह व्यक्ति के व्यक्तित्व निर्माण में स्वाभिमान का महत्त्वपूर्ण स्थान होता है। स्वाभिमान मानव जीवन को परिपूर्ण करता है। स्वाभिमान विहीन जीवन पशु सदृश होता है स्वाभिमान मानव जीवन का आभूषण है। जिस हृदय में स्वाभिमान निवास करता है वह व्यक्ति ही मनुष्य कहलाने का अधिकारी है। मानव जब तक संकीर्ण दृष्टिकोण में बंधा रहेगा तब तक स्वाभिमान का उदय नहीं हो सकता। जन्म के समय मानव मस्तिष्क सादे कागज के तरह होता है हम अपने ज्ञान के द्वारा इस कागज पर स्वभाव का निर्माण करते है। एक ही माता–पिता एवं एक जैसे परिवेश में विकसित होने वाले जुड़वा शिशुओं में भी स्वभाव का निर्माण भिन्न–भिन्न होता है। यह कहना सर्वदा उपयुक्त होगा कि स्वाभिमान निर्माण बाहरी आवरण द्वारा नहीं अपितु स्वयं के प्रकाश से निर्मित होता है।

विद्या विनम्रता की प्रतीक है परन्तु जिस तरह हर व्यक्ति के हृदय से अहंकार का अंत नहीं कर पाती, उसी तरह अपरा के द्वारा स्वाभिमान पैदा नहीं हो सकता। यद्यपि बीज कभी निष्फल नहीं होता धरती उसे अपने अंदर छिपाये रखती है जब उपयुक्त वातावरण बन जाता है तब बीज अंकुरित हो जाता है। परन्तु यदि बीज का अंकुरण चट्टान पर हो तो क्या वह वृक्ष का रूप धारण कर पायेगा, कदापि नहीं। बीज के अंकुरण के बाद यदि उसके जड़े विकसित नहीं होती तो प्रकृति का प्रयोजन व्यर्थ हो जाता है। मानव हृदय विचित्र है इसलिए जब तक हृदय पाषाण सदृश रहेगा तब तक उसके अंदर मूल्यों का प्रवेश नहीं हो सकता, कोशिशें सिर्फ अंकुरण का कार्य करती है परन्तु जब तक हृदय में उर्वरा मिट्टी तैयार नहीं की जायेगी तब तक स्वाभिमान का निवास अन्तःस्थल में नहीं हो सकता।

अच्छी फसल पैदा कर लाभ कमाने के उद्देश्य से कृषक अपने खेत की मिट्टी को कई बार जोत कर बीज बोकर निराई एवं गुड़ाई करता है। यदि कोई कृषक से कहे तुम यह कार्य छोड़ दो बदले में तुम्हें दो गुनी कीमत मिलेगी। बिना मेहनत और वह भी दो गुना लाभ अब भला संसार में ऐसा कौन मूर्ख होगा जो इस आफर को तिरस्कृत करेगा। लालच चिंगारी है यदि एक बार प्रज्ज्वलित हो गयी तो सारे भवन को स्वाहा कर देगी। लाभ का कोई सिद्धान्त नहीं होता। एक विक्रेता एक ही वस्तु का ग्रहकों से अलग–अलग मूल्य ले लेता है। सज्जन ही हर जगह ठगा

जाता है। ज्ञान प्राप्त कर लेना और उसका अनुगमन करना दो अलग–अलग दिशाएँ है जो बिना श्रम किये दूसरों की सम्पत्ति हड़प लेते है उनके हृदय में स्वाभिमान उत्पन्न नहीं हो सकता।

दीप एवं बत्ती की तरह स्वाभिमान और सत्य का सम्बन्ध है जब तक दीपक प्रज्वलित नहीं होगा तब तक प्रकाश उत्पन्न नहीं कर सकता ठीक इसी प्रकार जब तक हमारे अंतःस्थल में सत्य का निवास नहीं होगा, तब तक स्वाभिमान प्रकट नहीं हो सकता। सगुण एवं निर्माण ब्रह्म की जिस तरह एक रूपता है उसी तरह स्वाभिमान एवं सत्य को भी समझना चाहिए। सत्य का आश्रय लेकर जब तक व्यक्ति आचरण को परिष्कृत नहीं करेगा तब तक वह स्वाभिमानी नहीं हो सकता। स्वाभिमान का तात्पर्य गर्व से नहीं, अपितु स्वयं के अवगुणों से अवगत होना है। स्वयं को पहचाने के बाद ही स्वाभिमान पैदा होता है। गर्व किसी भी स्थिति में निंदनीय है यह यथा स्थिति को छुपा देता है। जैसे दग्ध होकर पय फेना उत्पन्न करने लगता है इसी तरह अंहकार व्यक्तित्व को थुलथुला बना देता है जबकि स्वाभिमान व्यक्तित्व में निखार पैदा कर देता है।

जिस व्यक्ति के हृदय में स्वाभिमान होगा वह जीवन को हानि एवं लाभ की तुला पर नहीं तौलेगा। हानि–लाभ की चिंता हमारे मन में होती है तो हमारा ध्यान लाभ पर केन्द्रित हो जायेगा। लोभ पर जब हमारा ध्यान केन्द्रित हो जाता है तो पथ पर दृष्टि जाती ही नहीं। इसी कारण लोग धन के पीछे बेताहाशा भागना शुरू कर देते है। धन की चमक लोचन को चुधिया देती है इस स्थिति में स्पष्ट दिखायी नहीं देगा इसी कारण श्रम का महत्त्व गौण हो जाता है। कृषक क्या कोई भी हो बिना स्वाभिमान के आचरण की परिभाषा नहीं समझ सकता।

आचरण के महत्त्व को विश्व में हर देश एवं हर काल में स्वीकार किया गया है। आचरण विहीन मानव का उद्धार जग नियन्ता भी नहीं कर सकते। ईश्वर सर्वशक्तिमान होकर भी स्वछन्द आचरण नहीं कर सकता, अपने बनाये नियम में प्रकृति भी बद्ध है। यदि प्रकृति का नियम टूटा तो प्रलय निश्चित है। मानव तभी मानव कहा जायेगा जब उसकी पहचान हो, अपनी पहचान बनाने के लिये संघर्ष करना पड़ेगा। आचरण स्वाभिमान के निर्माण में सहायक है। आचरण को सुघड़ बनाने के लिए श्रम के महत्त्व को स्वीकार करना पड़ेगा, जैसे ही हमारा ध्यान लोभ पर केन्द्रित हुआ आचरण की नींव ध्वस्त हो जायेगी। आचरण विहीन मानव कभी स्वाभिमानी नहीं हो सकता। दया उदारता एवं करुणा के भाव जब एक में समन्वय होकर न्याय की मिट्टी को उर्वरा बनाते है तभी सत्य की वर्षा एवं ज्ञान की रश्मिें इस मिट्टी को छूकर इठलाती है, तब आचरण का बीज अंकुरित हो स्वाभिमान के

वृक्ष का निर्माण करता है।

रिश्ते चाहे कितने अंतरतम हो अंतरंग नहीं हो सकते। स्वार्थ के आधार तल पर रिश्तों का निर्माण होता आया है इस हेतु रिश्तों का स्वरूप प्रतिक्षण बदलता रहता है। यह परिवर्तन जब औचक होता है तब हृदय अधीर हो जाता है परन्तु यह वेदना समझने की हर प्राणी में शक्ति नहीं होती। व्यक्ति के अंदर यदि स्वाभिमान न हो तो वह प्रतिदिन गिरगिट की तरह रंग बदलता रहता है, इसलिये ऐसे व्यक्तियों को पहचान पाना कठिन हो जाता है। एक उदर से निर्मित रिश्ते मात्र इसलिये टूट जाते है कि स्वार्थ नेत्र बंद कर देता है, कोई किसी के साथ दस उपकार करे परन्तु भूल से यदि एक गलती हो गयी तो सारे किये पर पानी फिर जाता है। जिनके पास स्वाभिमान नहीं होता उनका अपना व्यक्तित्व भी नहीं होता ऐसे लोग दूसरों की बुराई की नकल करने में माहिर होते है, स्यात् इसीलिये समाज में अच्छे कार्य की अपेक्षा बुरे काम करने वालों की नकल एवं प्रशंसा दोनों होती है। परन्तु स्वाभिमानी व्यक्ति किसी भी स्थिति में नकल नहीं करता, क्योंकि वह अच्छी तरह जानता है कि परछाई की कभी भी पहचान नहीं हो सकती चाहे वह कितनी ही विशाल हो?

लोभ समस्त कार्यों का मूल आधार है परन्तु जब तक मनुष्य लोभ की सीमा निश्चित नहीं करेगा तब तक स्वाभिमानी नहीं हो सकता। सागर में जहाज तब तक तैरता रहेगा जब तक उसका भार संतुलित रहेगा संतुलन बिगाड़ते ही जहाज का डूबना निश्चित है। इसी प्रकार मानव को भी लोभ की सीमा तय करना चाहिए। लोभ के नियंत्रण बिना मूल्यों का विकास नहीं हो सकता जब तक हृदय निष्कूट नहीं होगा तक तक उसमें सत्य का बिम्ब द्रष्टव्य नहीं होगा। सत्य का आश्रय लिये बिना कोई भी स्वाभिमानी नहीं हो सकता।

सुन्दर हस्तलिपि ध्यान को अपने तरफ आकर्षित करती है परन्तु त्रुटियों को छुपा नहीं सकती। हमारे लाख प्रयास के बावजूद हमारा व्यवहार हमारे वास्तविक स्वरूप को प्रकट कर देता है। आवश्यकता इस बात की है कि हम अपनी त्रुटियों को समझे, तभी उसका सुधार कर सकते है। यदि ऐसा नहीं किया गया तो व्यवहार का प्रदर्शन चाहे कितना आकर्षक करके दिखाया जाय पर उसकी नाटकीयता प्रकट हो जायेगी। व्यवहार का प्रदर्शन इसलिये नहीं हो सकता क्योंकि जब हम किसी की आवभगत करते है तो हमारा आचरण ही पीछे से इसका संचालन करता है, इसी कारण बुद्धिमान लोग चमचो की सहजता से पहचान कर लेते है। स्वाभिमानी व्यक्ति किसी की चमचागिरी नहीं कर सकता। देश का दुर्भाग्य है कि आज काम की नहीं चमचों की इज्जत हो रही है। स्वाभिमानी व्यक्ति न्याय की परिभाषा अपने स्वार्थ हेतु नहीं बदलता। इस्लाम ने स्वाभिमान को प्राण तुल्य माना

है इसी लिये अल्लाह के सिवा किसी के भी सामने सर न झुकाने का आदेश दिया है। इस आदेश का पालन वही कर सकता है जो स्वाभिमानी हो।

सत्य निष्ठा एवं ईमानदारी को प्रकाशित करने वाली शक्ति ईश्वर है अतः जिस मानव के अन्दर में ये शक्तियाँ निवास करती है वह किसी भी स्थिति में अकरुण नहीं हो सकता, उसमें दूसरे की पीड़ा समझने की शक्ति होती है। जो दूसरों की पीड़ा समझ सकते है वे सत्य के पुजारी होते है। सत्य की अनुभूति किये बिना स्वाभिमान उत्पन्न नहीं हो सकता, स्वाभिमान का अभिप्राय अपने आप पर विश्वास, स्वयं पर विश्वास तभी हो सकता है जब हम खुद अपने आपको पहचान ले अक्सर हमारा जीवन दूसरों को समझने में ही व्यतीत हो जाता है।

मनुष्य के निर्माण में कर्म की महत्त्वपूर्ण भूमिका होती है। बिना कर्म किये कोई पल भर भी रह नहीं सकता, देह व्यापार कर्म पर आधारित है। कर्त्तव्य की भट्टी में तपे बिना मनुष्य का निर्माण नहीं हो सकता। मनुष्य विवेक का प्राय है। जब तक हमारे अन्तःकरण में विवेक जागृत नहीं होगा तब तक दुविधा की स्थिति से निकल नहीं सकते। जिन लोगों का समस्त जीवन दूसरों को प्रसन्न करने में व्यतीत हो जाता है उनका अपना व्यक्तित्व सिकुड़ जाता है जब तक हमारा व्यक्तित्व विकसित नहीं होगा तब तक हमारे हृदय में स्वाभिमान उत्पन्न नहीं हो सकता।

कुन्दन को अच्छी तरह ज्ञात होता है कि अग्नि में तप कर निखार ही आयेगा। इसी प्रकार जिस व्यक्ति में स्वाभिमान होता है वह अपनी निंदा या प्रशंसा से विचलित नहीं होता। वह जानता है एक दिन उसकी पहचान अवश्य होगी, किसी निर्जन में जलने वाले दीपक का प्रकाश कभी–न–कभी किसी पारखी की दृष्टि में आ ही जाता है अस्तु मानव को सर्वप्रथम अपने आप पर विश्वास होना चाहिए। जब तक हमको अपने आप पर विश्वास नहीं होगा तब तक स्वाभिमान का उदय नहीं हो सकता। हम कौन है इस प्रश्न का उत्तर कहीं बाहर से प्राप्त नहीं किया जा सकता परन्तु भ्रम वश हम इस प्रश्न का उत्तर बाहरी जगत में खोजते रहते है। हर चमकने वाली चीज अपने प्रभाव से हमें चुधिंयाती है, परन्तु हम अपनी दृष्टि की शक्ति को बढ़ाने की जगह चमकने वाली चीज के लोभ में ऐसा चश्मा लगा लेते है, जिसमें वस्तुएँ तो स्पष्ट दिखने लगती है परन्तु हमारी दृष्टि हमारी नहीं रह जाती।

जो व्यक्ति अपनी दृष्टि विकसित नहीं कर पाते उनके पास जीवन का कोई सिद्धान्त नहीं हो सकता वे जीते तो है परन्तु किस लिये?यह सोच भी नहीं सकते। ऐसे लोगों को जीवन का अर्थ खाने पीने एवं सोने में सिमट जाता है। भौतिक सुख को ही जीवन का लक्ष्य समझ दायें–बायें किसी भी तरह धन कमाना ही इनके जीवन का मकसद होता है। जीवन की समस्त ऊर्जा का प्रयोग कर अभीष्ट प्राप्त

कर लेना मानव जीवन का उद्‌देश्य है परन्तु इससे भी महत्त्वपूर्ण बात यह कि हमने जो लक्ष्य चुना है उसकी जो चमक दिखायी दे रही है क्या वह उसकी अपनी है।

धन अवगुणों को छुपा देता है स्यात् यही सोचकर अधिकांश लोग सही गलत का विचार करना नहीं चाहते। इनका ध्यान धन पर केन्द्रित रहता है इसलिये आचरण की परिभाषा स्व विवेक से निश्चित कर देते है। ऐसे महानुभावों के पास इतनी शक्ति होती है कि यदि कोई प्रतिवाद करे तो उसे खत्म कर देते है, और ये यही समझते है कि जो मैं करू वही सही है। ऐसे लोगों के पास अहंकार का भण्डार होता है। जिसे अहंकार हो जाता है उसे अपने सिवा कुछ भी दिखायी नहीं देगा। ऐसे लोग समाज में पूजे जाते है परन्तु स्वयं अपने अंदर से आँखे मिलने की शक्ति इनमें नहीं होती। अहंकारी लोग कभी भी स्वाभिमान नहीं हो सकते।

जब तक हममें स्वयं से स्वयं दृष्टि मिलाने की क्षमता नहीं विकसित होगी तब तक हमारे हृदय में स्वाभिमान उदय नहीं हो सकता, दूसरों की नजरों में गिरकर जीना उतना कठिन नहीं होता, जितना स्वयं की नजरों में गिर कर होता है। जो व्यक्ति अपने पतन का मूल्यांकन करने की क्षमता खो देता है उसके लिये उचित अनुचित की परिभाषा का महत्त्व नहीं रह जाता। ऐसे लोग अपने स्वार्थ के वशीभूत जल में हाथ पाँव मारकर तैरते तो अवश्य रहते है परन्तु बिना दिशा ज्ञान के ये प्राणी सागर का किनारा कभी भी प्राप्त नहीं कर सकते। जिसे दिशा का ज्ञान न हो वह चाहे कितना ही निपुण तैराक हो एक दिन थक कर डूब जायेगा। परन्तु जिसे दिशा का ज्ञान है वह अप्रवीण भी कभी–न–कभी किनारा अवश्य पा जायेगा। स्वाभिमान रहित मानव को दिशा का ज्ञान उत्पन्न नहीं हो सकता।

स्वाभिमान का निर्माण बाहरी तत्त्वों द्वारा नहीं होता ज्ञान की शक्ति अज्ञान को समाप्त कर देती है। दीप के प्रज्वलित होते ही तिमिर का अंत हो जाता है परन्तु प्रकाश होने के उपरान्त भी चेहरों पर पर्दा पड़ा रहता है। जब तक हम इस पर्दे को नहीं हटायेंगे तब तक हमारी वास्तविक सूरत से लोग अनभिज्ञ रहेंगे। चेहरों का नकाब हट सकता है परन्तु जो नकाब हमने अपने हृदय पर डाल रखा है उसे कौन हटायेगा। जब तक हृदय पर नकाब पड़ा रहेगा तब तक व्यक्ति का चरित्र स्वयं से आँख मिला नहीं सकता। जो लोग स्वाभिमान से जीना चाहते है उन्हें सर्वप्रथम यह नकाब हटाना होगा।

■ ■ ■

शिष्टाचार

हमारा प्रतिबिम्ब दर्पण में दिखता है इसी तरह संसर्ग में आने वाले व्यक्ति का प्रतिबिम्ब शिष्टाचार में दृष्टिगोचर होता है। हमारा ध्यान सदा बिम्ब पर केन्द्रित होता है अतः इसे आकर्षक बनाने के लिये हम जीवन पर्यन्त प्रयास करते रहते है। संसार में बिरले ही लोग होते है जो यह जानते है कि बिम्ब तब तक अनिंद्य नहीं हो सकता जब तक हम स्वयं अपने ओप का शृंगार नहीं करेंगे। इस सत्य से जब तक हम परिचित नहीं होंगे तब तक शिष्टाचार चेतन में नहीं जड़ में दिखायी देगा। सत्य की खोज करने वाले चिंतकों ने सत्य को किन्ही बाहरी पदार्थो में नहीं पाया। आत्मतुष्टि के उपरांत ही उन्हें सुखानुभूति हुई, परन्तु आत्मतुष्टि आत्मज्ञान के बिना सम्भव नहीं।

ज्ञान जगत की सर्वश्रेष्ठ शक्ति है इसके द्वारा ही वस्तुओं के वास्तविक रूप का बोध होता है। वस्तुएँ जैसे दिखती है, वैसे ही होगी यह भ्रम सहजता से समाप्त नहीं होता, इसी कारण शिष्टाचार व्यक्ति के आचरण में नहीं अपितु व्यक्ति द्वारा दी गयी वस्तु में दिखायी देने लगता है। आज समाज में हर तरफ वाह्य दिखाया ही शिष्टाचार का प्रतीक बन गया है। पद प्रतिष्ठा अथवा पैसा द्राक्षी से भरा चषक है इसको पीकर लोग मतवाले हो जाते है द्राक्षी का नशा टूटने के उपरान्त भी मस्तिष्क इसका इस तरह गुलाम हो जाता है कि वह अपनी स्वाभाविक शक्ति ही खो देता है। मानव की चेतना ही उसका वास्तविक स्वरूप है परन्तु बाहरी आवरण द्वारा इसको ढक दिया जाता है।

चरित्र के उच्चतम् शिखर पर पहुँचे बिना जीवन की वास्तविकता को सार्थक नहीं किया जा सकता। जीवन के मर्म को समझने के लिए तपस्या करनी पड़ती है। जिन्हें सत्य से प्यार है उन्हें लोगों से तिरस्कार मिलेगा जो इसकी परवाह करेंगे वे अपने वर्त्म से भटक जायेंगे। संसार का स्वरूप देखने में जितना मनोहर है छूने में उतना मृदुल नहीं। लोगों को पहचाने में समय लग जाता है। आज जिस तरह से शिष्टाचार का प्रदर्शन किया जा रहा है उसे देखकर यह अनुमान लगाना भी कठिन हो गया है कि कौन शत्रु और कौन मित्र है। इस स्थिति में शत्रु को पहचानना सहज है परन्तु मित्र को पहचान पाना दुश्कर है। लोगों ने चेहरे पर मुखौटे लगा लिये है। उनकी वास्तविक सूरत देख पाना कठिन है।

किसी भी विभाग में जब अधिकारी का आगमन निरीक्षण के लिये होता है तो शिष्टाचार के बहाने उसकी इस तरह आवभगत की जाती है कि उसका सारा ध्यान

प्रार्थना से हटकर प्रसाद पर केन्द्रित हो जाय। अधिकारी महोदय भी कथा सुनने नहीं पंजीरी प्राप्त करने हेतु आते है, इसीलिये साथ में थैला लाते है। आज कल वही कर्मचारी सफल है जो अपने अधिकारियों को काम से नहीं प्रसाद से संतुष्ट करता है। ऊपर वाला यदि खुश हो तो नीचे वाले क्या कर सकते है हाँ यदि कोई भौंकना भी शुरू कर दे, तो दो रोटी उसके सामने भी फेंक दो, फिर देखों आपस में एक दूसरे को काटने के प्रयास में रत हो जायेंगे। चतुर्थ श्रेणी कर्मचारियों की विशेषता यह है कि प्रलोभन इनके अंदर हवा भर देता है फिर ये गुब्बारे की तरह उड़ने लगते है। अपने साहबों को खुश करने में इनका सारा जीवन अर्पित हो जाता है। श्वान हड्डी को चाटते समय अपने ही रक्त को पीकर जिस तरह अहलादित होता है उसी तरह निम्न श्रेणी के कर्मचारी थोड़ा–सा उत्कोच पाकर अपने कर्त्तव्य की आहुति दे देते है।

शरीर में जिस तरह हृदय का स्थान है उसी तरह भारत सरकार के द्वितीय श्रेणी कर्मचारियों का महत्त्व है। यद्यपि निर्णय का कार्य मस्तिष्क करता है और इसका प्रतिनिधित्व अधिकारी गण करते है, परन्तु इस मस्तिष्क में रक्त संचार तो हृदय ही करता है यही कारण है कि मस्तिष्क के निर्णय को प्रभावित करने में द्वितीय श्रेणी कर्मचारियों का योगदान है। अधिकारियों का मार्ग–दर्शन द्वितीय श्रेणी कर्मचारी करते है और इनका पूरा प्रयास रहता है कि सही निर्णय न हो सके। अधिकारी भ्रम में रहे इसलिये शिष्टाचार के बहाने रिश्वत का आदान–प्रदान करने में इस वर्ग की अहम् भूमिका होती है, अधिकारियों एवं मंत्रीयों का स्वागत इस तरह किया जाता है कि वे आचरण की पवित्रता भूलकर लक्ष्मी के उपासक बन जाय। यदि कोई प्रदूषित नदी में नहाने से माना करे तो उसे समुद्र में फेंक दिया जाता है।

अंग्रेजों ने फूट डालो राज करो की नीति अपनायी थी उसी तरह द्वितीय श्रेणी के कर्मचारी निम्न श्रेणी के कर्मचारियों को ऐसी गोली खिला देते है कि वे दिन में भी सपने देखते रहते है। साहब की हाँ में हाँ मिलना ही सफलता का मूल मंत्र निम्न श्रेणी के कर्मचारी समझते है। साहब को किस तरह खुश किया जाय इनके जीवन का उद्देश्य होता है। शिष्टाचार से आचरण को किस तरह छुपाया जाता है इसका रंग देखकर वह जरूर दंग हो जायेगा जिसके हृदय में राष्ट्र एवं मानवता से प्रेम है। जनता के सेवक बनकर जनता का रक्त जो पी रहे हैं वे राष्ट्र द्रोही है। भारत वर्ष में स्यात् किसी विभाग में ऐसा कार्यालय नहीं होगा जहाँ शिष्टाचार के बहाने बहुमूल्य उपहारों का आदान–प्रदान न होता है।

शिष्टाचार का प्रदर्शन आचरण से नहीं अपितु भेष से सर्वत्र किया जाने लगा है। सुन्दर वस्तुओं की चमक के सामने यद्यपि आचरण कभी भी अपाहिज नहीं हुआ

परन्तु जो लोग वैसाखी पर चलने के आदी हो गये वे इसे महसूस नहीं कर सकते। लक्ष्मी के पास अपार शक्ति है परन्तु इसका प्रयोग कैसे किया जाय यह निर्णय कर पाना उनके वश की बात नहीं। धन के द्वारा प्रतिष्ठा प्राप्त की जा सकती है परन्तु मन की संतुष्टि कहीं से क्रय नहीं की जा सकती। स्वर्ण की परख जौहरी कर सकता है साधारण लोग चमक पर मुग्ध हो जाते हैं।

आचरण में स्वतः प्रकाश होता है इसलिये आचरण किसी बाहरी तत्त्व के आकर्षण में उलझ कर अपने में समाहित करने का प्रयास नहीं करता। आचरणवान व्यक्ति लोगों के वचनों को वर्षा की बूँन्दों की तरह गिरते हुए देखता है। बूँन्दों को यह भी पता नहीं होता वे गिर कहाँ रही हैं, हाँ जितनी देर मार्ग में है अपनी ध्वनि के आगे किसी की भी सुनने वाली नहीं, अधिकांश लोगों को यह भी पता नहीं होता उन्हें जाना कहाँ है जिस तरफ हवा चली उसी तरफ रुखकर दिया। आचरण हीन लोगों ने शिष्टाचार को कलंकित कर दिया है। इन लोगों की करतूतों से मन इतना आहत हो जाता कि किसी पर विश्वास करने को जी नहीं चाहता। नम्रता समस्त गुणों का आधार है। विनम्रता को धारण किये बिना मानव मूल्य हृदय में नहीं ठहर सकते। यह धारणा नितांत हास्यास्प्रद है कि बाहरी चमक के द्वारा हम किसी के हृदय में स्थान सुरक्षित कर लेगें। शिष्टाचार में मिलावट करने से उसका वास्तविक स्वरूप विकृति हो जाता है। परन्तु जिस तरह सब कुछ देखने के उपरान्त भी हम निज स्वरूप नहीं देख सकते, उसी तरह आचरण से पृथक् व्यक्ति चरित्र की गरिमा को पहचान नहीं सकते।

आचरण का प्रदर्शन नहीं किया जा सकता। हम जो वास्तव में है वह स्वरूप पर्दे के पीछे से भी झलक जाता है। स्वार्थ के वशीभूत लोग सत्य का साक्षात्कार करना नहीं चाहते इसलिये शिष्टाचार में मिलावट कर अधिक लाभ कमाना चाहते है। छोटे कर्मचारी बड़े कर्मचारियों का आवभगत इसी उद्देश्य की पूर्ति हेतु करते है। जो मनुष्य हराम का खाने का आदी हो जाता है, उसका लक्ष्य मात्र धन हो जाता है। धन आये चाहे किसी भी रास्ते से उन्हें चलने में हिचक नहीं होती।

संसार परिवर्तनशील है अतः यह कहना कि समय के साथ शिष्टाचार में परिवर्तन होना लाजमी है, कुछ लोग तर्क प्रस्तुत करते हैं और इसी आधार पर आचरण की अपनी व्यक्तिगत परिभाषा सही मानते है। ऐसे लोग वैभव को ही सुख का सोत्र समझते है। धन जब जीवन का केन्द्र बिन्दु बन जाता है तब जिस वृत्त का निर्माण होता है वह कितना वर्तुल बन रहा है यह महत्त्वपूर्ण नहीं रह जाता। मानव का ध्यान महज इस बात पर केन्द्रित हो जाता है कि वृत्त सिर्फ वृहद हो। इस प्रकार के वृहद वृत्त का निर्माण करने वाले सत्य एवं निष्ठा को जीवन में महत्त्व नहीं देते।

आज संसार में ऐसे लोगों की बाहुलता है जो अपने सुख से लिपटे दूसरों की भावनाओं को समझने का प्रयास नहीं करते। जीवन का हर कार्य मात्र लाभ को दृष्टि में रखकर करते है। हानि लाभ की तुला पर ध्यान केन्द्रित कर निश्चित लाभ प्राप्त किया जा सकता है। परन्तु इस प्रकार के दृष्टिकोण को जीवन का आधार बनाकर आचारण का निर्माण नहीं हो सकता। जब तक हमारा ध्यान आचारण पर केन्द्रित नहीं होगा तब तक चरित्र का निर्माण नहीं हो सकता। चारित्र के उच्चतम् शिखर पर पहुँचे बिना शिष्टाचार का पालन नहीं हो सकता।

सुन्दर वस्त्र व्यक्तित्व में चमक अवश्य प्रदान कर देते है परन्तु यह चमक आकाशीय विद्युत सदृश कुछ पल के लिये ही होती है। फिर भी हमारे नेत्रों को चुंधिया अवश्य देती है। इस चकाचौंध में वास्तविकता का बोध कर पाना सहज नहीं होता अधिकांश जन मोहित हो जाते है। मोह सृजन की शक्ति है परन्तु इसमें कमी भी है। यदि हमारा किसी से मोह हो जाय तो हम उसके अवगुणों को नजर अंदाज करना शुरू कर देते है, यदि किसी की यह स्थिति हो जाय तो वह अज्ञान से ग्रसित हो अपना सहज स्वरूप खो देता है। जिन्हें अपने स्वरूप का बोध नहीं, वे दूसरों की नकल करने लगते है, ऐसे लोगों को दूसरे के चेहरे जो पाउडर एवं लिपस्टिक से मोहक दिख रहे हो उन्हीं में अपना प्रतिबिम्ब दिखायी देने लगता है। फिर ये लोग वैसे ही बनने के प्रयास में आचरण को रोंदकर शिष्टाचार करने लगते है। आचरण की नींव को मजबूत किये बिना शिष्टाचार का पालन नहीं हो सकता।

इमारत के सौन्दर्य से अधिक उसकी मजबूती महत्त्वपूर्ण होती है दोनों के समन्वय होने पर ही वास्तविक सौन्दर्य का बोध होता है। देह के सौन्दर्य की सार्थकता तभी होती है जब वह मानवीय गुणों से ओत–प्रोत हो। शिष्टाचार का प्रदर्शन किसी भी स्थिति में व्यक्तित्व का निर्माण नहीं कर सकता। बिना आचरण को परिष्कृत किये शिष्टाचार का निर्वाहन नहीं हो सकता। दूसरों को धोखा दिया जा सकता है परन्तु स्वयं को कोई भी धोखा नहीं दे सकता। हमें अपनी कमियों का ज्ञान होता है पर इसे दूर करने की अपेक्षा जब हम इसके बचाव में उतर आते है वैसे ही आत्मा की मृत्यु हो जाती है। अन्तरात्मा के मृत्यु के उपरान्त व्यक्ति की पहचान लुप्त हो जाती है।

धन से किसी भी व्यक्ति की पहचान नहीं हो सकती। यह ठीक है कि समाज में धानाढ्य लोगों की जय–जयकार हो रही है परन्तु इन कुबेरे को यह नहीं भूलना चाहिए कि यह जयकार उनकी नहीं अपितु धन, एवं पद की हो रही है। शशि के पास स्वयं का प्रकाश नहीं होता परन्तु ज्योत्सना अवश्य होती है उसी तरह धन पद का प्रकाश धन, एवं पद के लुप्त होते समाप्त हो जाता है यदि ऐसा नहीं हुआ तो

मृत्यु इस चाँदनी को समाप्त कर देगी। मृत्यु के उपरान्त ही मानव के वास्तविक जीवन की शुरुआत होती है। जो जीवन किसी दूसरे को प्रेरणा न दे सके वह है भी, इसका अहसास नहीं हो सकता। जब तक हमारे अतःकरण में स्वयं आलोक उत्पन्न नहीं होगा तब तक हम सदाचारी नहीं बन सकते। धन, संपत्ति से नहीं अपितु गुण एवं योग्यता से भविष्य का निर्माण होता है वाह्य दिखाया एवं शिष्टाचार का प्रदर्शन करके गौरव की अनुभूति नहीं हो सकती। संसार में जितने भी महापुरुष हुये है सब ने जीवन में सादगी को महत्त्वपूर्ण स्थान दिया है।

सादगी को अपनाये बिना शिष्टाचार का पालन नहीं हो सकता हमारे व्यवहार से हर व्यक्ति संतुष्ट नहीं हो सकता, इसलिये व्यक्तियों को खुश करने की अपेक्षा परमात्मा को प्रसन्न करना श्रेयकर है। ईश्वर को प्रसन्न करने के लिये आडम्बर नहीं अपितु निश्छल हृदय की आवश्यकता है। हृदय को पावन करके उसकी धवलता में हमारा बिम्ब दृष्टिगोचर होगा। जो व्यक्ति स्वयं को पहचान लेता है वह संसार में हर स्थिति में अपने कर्त्तव्य का पालन करता है। जीवन यात्रा अन्नत है देह तो तरणी है इस पर जितना कम असबाब होगा यात्रा उतनी सुगम एवं सुरक्षित होगी। जो इस सत्य को समझता है वह आचरण को परिष्कृत करने का प्रयास करेगा समुज्जवल चरित्र का व्यक्ति ही शिष्टाचार का पालन कर सकता है अतएव शिष्टाचारी बनने के लिये चरित्र का निर्माण करना अपरिहार्य है। जो व्यक्ति चरित्र का निर्माण करना चाहते है उन्हें कर्त्तव्य की भट्ठी में जलना पड़ेगा।

■ ■ ■

वास्तविक धर्म

किसी प्राणी के वश में नहीं होता कि वह किस धर्म, जाति एवं देश में जन्म ले रहा है। जन्म लेने के उपरान्त शिशु जैसे–जैसे बड़ा होता है वह उस धर्म के बंधन में बंध जाता है। मेरी भी यही स्थिति है। अपने धर्म के रंग में मैं इस तरह रंग गया हूँ कि मुझे अपने धर्म से बढ़कर दूसरे का धर्म नहीं लगता। इस भाव के वशीभूत स्यात् लोग अपने धर्म पर गर्व करते है। धर्म पर गर्व करना अच्छी बात है परन्तु दूसरे के धर्म को तुक्ष समझना संकीर्ण मानसिकता की विकृति है। संसार में बहुत सी मान्यताएँ है जिन्हें लोग सिर्फ मानते है वे किस हेतु बनायी गयी तथा उनकी क्या सार्थकता है ऐसे बहुत से प्रश्न है जिन पर चिंतन करने की अपेक्षा लोग उन्हें ढ़ोते आ रहे है। विज्ञान ने बहुआयामी प्रगति की है। विज्ञान के प्रभाव से मानव जीवन प्रभावित भी हुआ है परन्तु मानवीय सोच अब भी सीमित विचारधारा के प्रवाह में बह रही है।

दर्शनशास्त्र का उद्देश्य सत्य का अन्वेषण करना है वह अपने प्रयास में रत है परन्तु सत्य आज भी मानवीय बुद्धि से परे है स्यात् इसीलिये दर्शनशास्त्र में ईश्वर को लेकर विभिन्न मत है। एक मत दूसरे मत का खण्डन करता है एवं अपने मत को ही सत्य सिद्ध करने का प्रयास करता है। धर्माचार्य दार्शनिक मतों से प्रभाविक होकर ही अपने धर्म को स्थापित कर पायें है। दार्शनिक को जहाँ सत्य का प्रकाश दिखायी पड़ता है वह उसे परिभाषित करने का प्रयास करता है वहीं दूसरी तरफ धर्माचार्य अपने विचारों की इमारत बना कर लोगों को बंद कर देते है। सरल अख्यानों द्वारा धर्म के स्वरूप से लोगों को परिचित करना कभी भी गलत नहीं हो सकता, परन्तु इन धर्माचार्यों को लोगों को यह भी बताना चाहिए कि धर्म अत्यन्त सूक्ष्म है इसकी परिभाषा परिस्थति के अनुसार बदल जाती है। अस्तु अपने धर्म पर गर्व करने के साथ दूसरे के धर्म का आदर करना सच्ची धार्मिकता का प्रमाण है।

धर्म कोई भी हो उनमें ऐसे अनेकों द्रष्टांत है जो ईश्वर की न्याय प्रियता पर प्रश्न चिन्ह लगा देते है। उदाहरणार्थ एक व्यक्ति ने जीवन भर अपने स्वार्थ सिद्धि हेतु उचित अनुचित का कभी भी विचार नहीं किया, धन के लिये हिंसा का ताडांव नृत्य करता रहा। जीवन के अंत में उसने व्रत, उपहास, एवं पूजा पाठ किया। धर्मस्थलों का निर्माण करा दिया। क्या उसके इन कार्यों की तुलना करके ईश्वर उसके पहले किये गये पाप कर्मों को माफ कर देगा। धर्माचार्य भले ही उत्तर हाँ में दे दें परन्तु न्याय का तकाजा यह कभी भी नहीं हो सकता। ईश्वर दयालु है इसे सिद्ध करने के लिये ऐसे दृष्टांत गढ़कर जो प्रचार किया जाता है वह कभी भी तर्क संगत

नहीं हो सकता। धर्म का कार्य लोगों को सांत्वना प्रदान करना है। मानव जीवन अनेकों गुत्थियों में उलझा हुआ है इन्हें सुलझाने के लिये विवेक को जागृत करने की आवश्यकता है। धर्म का कार्य मानवीय समस्याओं को सरल बनाना है मानव सिर्फ मानव है इसे चरित्रतार्थ करना है।

बड़े दुःख की बात है कि धर्म मानव कल्याण की अपेक्षा कहीं अधिक अपने समूह की सुरक्षा के लिये प्रयासरत रहा है। इसी कारण हर धर्म अपने को सर्वश्रेष्ठ होने का दावा करता है एवं अपने ही धर्म को सत्य मानता है। जो मेरे धर्म को स्वीकार करेगा वह ही परमात्मा के दरबार में शामिल होगा, जब कोई ऐसी धारणा लोगों को सुनायी जाती है तो वहाँ धर्म का वास्तविक स्वरूप विलुप्त हो जाता है। मृत्यु के बाद क्या होगा इस प्रश्न का उत्तर मेरे समझ से परे है पर मुझे लगता है यदि इस प्रश्न का उत्तर होता तो धर्म का स्वरूप ही बदल जाता। प्राण निकलते ही देह की सार्थकता खत्म हो गयी, अब शव को जला दो, या दफना दो, कुछ भी फर्क नहीं पड़ता। प्रकृति अपना कार्य करेगी मानव उसमें अवरोधन उत्पन्न करेगा तो परिणाम भयंकर होगा।

धर्म को लेकर जितना नर संहार हुआ उतने लोग शायद युद्ध में भी न मारे गये होंगे धर्म ने मानव को जहाँ सांत्वना प्रदान की वही मतवाला बनाकर मानवों की हत्या भी करवाई है। अगर दोनों पक्षों की तुलना की जाय तो किसका पलड़ा भारी है कहना कठिन होगा। संसार का सत्य एक ही हो सकता है। यदि इस बात पर मतभेद है और हम अपने ही मत को सही मान रहे हैं तो कौन सही है कहा नहीं जा सकता। धर्म का धर्म से मतभेद समझ में आता है हर धर्म की उत्पत्ति अपने देश काल एवं परिस्थिति को लेकर हुई। धरती पर विविधतायें है इनका प्रभाव धर्माचार्यों पर पड़ा एवं वे अपने चिंतन के आधार पर अपने धर्म को सर्वश्रेष्ठ करने की होड़ में दूसरे धर्म के विरोध में अपनी मान्यताओं को सृजन किया। लोगों के हृदय में सहजता से पहुँच सके इसलिये अनेक चमत्कारपूर्ण कथानकों द्वारा वाह–वाही लूटने का प्रयास भी किया गया। परन्तु धर्म जब अपने स्वरूप पर चिंतन करता है तो भी वह निष्पक्ष नहीं, जाति एवं लिंग को आधार बना मुक्ति का पृथक्–पृथक् पथ सृजन करता है।

असल में गम्भीरता से विचार किया जाए तो धर्म से लाभ की अपेक्षा हानि अधिक हुई है। ऊँच–नीच का भेदभाव धर्म की देन है। वर्तमान युग में न्याय को शिथिल करने में धर्म अपनी अहम् भूमिका निभा रहा है। इबादत से स्वस्थ मस्तिष्क का निर्माण होता है मस्तिष्क स्वस्थ हो तो सही गलत निर्णय लेने की क्षमता विकसित कर लेता है। जिस तरह शिशु के लिये अक्षर ज्ञान परम आवश्यक है, परन्तु जब शिशु बड़ा होकर धारा प्रवाह में अपना विचार व्यक्त करने लगे तो फिर

उसके लिये अक्षर ज्ञान का कोई महत्त्व नहीं रह जाता। इसी तरह उपासना व्रत दान तीर्थ प्रारम्भिक अवस्था है जब हमारे हृदय में आलोक उत्पन्न हो जाए तो इनका महत्त्व गौण हो जाता है। कर्त्तव्य कर्म को छोड़कर यदि कोई पूजा में समय व्यय करता है तो वह वास्तविक धर्म से पृथक् हो जाता है।

दर्शन का कटु सत्य है कि ईश्वर को सिद्ध नहीं किया जा सकता। परन्तु धर्माचार्य बड़ी सहजता से लोगों को ईश्वर का ज्ञान प्रदान कर देते है मुझे लगता है जैसे साक्षात् उन्होंने ईश्वर के दर्शन किये है। ईश्वर है अथवा नहीं इस प्रश्न पर चिंतन करने की अपेक्षा ईश्वर पर विश्वास कर लेना श्रेयस्कर है। यदि हम ईश्वर पर विश्वास कर लेते है तो बहुत बड़ा सम्बल मिल जाता है। मानव जीवन जटिल है आशा निराशा में झूलता कभी–कभी विवेक शून्य हो जाता है। मानवीय सम्बन्ध स्वार्थ के धरातल पर टिके हुये है ऐसे स्थिति में जब मानव हृदय असीम वेदना से छटपटा उठता है उस समय विचारों में जो झंझावात आता है उसे शान्त करने में ईश्वर की आस्था महत्त्वपूर्ण है। ईश्वर की आस्था प्राणी की सहनशीलता को बढ़ा देती है मनोबल प्रदान करती है इसलिए आस्थावान होना गलत नहीं परन्तु यह आस्था भोजन में नमक की तरह होनी चाहिए, यदि इसकी मात्रा बढ़ गयी तो हम अंधविश्वासी हो जायेंगे।

पुनर्जन्म एक अवधारणा है परन्तु इसे स्वीकार करने से परिवारिक जीवन में सामंजस्य लाने में सहायता मिलती है। लोगों की कड़ुआहट यह समझ कर पी जाते है कि क्या पता पुराना हिसाब चुकता हो जाए। दम्पत्ति जीवन की खटास सहने की शान्ति इस अवधारणा से प्राप्त होती है तथा प्यार एवं वासना का पृथक्कीकरण यहीं से आरम्भ होता है। यद्यपि सहन करने की एक सीमा होती है इसलिये हमें अपने विवेक को इस विषम परिस्थिति में काम में लाना चाहिये ताकि निर्णय गलत न हो सके। संसार में हर व्यक्ति को सपनों का महल मिल जाए यह सम्भव नहीं इसलिये सामंजस्य का प्रयास तो होना ही चाहिए। सारा प्रयास असफल होने पर आत्मनिर्णय लेना उपयुक्त होगा। वास्तविक धर्म वही है जो मानव हृदय में सांत्वना प्रदान करे परन्तु जैसे ही इसका उद्देश्य सीमित होता है धर्म सिर्फ अपने समूह के बारे में सोचने लगता है वैसे ही इसका वास्तविक स्वरूप विलुप्त हो जाता है। जिस तरह ईश्वर निराकार है उसी तरह धर्म भी अत्यन्त व्यापक एवं सूक्ष्म है जो इस तथ्य को नहीं जानते वे धर्म के वाह्य रूप वेष–भूषा पर मुग्ध हो जाते है। धर्म के वाह्य रूप ने मानव जाति को भारी क्षति पहुँचाई है।

समाज में व्याप्त विकृतियाँ एवं संकीर्ण विचार धारा धर्म के द्वारा उत्पन्न की गयी है। इन कुरीतियों को कुछ विज्ञजनों ने निहायत स्वार्थ वश सृजित किया। मानव कितना ही विवेक वान हो परन्तु संस्कारों को ढ़ोने का आदी होता है। शिशु

जिस परिवेश में बड़ा होता है वह उसका दास हो जाता है इस कारण सत्य का सामना करना नहीं चाहता। सृष्टि के संचालन के उद्देश्य से प्रकृति ने नर–नारी के देह में भेद किया है, परन्तु मानसिक स्तर पर भेद नहीं किया जा सकता, धर्म का आश्रय लेकर जब यह कहा जाता है कि स्वर्ग में नारियाँ इसलिये कम है कि वे पुरुषों से कहीं अधिक पाप करती है तो धर्म की न्यायप्रियता कर प्रश्न चिन्ह लग जाता है। ऐसी अवधारणाएँ हास्यास्पद ही नहीं अपितु पुरुष प्रधान समाज की विकृति मानसिकता की सूचक है।

धर्म की आड़ में पुरुष ने नारी के साथ न्यायपूर्ण व्यवहार नहीं किया इसका प्रमाण आज के समाज में भी विद्यमान है। पुरुष वर्ग ऐसे नियमों को जीवित रखना चाहता है क्योंकि वह नारी को मानव नहीं अपितु वस्तु की तरह उपयोग करना चाहता है। प्रकृति सबलो की सदा सुरक्षा करती आयी है शक्तिशाली की विजय सदा हुई है। पुरुष ने नारी की कमजोरी का सदा फायदा उठाया है। भावानात्मक ढंग से उसे जीवन साथी नहीं अपितु दासी बनाकर रखने के लिये धर्म का सहारा लिया है। पुरुष के दीर्घ आयु की कामना के लिये, पुत्र के लिये, नारी को व्रत एवं पूजा का विधान किया गया, परन्तु खेद है पत्नी अथवा बेटी के कल्याण कामना हेतु किसी भी धर्म ने पुरुष के लिये व्रत एवं इबादत का विधान नहीं किया।

धर्म की इस दकियानूसी विचारधारा ने पुरुष प्रधान समाज को आगे बढ़ने का मार्ग प्रशस्त किया। आज का समाज जहाँ खड़ा है इसके पैरों तले अनेकों निष्पाप अबोध निरीह प्राणियों की लाशे दबी हुई है। वर्तमान समाज कब्रिस्तान पर खड़ा है परन्तु दुर्भाग्य वह अपनी पुरानी गलतियों का मंथन करने की अपेक्षा उन्हें पुष्पित एवं पल्लवित करने का प्रयास कर रहा है। कन्या के प्रति सभ्य समाज की अवधारणा मध्ययुगीन मानसिकता का प्रतीक है। आज जब नारी आगे बढ़ रही है तो उसे पचा पाना जिन लोगों को अखरता है वे धर्म की दुहाई देकर नारी को वस्त्र पहनने की शिक्षा दे रहे है। क्या नारी के पास मस्तिष्क नहीं या वह स्वयं सही गलत निर्णय लेने की क्षमता नहीं रखती। नारी भी पुरुष की तरह विवेकवान है अतः उसे विशेष प्रकार के पहनावे के लिये बाध्य करना धर्म का सहारा लेकर अनुपयुक्त है।

धर्म ने सत्य को परिभाषित करने का प्रयास किया परन्तु अपने समूह का मोह छोड़ नहीं पाया, संसार का सत्य एक है यद्यपि इस सत्य को सभी स्वीकार करते है, परन्तु अपने को सर्वश्रेष्ठ की होड़ से पृथक् नहीं कर पाये है, इसलिये धर्म के वास्तविक स्वरूप पर स्वयं धर्म ने पर्दा डालने का कार्य भी किया है। प्रकृतिक विविधता सहजता से समझ में आती है क्योंकि इसका कारण सृष्टि के संतुलन को कायम रखना है। प्रकृतिक प्रभाव के कारण मानव की शारीरिक रचना भिन्न–भिन्न रंग एवं आकार में हुई है, परन्तु विवेक के कारण मानव का चिंतन एक ही बिन्दु पर

पहुँचना चाहिये था परन्तु दुर्भाग्य से यह सम्भव नहीं हो पाया। धर्म की उत्पत्ति अपने देश एवं काल की स्थिति के अनुकूल हुई उनका चिंतन सत्य के समीप था परन्तु सत्य से साक्षातकार होने से पूर्व ही धर्म अपने साधन को ही साध्य समझ बैठा। धर्म का वास्तविक स्वरूप यहीं से लुप्त होने लगा एवं धर्म का वाह्य स्वरूप ही वास्तविक धर्म समझा जाने लगा।

धर्म का वाह्य रूप ही आज सर्वत्र दृष्टिगोचर हो रहा है। प्रकृति द्वारा प्रदत्त देह की वास्तविकता को नजर अंदाज कर देह के द्वारा धर्म का प्रदर्शन किया जा रहा है। देह प्रकृति के नियम से बद्ध है देह के धर्म से वास्तविक धर्म को समझा नहीं जा सकता। वास्तविक सत्य का बोध आत्म शुचिता द्वारा ही सम्भव हो सकता है। आत्मा को पवित्र किये बिना मानव, मानव नहीं हो सकता। जब तक मानव, मानव में भेद कायम रहेगा तब तक धर्म भी वास्तविक सत्य से परे होगा। संसार का शाश्वत सत्य यह है कि मानव सिर्फ मानव है।

आज इस बात की आवश्यकता है कि धार्मिक कट्टरता की अवधारणा को त्याग कर, स्वर्ग नर्क के सपने से परे, इस भूतल को स्वर्ग बनाने हेतु एक ऐसे वास्तविक धर्म की स्थापना करे जहाँ मानव–मानव में भेद न हो। सबको समान अवसर मिले नारी को पर्दा के लिये विवश न किया जाए। वास्तविक धर्म वही हो सकता है जो हर स्थिति में सत्य को स्वीकार करे। सत्य को धारण करने से ही जीवन में शुचिता, पारदर्शिता, दूरदर्शिता का आगमन होता है एवं हमें वास्तविक धर्म का बोध होता है। जिसे वास्तविक धर्म का बोध हो जाता है उसका धर्म मानव धर्म हो जाता है। मानव धर्म ही हमारा वास्तविक धर्म है जो हमें प्रत्यक्ष दिखायी दे रहा है अपने ज्ञान से जिसकी हमें पुष्टि हो रही है वही हमारा धर्म है। हम अपने चिंतन को जागृत करें, आत्ममंथन करने पर इस सत्य की अनुभूति सहजता से हो जायेगी। धर्माचर्यो की बातों को सुने पर उसे ही ग्रहण करे जिससे समस्त मानवों का कल्याण हो। जब हम मानव जाति के कल्याण हेतु सोचेंगे तो हमारा चिंतन संकीर्णता से मुक्त होकर हमें पवित्र कर देगा। इस चरम की अनुभूति कर लेना ही जीवन का परम उद्देश्य है। जिस मानव ने इस सत्य को अपना लिया वह ही वास्तव में धार्मिक एवं मुक्ति का अधिकारी है।

■ ■ ■

आनन्द की खोज

संसार का हर प्राणी आनन्द की खोज में भटक रहा है लेकिन हर व्यक्ति का आनन्द पृथक्–पृथक् है इसलिए यह निर्णय करना कठिन है कि आनन्द है कहाँ?परन्तु यदि इस संसार में आनन्द न होता तो उसकी तलाश ही न शुरू हुई होती इसलिए यह तो मानना ही पड़ेगा कि आनन्द है। अब देखना यह है वह निवास कहाँ करता है। सृष्टि के आरम्भ से ही मानव सुख और अधिक सुख पाने के लिए बेताहाशा दौड़ रहा है। यह बात भी दीगर है कि वह कभी संतुष्ट नहीं हो पाया है।

आनन्द है क्या यद्यपि इसकी सटीक परिभाषा दे पाना कठिन है फिर भी प्रयास तो किया ही जा सकता है। जिस वस्तु से हमें सुख मिलता है वही वस्तु दुःख का कारण बन जाती है। जिस व्यक्ति का अभिषंग करके हृदय अतिरेक आनन्द सागर में तैरने लगता है वही व्यक्ति कष्ट का कारण भी बन जाता है। व्यक्तियों एवं वस्तुओं के हूबहू रहने पर भी सुख एवं दुःख परिवर्तित होते रहते है इससे सिद्ध होता है कि सुख व्यक्ति या वस्तुओं में नहीं अपितु उनकी अनुकूलता एवं प्रतिकूलता से भाषित होता है। तापमान घटने एवं बढ़ने से शीत ताप की अनुभूति होती है।

व्यक्ति एवं वस्तुओं द्वारा मिलने वाला सुख इन्द्रियों को पल्लवित कर देता है इन्द्रिया इनके आगोश में शिथिल हो जाती हैं इस स्थिति में जो हमें अनुभूति होती है सामान्य भाषा में मजा कहा जाता है। इसी मजा को केन्द्र बिन्दु बनाकर जीवन की परिधि का निर्माण शुरू होता है परन्तु, यह मजा जब बेमजा हो जाती है तो फिर इन्हीं से हमें दुःख मिलने लगता है। व्यक्ति इसका समाधान बुद्धि बल से करता है और इन पर विजय के उपरांत फिर इन्हीं में आनन्द को खोजने लगता है। परिवर्तन सिर्फ इतना होता है कि वह इन्हें बदल देता है।

इन्द्रियों द्वारा प्रदत्त सुख का अनुभव मन करता है और मन इस सुख के लिए सदा आतुर रहता है इसीलिए वह निरन्तर योजनाओं का निर्माण किया करता है। जब उसकी योजना सफल होती है तो वह मदमस्त हो जाता है इस स्थिति में मन योजनाओं से मुक्त हो जाता है दरअसल मन की मुक्त अवस्था ही आनन्द है। परन्तु यह स्थिति दीर्घ जीवी नहीं होती इसका अंत होते मन पुनः योजनाओं का सेतु निर्माण करने लगता है। जो चीज मन के अनुकूल होती है उससे मन को सुख मिलता है और मन उसे सदा अपने अनुकूल बनाने का उपक्रम करता रहता है परन्तु अपने प्रयास में वह सदा सफल नहीं होता। मन जिस व्यक्ति को लेकर अपने अंदर खाका बनाता है वह उसमें फिट नहीं होती तब मन उसे तराशने का प्रयास करता

है। दूसरा व्यक्ति इस काँट–छाँट से तिलमिला उठता है क्योंकि उसके अंदर भी मन होता है इस कारण आकर्षण फीका पड़ने लगता है। किसी व्यक्ति वस्तु का आकर्षण ही हमें उसकी तरफ खींचता है। परिवर्तनशील संसार में आकर्षण भी धीरे–धीरे फीका होगा परन्तु जब इसमें एकाएक परिवर्तन होता है तो हमें बेहद दुःख होगा।

जिस व्यक्ति या वस्तु से हमें आकषर्ण होता है हम उसे पाने के लिए व्यग्र हो जाते है यह चाहत हमें दीवाना बना देती है। यह चाह जितनी प्रबल होगी वस्तु उतनी अनिंद्य दिखेगी। कभी–कभी ऐसा लगता कि उससे मनोरम जगत् में कुछ है ही नहीं, परन्तु जब वह चीज हमें मिल जाती है तो यह चाह भी घटनी शुरू हो जाती है। तेल समाप्त होते ही दीपक बुझ जाता है ठीक इसी तरह आकषर्ण खत्म होते प्यार भी मुरझा जाता है। आकर्षण का कार्य बत्ती एवं तेल को इकट्ठा करके जला देना है जब दीप जल जाय तो उसे अधिक समय तक जलाने के लिए तेल की आवश्यकता होगी। जो लोग इस तथ्य को समझेंगे उनका प्यार निश्चित दीर्घ जीवी होगा। परन्तु हम लाख कोशिश कर ले समय अपना कार्य करेगा समय का कार्य हर वस्तु को काटना है और इस चोट से संसार में कोई अछूता नहीं रह सकता।

दुःख का एक यह भी कारण है कि हम जिस व्यक्ति से प्यार करते है वह कोई जड़ वस्तु नहीं मन उसमें भी होता है, इसलिए उसकी भी अपनी उमगें होगी। यद्यपि इन्हें समझ कर व्याधि को दबाया जा सकता है परन्तु इसका सफल इलाज सम्भव नहीं। इन्द्रियों के सुख एक जैसे होकर भी एक जैसे नहीं होते, जैसे जल तो सभी पीते है परन्तु कोई ठण्डा तो कोई कम ठण्डा इस कारण दो प्रेमियों का सुख पृथक्–पृथक् हो जाता है।

सर्वप्रथम आनन्द हमें इन्द्रियों द्वारा प्राप्त हुआ लगता है परन्तु इसकी अनुभूति मन द्वारा होती है। जिस चीज को छूकर मन विभोर हो जाता था उसे छूने के लिए कर काँप क्यों जाते हैं मन में इतना बड़ा परिवर्तन आखिर क्यों हो जाता है? इसलिए कि मन व्यक्ति या वस्तुओं से अपने ढंग से लिपटना चाहता है। परन्तु जड़ वस्तु सौन्दर्य हीन होकर दुःख का कारण बनती है तो चेतन अपनी चेतना के कारण अपना आकार घटाती–बढ़ाती रहती है। जल की सतह वायु के झोकों से जिस तरह उथल–पुथल करती रहती है उसी तरह व्यक्ति एवं वस्तुओं से मिलने वाला सुख छिन्न–भिन्न होता रहता है स्यात् इसी कारण जीवन को सुख दुःख का संगम कहा जाता है, परन्तु जो सुख–दुःख के थपेड़ों में फँस जाते है वे आनन्द के अथाह सागर में गोता नहीं लगा सकते। सुख–दुःख की दोलनगति में हमारा सारा जीवन बिखर जाता है।

मान लिया सुख व्यक्ति एवं वस्तुओं से मिलता है इसीलिए हम इन से खेलते रहते है परन्तु हम हारना नहीं चाहते जब हार होती है तो दुःख होता है। दरअसल हम यह खेल अपने ढंग से खेलना चाहते है नियम को महत्त्वपूर्ण स्थान नहीं देते इसलिए कि इस खेल में कोई सार्वभौमिक नियम लागू नहीं हो सकता। वस्तुएँ जिस तरह की हैं हमें उन्हीं से खेलना चाहिए परन्तु हम ऐसा नहीं कर पाते इसलिए दूसरी वस्तु जो हमें सुन्दर दिखी हम उससे खेलने को आतुर हो जाते है। जब उस वस्तु को अपने हाथ में लेते हैं तो वह भी शनैः–शनैः फिसल जाती है।

असल में वस्तुओं से सुख नहीं अपितु वस्तुओं से बनाने वाले बिंब द्वारा जो भावनाएँ जागृत होती है उन्हीं के द्वारा मन को सुख मिलता है। महत्त्वपूर्ण यह बिंब होता है क्योंकि सुख–दुःख का आधार यही निर्माण करता है यदि वस्तुयें न हो तो यह अपना कार्य नहीं कर सकता। बिम्ब ही वस्तुओं के नये–नये रूप निर्माण में भी सहायक होता है। वस्तुओं द्वारा बिम्ब का निर्माण होता है और बिंब द्वारा वस्तुएँ स्वरूप से परिवर्तित होती है। इस कारण संसार का प्रति क्षण परिवर्तन होता रहता है यह परिवर्तन ही संसार को सुन्दर बनाए हुये है।

वस्तुओं द्वारा मिलने वाला सुख सतही स्तर का होने के कारण थोड़ी भी हलचल से प्रभावित हो जाता है। सरोवर में पड़ते ही कंकड़ जल की सतह को विकृत कर देता है। धीरे–धीरे जल पुनः शान्ति स्थिति में आ जाता है। आश्चर्य तो इस बात का है कि मन कारण की तह में जाना ही नहीं चाहता अपितु पुनः कार्य में संलग्न हो जाता है। कार्य से जो बार–बार परिणाम मिलता है वह अनुकूल होने पर सुख तथा प्रतिकूल होने पर दुःख देता है। दुःख से मुक्त होने का संघर्ष तो सभी करते है परन्तु उसका कारण भूल जाते है।

कोई भी रिश्ता चाहे कितना अंतरतम हो अंतरंग नहीं हो सकता हम किसी को चाहे कितना ही प्यार करे पर उससे सदा सुख नहीं मिलेगा। हम जो चित्र बनायेगें उसमें हमारी पसन्द एवं विचार ही दृष्टिगोचर होंगे। दूसरा व्यक्ति उससे पूर्णतया संतुष्ट नहीं हो सकता इसलिए दम्पत्तियों को सामंजस्य बनाये रखने का उपदेश दिया जाता है। सच भी है कि सामंजस्य बनाकर दम्पत्ति जीवन को मधुर बनाया जा सकता है। परन्तु आनन्द की खोज करने वालों को यहाँ निराशा ही मिलेगी।

कवि एवं कलाकार यद्यपि व्यक्ति एवं वस्तुओं के आकर्षण से मुक्त नहीं होते तदापि उनके आनन्द का खोज सतही स्तर का नहीं होता। व्यक्ति एवं पदार्थ से प्राप्त होने वाले सुख के प्रवाह में बहने की अपेक्षा वे इस धारा को अपनी तरफ लाने के लिये नहर खोदने का प्रयास करते है। जो इस प्रयास में सफल हो जाते है वे व्यक्ति कवि एवं कलाकार हो जाते है। वस्तुओं एवं व्यक्तियों का सौन्दर्य कवि को

भी प्रभावित करता है। इनके सानिध्य की उत्कण्ठा उसके मन में भी बलवती होती है परन्तु वह इनका उपयोग करना नहीं चाहेगा क्योंकि उसके आनन्द की खोज सतह से थोड़ी नीचे हो जाती है। इस स्थिति में उसे सुख वस्तुओं में तो कभी वस्तुओं से परे दिखायी देने लगता है। जब उसे सुख वस्तुओं में दिखायी देता है तो वह इनको लेकर कल्पना की उड़ान भरने लगता है। जिस व्यक्ति से कवि प्रभावित होता है उससे वह कल्पना में साक्षात्कार कर लेता है। सुख की अनुमति तो मन ही करता है। मन की अनुभूति ही कला है।

अन्न की कल्पना से उदर नहीं भरता न ही जल की कल्पना से प्यास बुझ सकती है यह ध्रुव सत्य है। तो क्या कल्पना का आनन्द औचित्य विहीन है, नहीं जीवन निर्वाह के लिए प्रकृति का जो चक्र है उसका आनन्द से कोई वास्ता नहीं हो सकता। मनुष्य के अलावा धरती पर असंख्य प्राणी है क्या वे स्वाद को खोज रहे है। मानव इस भूतल पर सिर्फ जीने के लिए नहीं आया वह यहाँ किसी विशेष उद्‌देश्य हेतु ही आया है परन्तु इसे समझना कठिन है। जहाँ तक अनुमान लगाया गया उसके आधार पर कोई एक सर्वमान्य मत नहीं है। परन्तु यह तो निश्चित है कि मनुष्य सदा आनन्द को खोज रहा है, इसी खोज ने संसार में अनेकों अविष्कार किये है।

मन की संतुष्टि ही आनन्द है। इन्द्रियों के संसर्ग से होने वाला सुख मन के नियन्त्रण से परे होता है। इसे अपने नियन्त्रण में लाने के लिये मन योजनाओं का निर्माण करता है। प्रथम स्थर पर मन यह कार्य इन्द्रियों द्वारा करवाता है। कवि का आनन्द दूसरी श्रेणी में आता है मन यहाँ योजनाओं का निर्माण जारी रखते हुये कल्पना का आश्रय ले लेता है। इस स्थिति में न तो वस्तुयें होती है न ही वह व्यक्ति जो मन को प्रभावित करता है हाँ अब इनकी जगह पर इनके बिम्ब कवि मनोकूल सृजित कर लेता है और इन्हीं बिम्बों में वह आनन्द की तलाश करने लगता है।

व्यक्ति द्वारा मिलने वाला सुख भावना के आहत होते बिखर जाता है परन्तु इसके द्वारा बनने वाले बिम्ब से मन को जो आनन्द मिलता है उस पर मन का पूर्ण नियन्त्रण होता है। यद्यपि यह बिखरता नहीं परन्तु कपूर की तरह शनैः–शनैः उड़ जाता है। अतः उसे पाने के लिये मन को बार–बार कल्पना लोक में विचरण करना पड़ता है। इन्द्रियों द्वारा प्रदत्त एवं कल्पना द्वारा सृजित आनन्द का केन्द्र बिन्दु मन ही होता है। मन की अनुभूति ही आनन्द है यह अनुभूति जितनी बड़ी होगी सुख भी उतना बड़ा होगा। संघर्ष के बाद मिली सफलता के सुख से बड़कर कल्पना के सुख में तन्मय कलाकार कालजयी रचना का निर्माण कर अमर हो जाता है। इसलिये इन्द्रिय आनन्द से कल्पना का आनन्द श्रेष्ठ है।

संयासी, योगी एवं दार्शनिक का आनन्द विलक्षण होता है सामान्य जन की समझ में सहजता से नहीं आयेगा। व्यक्तियों एवं पदार्थों से बनने वाले बिम्ब से भी परे असीम शून्य में आनन्द की खोज इनके जीवन का लक्ष्य होता है। जब तक मन वस्तुओं एवं उनसे बनने वाले बिम्बों में आसक्त रहता है तब तक उसका तारतम्य टूटता जुड़ता रहता है। इस स्थिति में सुख के बाद दुःख का आना निश्चित है। जब तक पूर्णतया दुःख से मुक्ति नहीं हो जाती तब तक आनन्द की प्राप्त नहीं हो सकती।

प्रथम तल पर आनन्द को करो से पकड़ा जाता है उसका भार जब बर्दाश्त नहीं होता तो वह छूट जाता है। दूसरे स्तर पर आनन्द को हाथों से नहीं मन से पकड़ा जाता है परन्तु मन को जब उससे अधिक मूल्यवान चीज दिख जाती है तो वह उसे छोड़ देता है। इस तरह मन भटक जाता है और बार–बार अति सुन्दर के चक्कर में चक्कर लगता रहता है।

जो व्यक्ति इन दोनों से परे आनन्द का खोज करता है उसके लिए समस्त ब्रह्माण्ड छाया–सा प्रतीत होता है। वह अच्छी तरह जानता है कि इस छाया को पकड़ा नहीं जा सकता, इसलिए वह व्यर्थ का प्रयास ही नहीं करता। हाँ इस छाया के मूल कारण को जानना चाहता है अस्तु ब्रह्माण्ड की कोई भी वस्तु उसके मन में कौतूहल उत्पन्न नहीं कर पाती। प्रकाश के बिना छाया को देखा नहीं जा सकता। प्रकाश की दिशा बदलते ही छाया भी बदल जाती है परन्तु बिना पदार्थ के छाया भी नहीं हो सकती। ज्ञानी के लिए संसार छाया सदृश है इसलिए वह छाया में नहीं अपितु इस छाया को निर्माण करने वाले तत्त्व में आनन्द की खोज करता है। इस अनुभूति को शब्दों में बद्ध नहीं किया जा सकता, क्योंकि जो समस्त शक्तियों के सृजन का कारण है उसे सीमित परिभाषा में कैसे बाँधा जा सकता है। परन्तु यह शाशत्व सत्य है कि इस आनन्द को प्राप्त करने वाला सदा–सदा के लिए तृप्त हो जाता है।

मन का संतुष्ट हो जाना ही सुख है। मन को संतुष्ट करने के लिए मानव अपनी शक्तियों का विकास करता रहा है। बहुत कुछ कर लेने के बाद भी वह सुखी नहीं हो पाया है। निश्चित ही सुख मन की वस्तु है इसे बाहरी पदार्थों से नहीं पाया जा सकता। देह की संरचना जिन तत्त्वों से होती है वे जड़ है इस कारण इनका मोह जड़ पदार्थों से बना रहता है। देह के लिए प्रकृति ने जो नियम बनाये वे सही है यदि ये निर्बाध गति से न चले तो प्रकृति का संतुलन बिगड़ जायेगा।

जिन्हें यात्रा करना है उन्हें साधन की आवश्यकता होगी हम कोई भी साधन अपना सकते है इसके लिए हर प्राणी स्वतंत्र है। लेकिन हमें जाना कहाँ है यह तो

हम ही निर्धारित कर सकते है। गिरते तो सभी है परन्तु उसके कारण को सभी नहीं खोजते बिना कारण को समझे सुधार नहीं हो सकता। संसार है तो इसका कारण भी होगा। संसार से मिलने वाला सुख अंजुली में भरे जल सदृश है इसका बिम्ब भी सदा–सदा के लिए तृप्ति नहीं दे सकता। यदि कोई चाहता है कि आनन्द सदा के लिए मिल जाय तो उसे संसार में नहीं अपितु संसार के मूल कारण में आनन्द खोजना होगा।

■ ■ ■

यथार्थ

शब्द में अर्थ छिपा होता है परन्तु समझ विहीन मानव के लिए शब्द–शब्द ही रह जाता है। पाषाण में भी अग्नि छिपी होती है परन्तु इसे प्रज्ज्वलित करने के लिए घर्षण करना पड़ेगा। इसी तरह जीवन का भी मर्म होता है जिसे समझे बिना किसी को भी यथार्थ का बोध नहीं हो सकता। सृष्टि के आरम्भ से आज तक मानव मस्तिष्क का विकास होता रहा परन्तु जीवन का अर्थ क्या है स्पष्ट नहीं हो पाया। स्यात् इसीलिए इस विषय पर विभिन्न दृष्टिकोण है। दृष्टिकोणों के विभिन्न आयाम होने के उपरान्त मात्र बिन्दु ही आकषर्ण का केन्द्र है क्योंकि सारे कोण यहीं बनते है। मृत्यु जीवन का अन्त नहीं अपितु मृत्यु के बाद ही यह पता चलता है कि क्या अमुख ने सचमुच जीवन जिया था। यदि कोई सचमुच जीवन जिया है तो उसके चिन्ह कभी नहीं मिटेगें।

जीवन से चिन्ह वही छोड़ पाता है जो अपने जीवनकाल में यथार्थ को समझ लेता है। जिसे यथार्थ का बोध हो जाता है वह अपने जीवन को व्यर्थ जाने नहीं देता। देह तो उधार में मिली एक वस्तु है इसको पाकर जो इसका उपयोग कर लेता है वह स्वयं तो धन्य हो ही जाता है साथ–ही–साथ उसके सानिध्य में रहने वाले कृतार्थ हो जाते है। सुमन अपने सौन्दर्य से पौधे को भी सुन्दर बना देता है पुष्प से प्रेम करने वाले काँटों की परवाह नहीं करते। फिर हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि फूल एवं काँटे एक ही तरु में रहते हैं। सोचो यदि काँटे न होते तो क्या पुष्प वास्तव में इतना मंजुल होता।

इस जगत् में काँटों का भी अपना महत्त्व है संसार में ऐसा कुछ भी नहीं जो उद्‌देश्य हीन हो, सब का अपना–अपना प्रयोजन है। जगत का यह स्वरूप इतना विलक्षण है कि इसकी तह तक पहुँच पाना सबके लिए संभव नहीं। इसीलिए यह प्रश्न बार–बार हमारे सामने आता है कि संसार में सत्य क्या है?आत्मबल आस्था ईश्वर की एवं प्रिय का स्नेह जीवन को परिष्कृत कर लक्ष्य तक पहुँचता है। परन्तु किसी भी सांसारिक प्राणी का स्नेह पूर्णतया स्वार्थ से मुक्त नहीं हो सकता इसलिए संसार में जिनको यथार्थ की खोज है और अपने अभीष्ट तक पहुँचना चाहते है, उन्हें संसार का सत्य भी स्वीकार करना होगा।

संसार जिस तरह दिखायी पड़ रहा है असल में ऐसा है नहीं परन्तु इसे समझने के लिए ज्ञान की आवश्यकता होगी। ज्ञान मिलेगा कहाँ से? इस जगत् में ज्ञान अत्यन्त दुर्लभ है। श्रम, पैसा बाहुबल किसी में भी इतना सामर्थ नहीं की ज्ञान को अपने वश में कर ले क्योंकि मानव ज्ञान को नहीं, अपितु ज्ञान मानव को अपने

अधीन कर लेता है। जो ज्ञान के अधीन हो जाता है वह विलक्षण हो जाता है इसलिए सामान्य जन की दृष्टि में वह उपहास का पात्र बन जाता है। यथार्थ का बोध करा देने वाले ज्ञान का अनुसंधान करने वाले ऋषि–मुनि एवं संतों को संसार में घृणित जीवन जीना पड़ा है संसार का विरोधाभास ही इसका कारण है।

अच्छाई करने वाले को परिणाम में बुराई मिलेगी जिस तरह विरोधी राजनीतिक दल सरकार के उचित निर्णय का विरोध करना अपना कर्त्तव्य समझते है ठीक यही मानसिकता सर्वत्र व्याप्त हो गयी है, इसलिए समाज में मूल्यों का निरन्तर हास होता जा रहा है। परिधान ही आदमी का पहचान बन गया है जिन्हें अपने देह का होश न हो उन्हें मदहोश नहीं कहा जा सकता क्योंकि मदहोश को होश आ जाता है। यदि कोई अनजाने में गलती कर रहा हो तो सुधार की गुंजाइश बनी रहती है परन्तु यदि कोई जानबूझकर गलती कर रहा हो तो उसे समझाया नहीं जा सकता। आडम्बर यदि इज्जत का प्रतीक बन जाये तो भला अपनी प्रतिष्ठा कौन खोना चाहेगा।

मान–सम्मान प्रतिष्ठा में ऐसा क्या आकर्षण है जिसको पाने के लिए सभी व्याकुल रहते है। अपमान की जरा–सी अनुभूति होते ही व्यक्तित्व के सामने कुहासा छा जाता है। छोटा–सा छिद्र जैसे नाव को डुबा देता है उसी तरह एक कटुक वचन जीवन के सारे उपकार पर पानी फेर देता है। मानव के मन में वही बात टिकती है जिससे उसको प्रतेक्ष लाभ मिल रहा हो। देह के बिना मानव अध्यात्मवाद को प्रतिष्ठापन नहीं कर सकता। देह ही चिंतन की वह धुरी है जिसके द्वारा हम यथार्थ रूपी केन्द्र की तह तक पहुँच सकते हैं। परन्तु नेत्र सब कुछ देखते हुये भी अपने को देख नहीं सकते, अस्तु इंद्रिय ज्ञान सीमित है। शीशे के जार में बन्द चीनी का स्वाद ऊपर से चाटकर नहीं मिल सकता। ढक्कन खोलने का उपक्रम करना ही पड़ेगा।

प्यास लगने पर पानी की याद आती है जल पीने के बाद प्यास मिट जाती। सिर्फ प्यास मिटा लेना ही जीवन जीने के लिए आवश्यक नहीं। दीर्घ जीवन जीने की कामना रखने वालों को यह भी जान लेना जरूरी होता है कि जल प्रदूषित तो नहीं है। नग्न चक्षुओं से यह निर्णय नहीं हो सकता इसीलिए इन्द्रिय ज्ञान भ्रामक होता है। भू पर गिरकर कंदुक उछलती है इसलिए की धरती भी उस पर बल लगाती है। कटु बोलने पर ठीक यही प्रतिक्रिया होती है। वृत्त की परिधि पकड़े मानव स्वभाव ईर्ष्या–द्वेष के प्रवाह में घूमता रहता है सच है मानव जीवन भाव एवं संवेग से संचालित होता है।

विरोधाभास ने संसार में अनुसंधान का पथ भी प्रकाशित किया है। मनोविज्ञान मानव–जीवन के संचालन का रहस्य प्रकट कर देता है परन्तु जिस प्रकार सागर में तैरने वाला व्यक्ति एक दिन डूब जाता है उसी तरह भाव संवेग से संचालित जीवन

तट तक नहीं आ सकता। संसार का यह सत्य एक दिन उन्हें स्वीकार करना ही पड़ेगा जो इस जगत् में यथार्थ को खोजना चाहते हैं। कुछ लोग अपने सुख से अधिक सोचकर अपने सुख में खलल डालना नहीं चाहते। इसीलिए दूसरे का सुख उन्हें दुःख देता है। ऐसे लोग फल खाने हेतु वृक्ष ही काट देते हैं। भोग विलास एवं संतान के लिए धन संग्रह ही इनके जीवन का लक्ष्य होता है इसके लिए वे भाई का गला काटने में संकोच नहीं करते।

संसार में इतनी विचित्रता है कि इससे निकल कर यथार्थ का चिंतन करना भी बहुत कठिन है। बिरले ही लोग होते है जो कभी–कभार यह सोचते है कि संसार स्थायी निवास नहीं है। जब किसी मानव में यह विचार उठता है तो उसकी सोच पर इसका व्यापक प्रभाव पड़ता है। तब उसकी दृष्टि जो बाहर देखती आयी वे दृश्य वही होकर भी वैसे नहीं रह जाते। वैसे भी इस संसार का रंग प्रतिफल बदलता रहता है परन्तु इस परिवर्तन को अपने अनुकूल करने के लिए लोग चश्मा लगा लेते है जरूरत है चश्मा उतरने की।

मानव वैसा ही बन जाता है जैसा उसका दृष्टिकोण होता है। विचारों को परिष्कृत करने में जिस सोच की आवश्यकता होती है वह हमें इसी दृष्टिकोण से प्राप्त होता है। परन्तु यह दृष्टिकोण किसी आवरण के अधीन नहीं होना चाहिए। जो निर्णय स्वार्थ के वशीभूत होते हैं उनका फल अक्षय नहीं हो सकता। जो कल थे आज नहीं हैं जो आज हैं कल नहीं रहेंगे यह क्रम निरन्तर चलता रहता है इसी से हमें यह दृष्टिकोण मिलता है कि संसार में हम कुछ करने आये हैं रहने नहीं। जो यहाँ रहने के उपक्रम में मग्न हो जाता है वह यथार्थ से दूर हो जाता है जो यहाँ कुछ करने आया है वह धन्य हो जाता है।

हम इस संसार में कुछ करने आये हैं यह धारणा ही मानव को महामानव बना देती है। ऐसे लोगों से संसार का उपकार होता आया है, इतिहास इस बात का साक्षी है। संसार में अविष्कार, अनुसंधान या सेवा कार्य जिन लोगों ने किया वे सब इस श्रेणी के महापुरुष थे उनके ज्ञान के बल पर विश्व इतनी प्रगति कर सका है निःसन्देह उन्हें यथार्थ का बोध था। जब तक हमें यथार्थ का बोध नहीं होगा तब तक हमारे अन्दर ज्ञान प्रवेश नहीं कर सकता। अनेकों संत महात्माओं से प्राप्त होने वाला ज्ञान अखिर क्या कारण है अपना प्रभाव दिखा नहीं पाता।

बरतन में छिद्र हो तो दूध ठहर नहीं सकता बरतन का छिद्र तो बन्द कर सकते है परन्तु हमारे अन्दर जो विकार है उसे निर्मूल किये बिना गुरु मंत्र लेने से किसी का कल्याण नहीं हो सकता। गुरु दिशा दे सकता है चलने की शक्ति नहीं। आत्मज्ञान के द्वारा वह शक्ति सहजता से मिल जाती है जिसके बल पर महान कार्य सम्पन्न हो पाते है। आत्मबल ही सफलता का सबसे बड़ा सम्बल है। हम क्या कर

सकते है जितना हम जानते है उतना कोई नहीं। इस तथ्य को समझकर जो अपने बुद्धि का प्रयोग करता है वह कभी असफल नहीं हो सकता।

आवश्यकता इस बात की है कि हम स्वयं को पहचाने देह नहीं विराट ब्रह्म के अंश हैं हम, जो कर रहे है उसकी प्रेरणा से। हमारे द्वारा वह अपना ही कार्य करवा रहा है हम तो निर्मित्र मात्र है। जब मन में यह विवेक उत्पन्न हो जाता है तब हमारा जीवन परिपूर्ण हो जाता है। पर यह ज्ञान स्थिर रहे इसके लिए साधना करनी पड़ेगी। धूप–छाँव की तरह मन में भाव बनते बिगड़ते रहते हैं साधना विहीन मानव इन पर नियन्त्रण नहीं पा सकता। हमारे पास ऐसे अनुभव सुरक्षित हैं जिनके द्वारा हम स्वयं को देख सकते हैं। हम जो चाहते हैं चाह कर भी वह नहीं कर पाते ऐसा इसलिए होता है कि हमारा ज्ञान सीमित है।

यथेष्ट ज्ञान वही कहा जा सकता है जो हमें यथार्थ का बोध करा देता है जिस मानव को यथार्थ का बोध हो जाता है उसके बंधन स्वतः ढ़ीले पड़ जाते है। संसार उसका त्याग करे इससे पहले वह संसार का त्याग कर देता है। संसार का जिसने त्याग कर दिया उसे यह जानने की आवश्यकता नहीं होती। वह स्वयं जीते जी मुक्त हो जाता है, मोक्ष की यह अनुभूति जीवन में कर लेना ही मानव जीवन की सार्थकता है। देह नाव है जिस पर बैठकर जीवात्मा यात्रा आरम्भ करती है। यह यात्रा अनंत है इन्द्रियों एवं बुद्धि के द्वारा इस यात्रा के अंतिम पड़ाव का ज्ञान प्राप्त नहीं किया जा सकता। जो मानव इस तथ्य को समझ लेता है वह इनके दायरे से निकलने का प्रयास करता है। क्योंकि वह इस सत्य से भलीभाँति परिचित हो जाता है कि यदि समय रहते किनारा न प्राप्त कर लिया गया तो नाव का मझधार में डूबना निश्चित है।

भौतिकवाद की सार्थकता नकारना नितांत हास्यास्पद है यह विवाद का विषय नहीं अपितु समन्वय का क्षेत्र है, गंगा यमुना का संगम है। दोनों एक दूसरे के पूरक होने के बावजूद अलग–अलग अपनी पहचान बना रखा है। देह के लिए जिस तरह रोटी अनिवार्य है उसी तरह आत्मा के लिए ज्ञान। जब दोनों एक साथ मिलते है तभी मनुष्य का वास्तविक जन्म होता है। संसार का त्याग मन से करना श्रेयकर है यदि मन वासनाओं से मुक्त हो जाय तो देह का शिथिल हो जाना स्वाभाविक है। वासनाओं का दमन करके उन पर विजय पाने की अपेक्षा उन्हें दिशा देना गलत नहीं है, परन्तु मन पर इतना नियन्त्रण रहना जरूरी है कि वह इस प्रवाह में भी अपना अस्तित्व न भूले। यदि आत्मा स्वयं को देह मानने लगेगा तो यथार्थ से भटक जायेगा।

देह को स्वच्छ रखना उत्तम स्वास्थ्य के लिए आवश्यक है स्वास्थ्य विहीन व्यक्ति साधना नहीं कर सकता। शारीरिक स्वच्छता का यही अर्थ है। इत्र साबुन

तेल आकर्षक वस्त्र आभूषण आत्मा का उत्थान नहीं कर सकते। आत्म उत्थान अन्तर्बोध द्वारा ही हो सकता है। अन्तर्बोध द्वारा जो ज्ञान प्राप्त होता है वह इन्द्रियों के भ्रामक एवं कल्पित ज्ञान से पृथक होता है यह ज्ञान स्वयं सिद्ध होता है इसके लिए किसी प्रमाण की जरूरत नहीं होती क्योंकि इसकी निश्चयात्मकता इसमें निहित होती है।

लच्छेदार बात करने वालों को सम्मान मिलता है त्वरित लाभ के लिए दिखने वाला प्रभाव इसका कारण है। प्रभाव अमिट तभी हो सकता है जब हृदय तुला पर तौल कर स्वीकार किया जाय। स्वच्छ हृदय ही सही निर्णय करने की क्षमता प्राप्त कर सकता है मनस्थल को स्वच्छ रखने के लिए उपक्रम करना पड़ेगा बिना तपस्या के हृदय निर्मल नहीं हो सकता। जगत की विशेषता है कि यहाँ सब कुछ वर्तुल है इस चक्र में ही घूमते रहना जीवन की सार्थकता नहीं। जो इसे तोड़कर अलग वजूद बना लेने की क्षमता रखता है वही यथार्थ को समझ सकता है।

संसार सत्य नहीं है परन्तु यह भ्रम जीवनपर्यन्त नहीं टूटता मृत्यु को जीवन का अंत समझने वालों के लिए संसार ही यथार्थ है। यह धारणा अमरता में आस्था नहीं रखती परन्तु ऐसे विचारक इस सत्य को अस्वीकार नहीं कर सकते कि जिन लोगों का नाम संसार में है क्या वे अमर नहीं है। एक निश्चित परिभाषा द्वारा सत्य को परिभाषित नहीं किया जा सकता। तत्त्व की प्रमाणिकता भले ही दर्शनशास्त्र सिद्ध न कर पाये परन्तु वह जिस बिन्दु पर चिंतन करता है वह कोरी कल्पना नहीं हो सकता। जगत् में स्थायी सुख नहीं यह ध्रुव सत्य है। यह सोच जब उर में स्थान बना लेगी तो इसका प्रभाव विचारों को परिष्कृत करना शुरू कर देगा।

परिष्कृत विचारों के द्वारा यथार्थ का बोध हो जाता है, परन्तु जिन्हें स्वयं पर भरोसा न हो उन्हें भक्ति का सहारा लेना अन्यतम् है जहाँ पर दोनों का योग हो जाता है वहाँ पर प्रकाश हो जाता है। जिस मानव के हृदय में यह प्रकाश उत्पन्न हो जाता है उसे सब कुछ स्पष्ट दिखायी देने लगता है। सबसे महत्त्वपूर्ण बात यह है कि यह दीप स्वयं जलाना होगा तभी यथार्थ का बोध होगा। प्रकृति ने मानव को सब कुछ सुलभ कर दिया है आवश्यकता इस बात की है कि हम पारखी बन सकें।

■ ■ ■

राष्ट्रहित

श्वेत श्याम अभ्रों से आच्छादित अंतरिक्ष, मस्त गज के समान चिंघाड़ते मेघ, समीर के प्रबल झोकों से नृत्य करते तरुओं के माध्यम से वर्षा सुन्दरी अपने आगमन का संकेत देती तब समस्त जीव छिपने के उपक्रम में व्यस्त हो जाते। अब तक जो उनके आश्रय वृक्ष थे भयावने लगते। संसार में ऐसा कोई भी प्राणी नहीं जो प्रकृति से डरा न हो, असल में भय ने ही मानव को स्वावलम्बी बनाया है क्षुधा की पूर्ति का कोई–न–कोई तरीका हर जीव निकाल ही लेता है यदि ऐसा न होता तो प्रकृतिक जैव विविधता कायम ही न रह पाती। यह भी सत्य है कि कई प्रकार के जीव जन्तुओं की प्रजाति लुप्त हो गयी है या लुप्तप्राय होने वाली है पर इसका कारण प्रकृति नहीं अपितु स्वयं मानव है।

हाँ मैं मानव की बात कर रहा हूँ जो अपने को सुसभ्य एवं सर्वश्रेष्ठ मानता है। मनुष्य सर्वश्रेष्ठ इसलिए बना कि भय से बचने का वर्त्म उसने खोज लिया। वर्षा के भय से झोपड़ी का जन्म हुआ तो सर्दी के भय से वस्त्र का रोग के भय से औषधि तो हिंसक जानवरों के भय से मानव संगठित झुन्डों में रहने लगा। मानव ने सर्वप्रथम जब इन्द्र धनुष को देखा तब उसे सौन्दर्य का ज्ञान हुआ। अब तक वह केवल बाहर देखता आया था बाहर के वातावरण से वह सुरक्षित हो गया था। भूख प्यास सर्दी–गर्मी से बचाव करने में किसी हद तक वह सामर्थ हो गया था पर इन्द्रधनुष ने उसे रंगों का ज्ञान दे दिया।

रंग ज्ञान ने मानव की कल्पना शक्ति को जागृत कर दिया इसी शक्ति ने अनेकों विषयों को जन्म दिया हर विषय ने अपने स्वरूप को विस्तृत करना आरम्भ किया परिणाम आज सामने है। आज के मानव ने हर क्षेत्र में विकास किया है परन्तु धरती पर अब भी इतनी असमानता है कि मनुष्य एवं पशु में अन्तर करना कठिन है, कहीं–कहीं पर मानव पशु से बदतर व्यवहार करता दिखायी पड़ रहा है मनुष्य के इस रूप को देखकर सभ्यता के विकास की सीढ़ी व्यर्थ लगती है। अरस्तु ने मानव एवं पशु में अन्तर एक शब्द से किया था विवेक। आज इस शब्द का प्रयोग सीमित होता जा रहा है। मानव आज मात्र अपने कुटुम्ब की साधना में व्यस्त हो गया है यद्यपि यह कोई नई परम्परा नहीं है तथापि हम उन परम्पराओं को क्यों घसीटना चाहते है जो मानव विकास के मार्ग में अवरोधन उत्पन्न करती है। विश्व के चिंतकों ने जिनका विरोध किया उनका राजनीतिक संरक्षण किसी भी देश के विकास में बाधक है। सर्वप्रथम हमें विश्व कल्याण की भावना से कार्य करना चाहिए अगर

इससे नीचे गिरे तो राष्ट्रहित को सर्वोपर स्थान दे, क्योंकि इसके नीचे जगह ही नहीं है। राष्ट्रहित का मतलब आप जो भी कार्य कर रहे है उसका प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से संसार हित से सम्बन्ध जुड़ा होता है परन्तु यह इतना सूक्ष्म होता है कि दिखायी नहीं देता। यह धारणा सर्वदा गलत है कि मंत्री, अधिकारी, उद्योगपति या कर्मचारी ही देश का विकास कर सकते है सामान्य व्यक्ति अपना योगदान नहीं दे सकता। जिस तरह प्राकृतिक संतुलन हेतु एक दीमक का योगदान होता है उसी तरह देशहित के लिए हर नागरिक का स्थान सुरक्षित होता है। मजदूर किसान ही नहीं अपितु भिक्षुक एवं विकलांग भी इस कार्य में अपना योगदान दे सकते है।

दुर्भाग्य की बात यह है कि हम सहयोग लेना तो जानते है पर देना नहीं, मैं किसी वस्तु को देने की बात नहीं कर रहा हूँ अपितु आदतों को सुधार कर भी हम देश को बहुत कुछ दे सकते है। झूठी शान शौकत दिखाने की लोगों को आदत होती है यह आदत देश हित में बाधक तो है ही साथ–ही–साथ व्यक्तियों के जीवन को भी प्रभावित करती है। जैसे एक ड्रम में 200 लीटर पानी है पीने वाले 400 लोग हैं विक्रेता भीड़ को देखकर मूल्य बढ़ा देगा। जिनके पास पैसे है वे सुरक्षित करना शुरू कर देंगे परिणाम अधिकांश लोग प्यासे मर जायेंगे। ठीक इसी प्रकार राष्ट्र की सम्पदा का भी दोहन होता है।

आवश्यकता से अधिक संग्रह कई समस्याओं को जन्म देता है पेट में है तो रोग बन कर उभरेगा, घर में है तो सड़ेगा, किसी न किसी तरह उसका नष्ट होना स्वाभाविक है। परन्तु दूसरी तरफ यह संग्रह महँगाई को बढ़ावा देगा जिसका परिणाम गरीबों को भुगतना पड़ेगा। जिस तरह शरीर का भार पैरों पर आता है उसी तरह अमीरों के चोचले गरीबी बढ़ने में सहायक होते है। मेरी बात किसी के गले उतरे या न उतरे पर जो देश हित में अपना योगदान नहीं देते प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से मानवों के जीवन स्तर गिराने में योगदान देते है वे राष्ट्रद्रोही हैं। देश सेवा का मतलब देशहित को सर्वोपरि स्थान देना है इसके लिए यदि हमें कुर्बनी देनी पड़े तो सहर्ष स्वीकार करना चाहिए। यह कार्य निष्ठा से करने वाला व्यक्ति ही राष्ट्रभक्त है।

जो नागरिक देश हित के लिए जागरूक है उसे अपने भविष्य से बढ़कर देश का भविष्य दिखायी देगा। जिन्हें देश हित प्यारा है वे ही वास्तविक भारत माँ के सपूत हैं। राष्ट्र प्रेम उन्माद नहीं अपितु उत्कर्ष का भाव है जिसके लिए हँसते हुये सैनिक प्राणों की आहुति दे देते है। मृत्यु तो निश्चित है परन्तु ऐसी मृत्यु किसी भाग्यशाली को ही नसीब होती है जिसके आहुति के धुँएँ से सारा राष्ट्र महक जाता है। राष्ट्रप्रेमी के लिए मृत्यु रूपसी का आलिंगन है। वैसे भी मृत्यु भयावनी दुःखद

जीवन की परिणत नहीं, अपितु पूर्ण विराम है उस वाक्य का जो अमुख ने लिखा था।

प्रत्येक नागरिक का सहयोग पाये बिना कोई भी राष्ट्र पूर्ण विकसित नहीं हो सकता। इसके लिए आवश्यक है हर व्यक्ति को जागरूक किया जाय यह कार्य महज सरकार के भरोसे नहीं छोड़ा जा सकता। अस्तु जिन्हें देश प्यारा है उन्हें इस विषय पर आत्मचिंतन करना चाहिए। हम देश को क्या दे सकते है कुछ–न–कुछ सब के पास होता है परन्तु देने कि आदत सब के पास नहीं होती सर्वप्रथम हमें इस आदत को सुधारना होगा। चमचमाती सड़के गगन चूमती इमारते रोशनी से नहाये धर्म स्थल किसी देश के समृद्धि के प्रतीक नहीं हो सकते। रूपसी का ओप चाहे कितना ही दीप्तिमान् हो अलंकृत हो पर वह वैशाखी पर चल रही हो तो उसकी सुन्दरता किस काम की। सौन्दर्य अंग प्रत्यंगो से नहीं अपितु समस्त अवयव के समानुपात मिलान में दृष्टिगोचर होता है। इसी तरह राष्ट्र का स्वरूप चन्द लोगों से नहीं अपितु समस्त नागरिकों के जीवन स्तर आचरण एवं व्यवहार से बनता है।

मनुष्य–से–मनुष्य के मिलान में जो नियम अवरोध उत्पन्न करते हैं उन्हें खत्म करने की जरूरत है। यह आवश्यक नहीं जो पहले था वह सब सही था समय का ताकाचा है हम उसे ही स्वीकार करें जो सही हो। विश्व के उन देशों को देखे जहाँ पुरुष एवं स्त्री को समान अधिकार मिला उन्होंने देश हित में श्रेष्ठ कार्य किये है। उनकी प्रगति इस सूक्ति की द्योतक है किसी की अच्छाई का नकल करना गलत नहीं है। किसी देश की पहचान भूगोल से नहीं अपितु वहाँ के इतिहास से होती है और यह इतिहास नागरिकों द्वारा निर्मित होता है।

जिस देश के नागरिक कर्मठ, शिक्षित, दृढ़ इच्छा शक्ति वाले, एवं परोपकारी होंगे वह देश दुत्रगति से उन्नति करेगा। इस तरह यह भी कहा जा सकता है कि प्रत्येक व्यक्ति का चरित्र–निर्माण अप्रत्येक्ष रूप से राष्ट्रहित से जुड़ा होता है। व्यक्तियों के जीवन स्तर में ही राष्ट्र का स्वरूप दृष्टिगोचर होता है। परन्तु जिस तरह असंख्य तारों के बावजूद भूतल रवि की किरण से ही प्रकाशित होती है ठीक इसी तरह महापुरुषों से ही राष्ट्र की पहचान होती है। परन्तु इसका यह अर्थ कदापि नहीं कि तारों का महत्त्व नहीं। दरअसल मानव उसी वस्तु को महत्त्व देता है जिसे वह अच्छी तरह समझ लेता है। समझ का मतलब जिसे वह समीप पाता है तथा जिसका लाभ उसे दिखायी पड़ता है।

भ्रम की उत्पत्ति यथेष्ट ज्ञान के अभाव में होती है हर व्यक्ति के जीने का दायरा होता है परन्तु इस दायरे का निर्माण जिन तत्त्वों के द्वारा होता है वे अत्यन्त महत्त्वपूर्ण होते है। इन्हीं के प्रभाव से व्यक्ति के व्यक्तित्व का निर्माण होता है। पत्तों से विहीन वृक्ष शोभाहीन ही नहीं अपितु पथिक को आश्रय देने में भी असमर्थ होता

है। यही स्थिति आचरण विहीन मानव की होती है। समस्त दर्शन का केन्द्र आचरण ही रहा है आचरण विहीन मानव का परमात्मा भी कल्याण नहीं कर सकता। इसके विरोध में मुखर होने वाले स्वर परमपिता की न्याय प्रियता पर प्रश्नचिन्ह लगाते हैं। ईश्वर की उपासना उसके बनाये गये प्राणियों की सेवा से होती है मानव निर्मित वस्तुओं से नहीं। इस तथ्य को समझने के लिए आत्मचिंतन करना पड़ेगा। चक्षु विहीन प्राणी को प्रकाश दिखायी नहीं पड़ता हम उतना ही देख सकते हैं जितनी हमारी क्षमता है।

हर व्यक्ति की क्षमता यद्यपि पृथक्–पृथक् होती है फिर भी उदाहरण के तौर पर व्यक्ति का प्रथम प्रयास जीविका उपर्जन होता है, इसके बाद जीवन साथी की तलाश शुरू हो जाती है। इसके पूर्ति होते नये परिवार का निर्माण शुरू हो जाता है अधिकांश व्यक्तियों का जीवन परिवार रूपी माला जपते–जपते समाप्त हो जाता है। परिवार का विकास राष्ट्रहित से पृथक् नहीं है परन्तु क्या सिर्फ परिवार तक सीमित रह कर जीने वालों से राष्ट्र गौरवान्वित हो सकता है कदापि नहीं। सर्वप्रथम इसी अवधारणा का समूह विनाश करना है जो राष्ट्र के स्वरूप पर नकाब डालती है। राष्ट्रहित सर्वोपरि है इसके साथ समझौता नहीं किया जा सकता। अतः धर्म एवं जाति को राजनीतिक संरक्षण नहीं मिलना चाहिए। देह में सड़न पैदा करने वाले अंग को काट देना जिस तरह हितकर है उसी तरह राष्ट्र विरोधी तत्त्वों का समूल विनाश न्यायोचित है।

अहिंसा का अर्थ कायरता नहीं अपितु सत्य का संरक्षण होना चाहिए। राष्ट्र का स्वरूप नागरिकों के जीवन स्तर एवं उनके मौलिक विचारों में द्रष्टव्य होता है। विचार जब तक परिष्कृत नहीं होंगे तब तक सत्य बोध सम्भव नहीं बिना सत्य का ज्ञान हुये मानव स्वयं का भी हित नहीं कर सकता। जो अपना ही कल्याण न कर सके, ऐसे लोगों से राष्ट्रहित की कामना करना हास्यास्पद है। राष्ट्रहित की भावना उन्हीं के हृदय में जागृत होगी जिन्हें राष्ट्र से प्रेम है बिना राष्ट्रप्रेम के राष्ट्रहित का कार्य नहीं हो सकता। जो सबसे प्रेम करता है वही राष्ट्र से प्रेम कर सकता है जब तक व्यक्ति के व्यक्तित्व का सम्पूर्ण विकास नहीं होगा तब तक राष्ट्रप्रेम का भाव हृदय में स्थान नहीं बना सकता। जिस क्षित जल द्वारा हमारी देह का निर्माण होता है उसके प्रति–निष्ठा रखना हमारा कर्त्तव्य है। जो अपने कर्त्तव्य का सच्चे मन से निर्वाहन करता है वह ही भारतीय नागरिक है। हमें अपने कर्त्तव्य का पालन करना चाहिए और यदि आवश्यकता पड़े तो अपने स्वार्थ की आहुति दे देनी चाहिए।

कुछ–न–कुछ त्याग करके ही राष्ट्रहित किया जा सकता है जिसके पास जो भी सम्भव हो उसे राष्ट्रहित के लिए न्योछावर कर देना चाहिए। यदि आप तम्बाकू

खाते हैं तो उसका त्याग भी राष्ट्रहित में योगदान देगा। अपनी गलत आदतों का छोड़ना राष्ट्रहित है। यदि हर व्यक्ति स्वयं अपना सुधार करना शुरू कर दे तो समस्त देश का सुधार हो जायेगा। पर यह तभी सम्भव होगा जब हम दूसरों के बारे में सोचे तथा उन्हें जागृत करें। यह कार्य हर कोई कर सकता है क्योंकि इसमें कुछ खर्च करने की जरूरत नहीं है।

■ ■ ■

पर्यावरण

जीव व वन मिलकर जीवन शब्द का निर्माण करते है जीवन को मधुर एवं सुन्दर बनाने में वृक्षों का महत्त्वपूर्ण योगदान है। भारतीय संस्कृति वनों में ही पुष्पित एवं पल्लवित हुई है। वृक्ष जीवन के बरदान है। प्रकृति हर रचना अपने पूर्णत्व के लिए करती है इसलिये संसार में कोई भी प्रकृतिक रचना प्रयोजन हीन नहीं हो सकती। यद्यपि सब का अपना–अपना महत्त्व होता है परन्तु यह दूसरे के महत्त्व बिना महत्त्वहीन हो जाता है। पर्यावरण का यही अर्थ है। इस भूतल पर प्रकृति ने जो निर्माण किया है वह एक दूसरे के सहारे से संचालित हो रहा है इस क्रिया द्वारा प्रकृति अपना संतुलन बनाये रखती है।

इतिहास साक्षी है जब भी प्रकृति के स्वरूप में परिवर्तन होता है तो उसका परिणाम धरती पर रहने वाले सभी प्राणीयों को भुगतना पड़ता है। मनुष्य विवेकशील प्राणी है इसलिए इस विषय पर गम्भीरता से विचार कर सकता है। जैव विविधता को बनाये रखे बिना मानव भी इस धरती पर बहुत समय तक नहीं रह सकता, आज धरा पर कई तरह की प्रजातियाँ बिलुप्त हो गयी है इनमें से कुछ वनस्पतियों तो कुछ जीव जन्तु है। इसका कारण मानव है।

विज्ञान ने नये–नये साधन देकर मानव जीवन को आरामपरस्त बना दिया सुख और अधिक सुख की कामना में प्रकृतिक संसाधन का जिस तरह दोहन हो रहा है वह पर्यावरण को विषाक्त करता जा रहा है। अब इसका प्रभाव शनैः–शनैः नजर आने लगा है। परन्तु अब भी इसकी परवाह नहीं की जा रही है। रोग के प्रथम स्तर पर यदि इलाज शुरू कर दिया जाय तो रोग को आसानी से समाप्त किया जा सकता है परन्तु यदि रोग आसाध्य हो जाय तो दवा अपना कार्य नहीं कर सकती। आज की परिस्थिति देखकर यदि पर्यावरण के प्रति हम अपना कर्त्तव्य निर्वाहन करना शुरू कर दे तो भविष्य को अंधकार से बचाया जा सकता है।

पर्यावरण को स्वच्छ बनाने में वृक्षों का अत्यन्त महत्त्वपूर्ण स्थान है। देह में जिस तरह प्राण का महत्त्व है उसी तरह धरती पर वृक्षों का महत्त्व है। एक वृक्ष एक वर्ष में 1.6 टन ऑक्सीजन उत्सर्जित करता है जो एक व्यक्ति के लिये पर्याप्त है। इसके अलावा एक वृक्ष कई तरह के जीव जन्तुओं को आश्रय देता है। ये जीव जन्तु पर्यावरण को स्वच्छ रखने में अहम भूमिका निभाते है। चोली दामन की तरह वन एवं वर्षा का सम्बन्ध है। वन मिट्टी के कटाव को रोकते है जिससे नदियों में गाद जमा नहीं हो पाती इसलिये बाढ़ का खतरा भी कम हो जाता है।

एक एकड़ वन को समाप्त करके हम पर्यावरण का उतना नुकसान करते है जितना एक कार द्वारा तीस वर्षों में खतरनाक गैसों से होता है। एक तरफ वनों को खत्म किया जा रहा है दूसरी तरफ औद्योगिक कारण द्वारा वाहन एवं कारखानों का काफिला बढ़ता जा रहा है, जो निरन्तर विषाक्त गैसों द्वारा ओजोन परत के लिये खतरा बनता जा रहा है। सी. एफ. सी. हैलोन एवं सी. टी. सी. रसायन जिनका उपयोग मुख्यतः वातानुकूलन अग्निशमन फोम व्योइंग तथा स्टायरोफोम इत्यादि में होता है ये ओजोन परत को क्षति पहुँचा रही है। ओजोन परत के क्षीर्ण होने के कारण सूर्य की पराबैगनी किरणे भूतल पर अधिक मात्रा में पहुँच रही है जिससे ग्लोबल वार्मिंग एवं मानवों में मोतियाबिन्द, त्वचा कैंसर जैसी बीमारियाँ उत्पन्न हो रही है।

पर्यावरण प्रदूषण के कारण प्रकृति अपने स्वरूप से अहिस्ता–अहिस्ता अलग नजर आने लगी है। बेमौसम वर्षा, भूमि की उर्वरा शक्ति का क्षीण होना, तापमान का सामान्य न रहना, फल एवं अनाजों के प्रकृतिक स्वाद में परिवर्तन, स्पष्ट दृष्टिगोचर होने लगा है। विज्ञान यद्यपि अपना कार्य कर रहा है परन्तु यह भी सोचने की बात है कि विज्ञान की भी एक सीमा है, जिस दिन यह सीमा टूट जायेगी उस दिन विज्ञान किंकर्त्तव्य की स्थिति में नजर आ जायेगा। यह स्थिति आये इससे पहले हमें प्रकृति के मूल स्वरूप को बनाये रखने के लिये वृक्षों का संरक्षण करना होगा।

जनसंख्या जिस गति से बढ़ती है उसके हिसाब से अन्न, वस्त्र, भवन आदि की जरूरत भी बढ़ती है, इसके पूर्ति के लिये वनों को समाप्त किया जा रहा है प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से मानव वनों पर आश्रित रहा है। हमारे जीवन में उपयोग होने वाली अनेक वस्तुयें वृक्षों द्वारा ही निर्मित होती है। जिस कागज पर हम लिख रहे है यह भी वृक्षों की देन है। बढ़ती हुई जनसंख्या सबसे महत्त्वपूर्ण वह कारण है जो हमें विनाश की ओर ले जा रहा है। आवश्यकता आविष्कार की जननी है परन्तु यह भी सत्य है कि मानव आवश्यकताएँ भी अनन्त है। इस स्थिति में हमें आवश्यकताओं की सीमा तय करनी होगी। यदि इस गति से जनसंख्या (2001 से 2011 के मध्य देश की जनसंख्या वृद्धि दर 17.64 रही) बढ़ती रही तो भविष्य में आवास एवं भोजन की भी समस्या खड़ी हो सकती है।

औद्योगीकरण ने पर्यावरण को भारी क्षति पहुँचाया है इसके परिणाम स्वरूप वायु एवं जल विषाक्त होते जा रहे है। कारखानों द्वारा छोड़ा गया जल नदियों को विषैला बनाता जा रहा है। एक कालिया नाग के विष से यमुना का जल प्रदूशित हो गया था आज ऐसे अनेकों कालिया नाग सर्वत्र दृष्टिगोचर हो रहे है। नदियों के जल के दूषित होने से जल में रहने वाले अनेकों जीवों का अस्तित्व खतरे में पड़ गया है।

जीवों की तो बात छोड़ों आज नदियों का ही अस्तित्व खतरे में है। हानिकारक कार्बन डाईऑक्साइड को प्राण दायिनी ऑक्सीजन में परिवर्तित करने वाले वृक्षों की संख्या निरन्तर घटती जा रही है। ऐसी विषम स्थिति में अब सचेत होने की आवश्यकता है।

औद्योगिक युग में विभिन्न उद्योगों हेतु कच्चेमाल की आपूर्ति के लिए वनों पर निर्भरता बनी हुई है इसके लिए वनों को काटा जाता है। वनों से समाज को प्रत्यक्ष एवं परोक्ष लाभ होता है। परन्तु हम अपने स्वार्थ के वशीभूत यह भूल जाते है कि यदि धरती से वनों का क्षेत्रफल इसी तरह घटता रहा तो एक दिन मानव जाति का अस्तित्व खतरे में पड़ जायेगा। आज आवश्यकता इस बात की है कि प्रत्यक्ष लाभ से कहीं अधिक वनों के महत्त्व को स्वीकारे। परोक्ष लाभ में वन तापक्रम नियंत्रित कर वर्षा की निरन्तरता बनाये रखता है। भूमि का क्षरण रोकता है तथा उसकी उर्वरा शक्ति बढ़ाता है। वृक्ष तेज हवाओं से फसल की रक्षा शुष्क हवा को आर्द्र वायु में बदल कर फसल की हानि से रक्षा तथा भूमि की नमी में वृद्धि, कृषक के मित्र जीवों के संरक्षण में मदद एवं कृषि उत्पादन में वृद्धि कर लोगों के जीवन स्तर को ऊपर उठाने में सहायक होते है। वन, वृक्ष एवं वनस्पतियों से विहीन धरा से जीवन भी समाप्त हो जायेगा।

जैव विविधता को कायम रखना हम सब का धर्म है। धर्म का सार प्राणी मात्र से प्रेम है। ईश्वर ने संसार की रचना सब के लिए की है इस वास्तविकता को समझ कर सब के लिए समर्पित भाव से कर्म करना ही हमारा कर्त्तव्य है। वनों का विनाश जैव विविधता को नष्ट कर देगा। जैव विविधता के नष्ट होने से धरती की सुन्दरता लुप्त हो जायेगी। इसका प्रभाव मानव जीवन को अस्त–व्यस्त कर देगा। इस त्रासदी से बचने का मात्र एक ही मार्ग है कि वनों का संरक्षण किया जाए तथा वायु एवं जल प्रदूषण को कम किया जाये यह तभी संभव होगा जब हर नागरिक अपना योगदान देगा।

लोभ पाप का मूल है। फ्रायड ने संसारिक कार्यों का मूल वासना को माना है ठीक इसी तरह मानवों के समस्त कार्य लोभ में छिपे होते है। लोभ हमें क्रियाशील बनाता है परन्तु लोभ के लिए हमें कुछ खोना भी पड़ता है। स्वार्थ विचारों को संकीर्ण बना देता है परिणाम स्वरूप अपने हित के सिवा हम दूसरों की भावनाओं को आहत कर देते है। दूसरों के हित अनहित से हमें कोई मतलब नहीं रह जाता। इस कारण लोभ के वशीभूत अधिक लाभ पाने के लिये उचित अनुचित का विचार ही नहीं किया जा रहा है। हर जगह मिलावट हो गयी है शुद्धता की गारंटी मात्र कागजों तक सीमित हो गयी है। मिलावट ने समस्त वातावरण को ही प्रदूशित कर

दिया है। मानवीय विचारों के प्रदूषण ने पर्यावरण को दूषित करने में अहम् भूमिका निभायी है।

पर्यावरण को शुद्ध बनाने के लिए विचारों को तराशने की जरूरत है जीवन की मूलभूत आवश्यकताओं की पूर्ति करने के लिए संघर्ष करना यद्यपि मानव का धर्म है, तथापि आवश्यकताओं की सीमा निश्चित करना भी उसका कर्त्तव्य है। जब तक हमें अपने कर्त्तव्य का बोध नहीं होगा तब तक हम अंधेरे से बाहर नहीं आ सकते। संतान के लिए मानव अनर्गल तरीकों से धन संग्रह कर रहा है एवं अपनी पीढ़ी को बढ़ाने के लिये कन्या भ्रूण हत्या करने में हिचक नहीं रहा है। मानव अपने बेटों की सौ पीढ़ी का भविष्य सुरक्षित करना चाह रहा है परन्तु वह यह नहीं सोच पा रहा है कि क्या उसकी पीढ़ी सौ पीढ़ी तक पहुँच पायेगी।

जिन्हें संतान से इतना प्यार है कि वे उनके लिये सही गलत का निर्णय नहीं करते उन्हें कम–से–कम यह जरूर सोचना चाहिए कि जैव विविधता यदि समाप्त हो गयी तो उनकी प्यारी संतान भी समाप्त हो जायेगी। यह धारण नितान्त हास्पास्पद है कि संतान से मनुष्य की पहचान होती है। सारा जीवन परिवार से लिपट कर मात्र धन संग्रह में इति कर देना मनुष्यता नहीं हो सकती। मनुष्यता का मर्म वही समझ सकता है जो हर प्राणी जीव जन्तु वनस्पति एवं वृक्षों से प्रेम करता है। एक संत वृक्ष काटने गये कुल्हाड़ी के प्रहार से जब वृक्ष से स्राव निकला तो उनका हृदय कराह उठा। उसकी पीड़ा को समझने के लिये उन्होंने अपने पैर पर कुल्हाड़ी मार ली वृक्ष की पीड़ा समझने वाले ये महान संत नामदेव कहलाये।

मानव की पहचान स्वयं के कर्मों से होती है जिन्हें स्वयं अपना प्रकाश बनना आता है वे ही जीवन के मर्म को समझने में सफल होते है। जीवन का मर्म समझने वाला ही सब से प्रेम कर सकता है। जिन्हें मात्र अपने कुटुम्ब एवं रिश्तेदारों से ही प्यार है उन्हें भी पर्यावरण के प्रति स्वयं की जिम्मेदारी स्वीकार करनी चाहिए।

जब तक हम अपनी जिम्मेदारी स्वीकार नहीं करेंगे तब तक हम परिवार को भी कुछ नहीं दे पायेंगे समाज एवं देश तो बहुत दूर की बाते है। मानव हित इसी में निहित है कि प्रकृति के महत्त्व को समझे। धरती पर वन वनस्पति का सृजन प्राणी जगत से पहले हुआ जीव जन्तुओं के निर्माण के बाद वृक्ष एवं वनों ने ही उन्हें जीवित रहने की सामग्री उपलब्ध करायी है। जीव जन्तु की विभिन्न प्रजातियों का निर्माण प्रकृति वृक्ष एवं वनों के माध्यम से करती है। जल, वायु सूर्य की रोशनी से ही जीवन चलता है और इन सबको स्वस्थ बनाने में वृक्षों एवं वनों का योगदान है। स्यात् वन को जीवन कहना गलत नहीं होगा। प्रकृति का अपना एक निश्चित क्रम है इसे कायम रखे बिना मानव का अस्तित्व भी कायम नहीं रह सकता।

जनसंख्या वृद्धि से मानव की आवश्यकतायें भी बढ़ती जा रही है इसकी पूर्ति के लिये जंगलों का क्षेत्रफल घटता जा रहा है। कलकारखानों से निकलने वाला विषाक्त जल नदियों में छोड़ा जा रहा है जिससे जल प्रदूषित होता जा रहा है। इसके अलावा कारखानों द्वारा छोड़ा गया जहरीला धुँवा वाहनों एवं तरह–तरह के इंजनों द्वारा निकलती गैसों से वायु प्रदूषित हो रही है। पॉलीथीन की आधुनिक खोज एक और समस्या लेकर खड़ी हो गयी है समय रहते यदि इसका समाधान नहीं किया गया तो इसका परिणाम मानव को भुगतना ही पड़ेगा।

ऋषि मुनियों ने बहुत पहले ही पर्यावरण का महत्त्व समझा लिया था वृक्ष, नदीं, अग्नि सूर्य आदि की पूजा का यही रहस्य है। हिन्दु दार्शनिकों ने गाय को माँ के सामान आदर देकर जीव जन्तुओं से प्रेम करने का मार्ग प्रशस्त किया है। तुलसी पूजा का मतलब पौधों का महत्त्व समझना एवं उनसे प्यार करना है। ईश्वर सर्वव्यापी है इसलिए वह कण–कण में व्याप्त है। हर कण का अपना प्रयोजन होता है जिस तरह प्राण के बिना देह चल नहीं सकती उसी तरह वनों के बिना पृथ्वी पर जीवन भी नहीं रह सकता।

हर जीवधारी एक दूसरे पर आश्रित है। घास–पत्ते खाकर जीने वाले प्राणियों को मांसाहारी खाते है जिस तरह देह का सारा भार पैरों पर केन्द्रित होता है उसी तरह धरती पर मूलतः जीवन वृक्ष एवं वनस्पतियों पर टिका है। यदि ये समाप्त हुये तो दूसरे स्वतः ही समाप्त हो जायेंगे। यह संतुलन सदा बना रहे इसके लिये अब मानव को जाग जाना चाहिए।

■ ■ ■

वर्षा सुन्दरी

ज्येष्ठ मास में जब मृगशिरा नक्षत्र का आगमन होता है तो पृथ्वी भगवान अंशुमाली के प्रखर किरणों से आनन छिपाने के लिए व्यग्र हो जाती है मीलो दौड़ने के उपरान्त जिस प्रकार हम लम्बी–लम्बी साँसे लेने लगते है उसी तरह भूतल जेष्ट की दुपहरी में दीर्घ निश्वास लेती प्रतीत होती है। अनिल जिसका स्पर्श पाकर कभी भूतल सहम एवं सकुचा जाती थी तभी तो हरित परिधान पहनकर सारे अवयवों को छिपा लेती थी। वे अंग जो खुले रह जाते उन पर जब धूप पड़ती तो वे चमक उठते आज वही धूप का स्पर्श करना नहीं चाहते थे। समीर अन्नत धूल कणों को अपने में समाहित कर पूरे वेग से बह रही थी परन्तु आहः आज भूतल को वायु का स्पर्श अधीर कर रहा था। धरा अन्दर ही अन्दर टूट रही थी। अपनी बैचेनी को मिटाने के लिये कभी वह दीर्घ श्वाँस लेती तो चक्रवात बन कर उसके हृदय का स्पंदन और बढ़ जाता। कभी–कभी भूतल का आत्मविश्वास डगमगाने लगता परन्तु वह यही सोचकर अपने पर नियन्त्रण पा लेती कि एक दिन वर्षा सुन्दरी अवश्य आयेंगी।

दिन भर की तपतपाती धूप से व्यग्र धरा को सन्ध्या सांत्वना अवश्य प्रदान कर देती सन्ध्या के अभिषंग में बद्ध भूतल दिन भर की सारी कडु आहट भूलकर विश्राम करने लगती। विभा सुखद हो जाती उषा तन में नव संचार भर देती परन्तु विभात आते ही भूतल के मन में पुनः भय उत्पन्न हो जाता। पर वह करती भी क्या बस पलक बिछाये एकटक वर्षा सुन्दरी की प्रतीक्षा में दिन में भी स्पन देखने लगती परन्तु कितनी देर जैसे सूर्य देव गगन के मध्य में पहुँचते भूतल का सपना भंग हो जाता। जेठ की दुपहरी इतनी प्यास बढ़ा देती कि भूतल बेसुध हो जाती। संध्या आकर जब उसे झिझोड़ती तब धीरे–धीरे उसकी बेहोशी टूट जाती।

प्रतीक्षा का वक्त ठहर जाता है यद्यपि समय अनवरत चलता रहता है परन्तु यदि हमारे मन में सुख हो तो समय की गति समझ, में नहीं आती परन्तु यदि हमारा हृदय विशाद से भर जाय और उससे निकलने का कोई मार्ग दिखायी न दे तो इस स्थिति में हमारा विवेक शून्य हो जाता है। अस्तु इस स्थिति में गलत निर्णय हो जाते है। सृष्टि का यह पुरातन नियम है कि यहाँ कुछ भी स्थिर नहीं है इसलिए सुख–दुःख से विचलित हुये बिना हमें अपना कर्त्तव्य पालन करते हुये आशा का दामन नहीं छोड़ना चाहिए। जो काँटों की चुभन सहने की क्षमता रखता है पुष्प की सुगंध उसे ही प्राप्त होती है।

आषाढ़ का आगमन होते ही प्राची की तरफ से धनों के काफिले ने आगे बढ़ते

हुए सूर्य की किरणों को रोक दिया। धरती आत्म विभोर हो गयी। समीर की गति बढ़ी तभी बादलों ने नन्ही–नन्ही बूँन्दों से वायु का स्वागत किया। वायु में जैसे जल का समिश्रण हुआ वैसे ही पवन की गति मंद हो गयी। लज्जा का भाव जिस तरह रमणी के सौन्दर्य में निखार ला देता है उसी तरह जल का साथ पाकर समीर मंद एवं शीतल हो गयी। वृक्षों से अठखेलियाँ करती सन–सन की ध्वनि से मानों घनों से कहती, मेरे जीवन की सारी प्यास आज मिटा दो।

मेघों ने वायु की बात सुन ली बड़े जोर गर्जना की धरती सहम गयी। बिजली चमका कर घनों ने धरती का निरीक्षण करना शुरू कर दिया। सौन्दर्य हीन धरा का मुख मंडल देखकर बादलों का हृदय द्रवित हो गया। भूतल पर रहने वाले अनेक जीव जन्तु, वनस्पतियों कुम्भलाई हुई थी सबकी पीड़ा समझकर घनों की गर्जना रूक गयी कुछ पल वे अपलक धरा को देखते रहे वायु भी शान्त हो गयी बादलों का हृदय पसीजा तब उनके नेत्रों से आँसू टपक पड़े। दया, उदारता, एवं करुणा जिस हृदय में निवास नहीं करती, वह दूसरे की पीड़ा समझ नहीं सकता। बादलों ने धरती की पीड़ा समझा फिर मूसला धार बारिश शुरू कर दी। पहली वर्षा ने ही ग्रीष्म से व्याकुल धरती के समस्त संताप हर लिए। वर्षा थम गयी परन्तु कुछ घण्टों में धरती का काया–कल्प हो गया संध्या अत्यन्त मोहक हो गयी।

वर्षा सुन्दरी का अलिंगन पाकर धरती ने श्रृंगार करना आरम्भ कर दिया। नन्हें–नन्हें अनन्त किश्म के अंकुर उग आये। पहली बरसात से भीगी भूतल के बदन से जो भीनी–भीनी सुगन्ध निकलती वह मन मयूर को नृत्य करने पर विवश कर देती। दबी हुई भावनाएँ जागृत हो जाती। पीले–पीले अंगणित दादुर टर–टर करते संगीत से अपने प्रियतमा को पुकरने लगे। झींगुरों ने अपनी ध्वनि में तान छेड़ मेघों से और बरसों और बरसों की फरमाइश करने लगे। शाम होते ही खघोतों की बटालियन वृक्षों के ऊपर डेरा जमा देती। खद्योतों की चमक से वृक्ष शोभापमान हो जाते। आकाश में घिरे श्वेत श्याम अभ्र मंद–मंद बहती पवन में खद्योत कलधौत के पुष्प सदृश प्रतीत होते। कभी–कभी धन जब टकराते तो उनकी बिजली की किरणें धरती का स्पर्श कर लेती। अंतरिक्ष में बादलों की चमक कुछ पल ही पर जो दृश्य प्रस्तुत करती उसका सौन्दर्य दिग–दिगान्त को मोहित कर देता। यह दृश्य सभी को सम्मोहित कर लेता क्योंकि तम में प्रकाश की एक किरण ही जीवन को दिशा दे देती है। बिजली की चमक के उपरान्त बादल जब गर्जना करते हैं वह रव शूर बीरों को भी अधीर कर देती है। अपनी गर्जना के माध्यम से बादल बार–बार यही आगाह करते हैं कि हे प्राणियों अपनी सुरक्षा के लिये नीड़ का निर्माण करो।

वर्षा सुन्दरी के प्रथम स्पर्श से धरती कृतार्थ हो गयी उसके मृत्यु प्राय देह में

प्राण का संचार हो गया। एक पखवाड़े में ही मैली धोती हरितमा में परिवर्तित हो गयी। वर्षा सुन्दरी धरती के इस सौन्दर्य पर मंत्र मुग्ध हो शैनेः–शैनेः उतरने को व्यग्र थी। सारा आकाश अभ्रों से आच्छादित था। मंद–मंद बहती हुई पुरवाई हृदय का स्पर्श कर शीतलता प्रदान कर रही थी। बादलों की तैयारी देखकर पक्षी वर्षा को भाँप कर सुरक्षित स्थान की खोज में विह्वल, पंक्तिबद्ध होकर उड़ रहे है। मंद पुरवाई से झूमते वृक्ष वर्षा से मानो आँख मिचौली खेल रहे हैं। मयूर अपनी मनोदशा नृत्य के माध्यम से प्रकट कर रहे हैं तो चीटियाँ अपने अण्डे मुख में दबाये पंक्ति बद्ध सुरक्षित स्थान के लिए अनवरत आगे बढ़ रही हैं।

प्राची दिशा से वर्षा सुन्दरी ने भूतल पर उतरना आरम्भ कर दिया उनके आगे मंद बहती पुरवाई मार्ग के अवरोधन को खत्म कर रही थी। फिर भी न जाने क्यों वर्षा सुन्दर लजाती हुई धीरे–धीरे अनवरत आगे बड़ रही थी। जिस भू–भाग को उन्होंने अलिंगन बद्ध–कर लिया उसकी हरितमा के ऊपर वर्षा सुन्दरी की स्वच्छ पारदर्शी उत्तरीय दृष्टिगोचर होने लगी। वर्षा सुन्दरी के उत्तरीय में छिपे द्रुम–नृत्य करने लगे। वृक्षों को इस प्रकार नृत्य करते देख उनका स्पर्श पाकर विभोर हो रही वायु अपनी ध्वनि में गुनगुनाने लगी। वृक्ष एवं वायु के इस मिलन को देखकर शर्माकर वर्षा सुन्दरी तीव्र गति से आगे बढ़ने लगी।

रिमझिम–रिमझिम बरसती वर्षा की बूँदों से घर आँगन, बाग, वन खेत सब कुछ भीग रहा था। वर्षा सुन्दरी की बाहों में उस समय जो भू–भाग आया सबको अपने में समेट लिया। अपनी फुहारों से जड़ चेतन सबको स्पर्श कर वर्षा सुन्दरी ममता लुटा रही थी धर्म रंग लिंग सभी भेदों से परे, सब को समान रूप से प्यार करती चूमती वर्षा सुन्दरी का अद्भूत सौन्दर्य मेरे अन्तस्थल में धीरे–धीरे उतर गया। नेत्र बंद हो गये न जाने कहा से तभी वायु का झोंका आया जिसके साथ वर्षा की नन्हीं–नन्हीं बूँदे मेरे तन–मन को भिगों गयी, मुझे लगा किसी ने कोमल कर से स्पर्श किया। एक सुखद अनुभूति से हृदय प्रफुल्लित हो गया। सृष्टि की मूल वर्षा सुन्दरी के सौन्दर्य ने मेरे मन को रोमांचित कर दिया।

वर्षा सुन्दरी के दर्शन से मेरे नेत्र तृप्त नहीं हो रहे थे इसलिए निरन्तर मैं उन्हें देखे जा रहा था। शून्य पर छाये काले मेघ लगता वर्षा सुन्दरी के विशाल केश है जो श्याम मेघों से युक्त वर्षा सुन्दरी के कपोल पर अठखेलियाँ कर रहे है। मधुर–मधुर रव कर सबको सतर्क करती वर्षा सुन्दरी अत्यन्त विनम्र लग रही थी। घनों की टक्कर से उत्पन्न बिजली की चमक, लगता वर्षा सुन्दरी की टिकुली को स्वयं सूर्य देव ने अर्पित कर दी। परन्तु अब नन्हीं–नन्हीं बूँदों से भू को नहलाती हुई वर्षा सुन्दरी थकी–सी नजर आ रही थी। बादलों की शक्ति क्षीण हो चुकी थी यदा–कदा

भगवान दिवाकर भी अब अपनी उपस्थिति दर्ज करा रहे थे। बादलों को पुनः संगठित करने हेतु वर्षा सुन्दरी के अंधेरों पर स्मित तैर गयी तो इन्द्र धनुष का निर्माण हो गया। इन्द्रधनुष के द्वारा वर्षा सुन्दरी ने न जाने क्या कहा कि बादल पुनः सक्रिय हो गये।

वर्षा पुनः शुरू हो गयी इस बार बादलों का वेग पहले से तीव्र था। वायु भी वेग से बहने लगी धरती वृक्ष एवं बादल सब एकाकार हो गये। आकाश पर छाये मेघ वर्षा सुन्दरी का मुखमंडल तो टपकती बूँन्दों की फुहार स्वच्छ वसन प्रतीत हो रहे थे। धरती पर सर सरिताये जल से लबालब भरे वर्षा सुन्दरी के अवयव बन गये थे। वर्षा सुन्दरी का यह स्वरूप समस्त प्राणियों को किसी–न–किसी तरह अपकी तरफ आकर्षित कर रहा था। वर्षा सुन्दरी का दर्शन करते –करते घन्टों बीत गये वर्षा रुकी तो संध्या उत्तर आयी।

अक्षरी संध्या की मोहकता बड़ जाती है पर उसका रूप कुछ भयावना भी हो जाता है। झीगुरों के संगीत से सारा वातावरण गुंजायमान हो जाता है। पोखरों में भरे पानी में उछलते कूदते दादुरों का गीत सब के मन को छू लेता है। अपनी क्षुधा पूर्ति करने हेतु पंनग जब दादुर को पकड़ लेते है तो उस समय दादुर की आवाज भय उत्पन्न कर देती है। वर्षा ऋतु में संध्या का तिमिर गहरा हो जाता है बिना प्रकाश के घर से बाहर निकलने में डर लगने लगता है। वर्षा ऋतु की निशा जहाँ भयावनी एवं अधिक काली हो जाती है वहीं दूसरी तरफ अनन्त जीवों का निर्माण भी करती है। जीवन का आरम्भ अंधकार के उदर से प्रारम्भ हो पुनः अंधकार में विलीन हो जाता है। इसलिये जीवन का रहस्य, रहस्य बनकर आज तक रह गया। जिस दिन इस रहस्य से पर्दा हट गया उस दिन संसार भी नहीं रहेगा।

वर्षा सुन्दरी का अभिषंग पाकर धरती का सौन्दर्य प्रकट होता है। धरती पर जितने भी जीवधारी है उन सब की देह का निर्माण जिन तत्त्वों से होता है उन सब में जल तत्त्व का सबसे अधिक अंश होता है इस तत्त्व की पूर्ति करती हुई वर्षा सुन्दरी सब प्राणियों को नवजीवन प्रदान करती है। वर्षा सुन्दरी के आगमन से पूर्व ही हमारे तन में स्फूर्ति आ जाती है। मन मयूर मचलने लगता है बच्चों में यह उत्साह सबसे अधिक होता है तभी तो जान बूझकर माता–पिता के मना करने पर भी वर्षा से भीग कर बच्चे आनन्दित होते है इस समय इनके ओप की आभा किसी योगी के मुखमण्डल के समान दीप्तमान हो जाती है।

वर्षा सुन्दरी के सौन्दर्य से विश्व के अनेकों चिंतक एवं विचारक प्रभावित हुये है अपने प्रभाव को कवियों ने अपने–अपने ढंग से चित्रित किया है। निःसन्देह वर्षा सुन्दरी के इस पावन रूप को देखकर उनके द्वारा सृष्टि का नव श्रृंगार होने के

कारण वर्षाऋतु को ऋतुरानी कहा जाता है। सचमुच अक्षरी ऋतु रानी है। राजा अथवा शासक का कार्य प्रजा का पालन करना होता है। जनता जिस तरह खुशहाल रहे उसका तन मस्तिष्क स्वस्थ हो, एवं मानव—मानव की पीड़ा समझे, प्रेम की भाषा पढ़ सके, यह भाव जन—जन तक पहुँचना राजा का धर्म होता है, वास्तविक राजा या शासक वही कहा जा सकता है जो समस्त जनता को पुत्रवत् प्यार करे। राजा से रानी का महत्त्व श्रेष्ठ है क्योंकि राजा सिर्फ पालनकर्त्ता है परन्तु रानी नव सृजन कर उसको सम्बल प्रदान करती हैं। समस्त गुण वर्षा सुन्दरी में व्यप्त है अस्तु वर्षा सुन्दरी को ऋतुरानी कहना व्यवहारिक प्रतीत होता है।

वर्षा सुन्दरी से तर बतर होने के उपरान्त ही भूतल पर जीवन का श्री गणेश हुआ। भूतल पर समस्त प्राणियों का जीवन आधार जल है। बिना भोजन के प्राणी कुछ दिन जी सकता है परन्तु जल के बिना जीवन ठहर जायेगा। वर्षा सुन्दरी ने भूतल को हरा—भरा ही नहीं बनाया अपितु मानव को सौन्दर्य बोध भी प्रदान किया। प्राकृतिक सौन्दर्य का अवलोकन करने के उपरान्त ही मानव ने देह सौन्दर्य के मर्म को जाना। देह सौन्दर्य ने जब मानव हृदय में स्पंदन कर उसे अभिभूत कर दिया तब सौन्दर्य के प्रति उसकी दृष्टि अंतरमुखी हो गयी। यहाँ पर पहुँचने के उपरान्त ही मानव को परम सौन्दर्य का बोध हुआ।

अक्षरी के अगोश में लिपटने के उपरान्त ही धरती का सौन्दर्य परिपूर्ण होता है वृक्षों की शोभा बढ़ जाती है खेतों में फसल लहलहाने लगती है। नदी, नाले एवं सरोवरों में यौवन आ जाता है। पक्षीयों की चंचलता बढ़ जाती है तो पशु अपने रंग बदल देते है। हरी—भरी घास से धरा आच्छादित हो जाती है ऐसी हरितमा पर जब वर्षा की झींसी पड़ती है तो इन सब का सौन्दर्य देखने योग्य हो जाता है। वसुधा एवं वर्षा सुन्दरी का सौन्दर्य जब एकाकार हो जाता है तभी नवनिर्माण होता है। वर्षा सुन्दरी हमारे जीवन में बार—बार आये और हर बार अपने सौन्दर्य में नया निखार लाये इसके लिये हमें हृदय के सौन्दर्य को जागृत करना होगा तभी हम वर्षा सुन्दरी के सौन्दर्य का आस्वादन कर पायेंगे।

■ ■ ■

फागुन की धूप

अरुण सारथी जब किशोर अवस्था में प्रवेश करते है तो उनका प्रभाव दिग–दिगान्त में दृष्टिगोचर होने लगता है। शिशिर ऋतु दम तोड़ देती है परन्तु उसका परिश्रम साकार हो जाता है। माता अपने शिशु को पालपोस कर धीरे–धीरे चलना सिखाती है शिशु जब पैरों से चलने लगता है तब माता उसका हाथ छोड़ देती है ठीक इसी तरह शिशिर भी फसल का पालन करती है। पौधे जब समीर के साथ अठखेलियाँ करने लगते है पुष्पित एवं पल्लवित होने लगते है तब शिशिर उनका हाथ छोड़ देती है।

शिशिर का अंत होते ही फागुन का आगमन हो जाता है। फागुन आते ही भास्कर की किरणें प्रखर हो जाती। विभात होते प्राची की छटा अद्वितीय हो जाती। स्वच्छ गगन को जब रवि की किरणें चूमती तो शर्म से प्राची अरुणिमायुक्त हो जाती। धीरे–धीरे किरणे जब धरती पर पदार्पण करती तो सर्वप्रथम गिरि शिखरों को अभिषंग में भर लेती। फागुन की धूप से हिम से आच्छादित गिरि शिखर चम–चमाने लगते हैं। ऐसा लगता मानो स्वयं बाल भास्कर भूतल पर उत्तर आये है।

मंद वायु के झोकों से झूमते द्रुमों की फुनगी को जब फागुन की धूप छूती हैं तो लगता मानों जननी के स्वर्णिम कर अपने शिशु के कुंतल को संवार रहे हैं। माँ का स्पर्श पाकर जैसे शिशु प्रमुदित हो जाता उसी तरह तरु भी फागुन की धूप के आलिंगन में बद्ध होकर मचल उठते। भयावने स्वप्न से डरा शिशु माँ के उपस्थ में भय रहित हो जाता है उसी तरह विभा में भयभीत तरु भी फागुन की धूप से अलिंगन बद्ध होकर भय मुक्त हो जाते। शर्वरी में जब वायु वृक्षों को डराती तो वे सायं–सायं की ध्वनि करने लगते है। प्रभात होते वृक्ष निडर हो जाते है क्योंकि अब उन्हें भगवान् भास्कर की किरणों का सम्बल मिल जाता है।

तरुओं को पूर्ण रूप से अपनी बाहों में भरने के उपरान्त जब फागुन की धूप नीचे उतरती तो सरसों के पीले–पीले पुष्पों से आच्छादित खेतों की शोभा देखकर अवाक् मंत्र मुग्ध सी उन्हें चूमने लगती फिर सोचती आह! ये कितने अनिंद्य है। यदि वृक्षों की तरह इन्हें भी आगोश में भरा तो क्या ये मेरे वेग को सह पायेंगे कहीं बिखर न जाय यह विचार कर फागुन की धूप अपना वेग कम कर देती है। इसलिये जब वह सरसों के पुष्पों पर उतरती तो संकोच बस स्वयं पीली हो जाती। लज्जा से नहाई फागुन की धूप की शोभा अवर्णनीय हो जाती।

गेहूँ के पत्तों पर टपकी शबनम की बून्दों को देखकर फागुन की धूप की प्यास

बढ़ जाती। रवि से लगभग 15 करोड़ किलोमीटर दूरी तय कर धूप की प्यास बढ़ जाना स्वाभाविक है। अतः जब वह गेहूँ के खेतों को आगोश में भरती तो शबनम की बून्दे कनक में परिवर्तित हो जाती। मटर, आलू जौ एवं जहाँ कहीं भी फागुन की धूप को शबनम की बूँदें दिखती वह उन सब को पीने में व्यस्त हो जाती शबनम की सारी बूँदों को पीने के उपरान्त भी फागुन की धूप तृप्त नहीं हुई तब वह सर, सरिता की धाराओं को धीरे–धीरे पीना शुरू कर दिया।

भूतल का विशाल भू–भाग फागुन की धूप अपनी बाँहों में समेट चुकी थी। लोगों के घरों में क्या है अब यह जानने को आतुर हो गयी। जहाँ कहीं उसे खुला गवाक्ष नजर आता वह चुपके से अंदर उतर जाती। संयोग से जब कोई सोती हुई माणविका नजर आती तो वह उसको अपने कर से जगाने का उपक्रम करती परन्तु जैसे ही बाला के नेत्र खुलते फागुन की धूप से बचने के लिये मुख को चादर से ढँक लेती। यह दृश्य देख धूप उदास हो जाती। फागुन की धूप को जैसे मौका मिलता हर सदन में घुस जाती, परन्तु अब उसे आश्चर्य होता कल तक जो लोग उसके उत्संग में बैठने के लिए आतुर हो जाते थे वही उससे आँख मिचौली खेल रहे थे। अधिकांश प्राणियों को अब वह दुलरा नहीं पाती, दोपहर होते–होते पशु–पक्षी भी वृक्षों की छाया में बैठ जाते तब फागुन की धूप वायु से मित्रता कर लेती। धूप को मित्र बनाते ही वायु वेग से बहने लगती। वायु की शीतलता पाकर धूप भी गुनगुनाने लगती, सांय–सांय की ध्वनि में न जाने किसे पुकारने लगती।

फागुन आते ही धूप का तेज बढ़ जाता है अब उसका सौन्दर्य दिग–दिगन्त में व्याप्त हो जाता है। प्रभात होते ही जब दिवाकर अपनी यात्रा आरम्भ करते हैं तो उनका मार्ग कहीं भी अवरुद्ध दिखायी नहीं देता। गगन में कहीं भी कोई अभ्र का टुकड़ा नजर नहीं आता। स्वच्छ वितान अंशुमाली के सौन्दर्य में निखार ला देता है अब उनकी किरणें स्वर्ण युक्त एवं अत्यन्त तेजस्वी हो जाती है। एक तरफ नीला वितान तो दूसरी तरफ किशोर रवि का तेज समस्त गृहों को प्रकाश से नहला देता है। फागुन की धूप धरती को सुहागिन बना देती है इस छटा को देखकर ही वसंत को ऋतुराज कहा जाता है।

फागुन की गुनगुनाती धूप समस्त वनस्पति एवं प्राणी जगत् को स्पर्श कर एक सुखद नव्यता का संचार करती है, परिणाम स्वरूप वृक्षों में नये कोपल निकल आते है पौधों में कालियाँ विंहस उठती है। सम्पूर्ण वातावरण सुरभित हो जाता है। कोयल की भावना कू–कू में प्रकट होने लगती है तो पपीहा को भी किसी की स्मृति सताने लगती है। प्राणियों की प्यास बढ़ जाती है। श्रमिकों के मुख मंडल पर श्वेद की बूँदें चमकने लगती है। समीर का वेग बढ़ जाता है ऐसा प्रतीत होता मानो फागुन की

धूप एवं वायु में वार्त्तालाप हो रहा है।

फागुन की धूप प्राणीयों की भावनाओं को भी झकझोर देती है इसी लिए पक्षी नीड़ निर्माण में व्यस्त हो जाते हैं। गौरैया अपनी चोंच में घास का तिनका लेकर उड़ती नजर आती तो गिलहारी भी मुँह में सन का टुकड़ा उठाए दौड़ती दिखती। बुलबुल, तोता, सभी पक्षी इसी कार्य में संलग्न दिखते। फागुन की धूप की यह विशेषता भाँपकर ही महाकवि तुलसीदास ने स्यात् यह लिखा होगा। मोह विपिन कहुँ नारि वसन्ता। सचमुच मोह को सशक्त बनाने में फागुन की धूप का विशिष्ट योगदान है।

ममता संसार के संचालन की सशक्त कड़ी है। यह क्रम है जिसके बल से सृष्टि का नियम कायम है। इसी के वशीभूत समस्त प्राणी अपनी पीढ़ी को बढ़ाने का प्रयास जारी रखते है। संसार की नव्यता भी इसी के बल से कायम है। यद्यपि यह शक्ति प्रकृति प्रदत्त है और इसमें किसी भी तरह का परिवर्तन सृष्टि के प्रारम्भ से लेकर आज तक नहीं हो पाया है न ही भविष्य में होगा। यदि इसमें परिवर्तन हुआ तो जीव जगत् समाप्त हो जायेगा। इसलिये जब यह शिथिल हो जाती है तो फागुन की धूप इसमें नव संचार कर देती है।

रूप रंग आकर के समानुपात में जिस तरह सौन्दर्य का दर्शन होता है उसी तरह स्वच्छ अंतरिक्ष, देह धारियों के अनुकूल तापमान एवं पुष्पों से आच्छादित वसुन्धरा का संगम पाकर फागुन की धूप का सौन्दर्य निखर जाता है। वस्त्र भूषण एवं अलंकरण रमणी के सौन्दर्य को बढ़ाने में सहायक होते है परन्तु इस सौन्दर्य के केन्द्र बिन्दु नैसर्गिक सौन्दर्य का जिस तरह महत्त्वपूर्ण स्थान है उसी तरह वसन्त की सुषमा को चरमोत्कर्ष तक पहुँचाने में फागुन की धूप की मुख्य भूमिका है। जिस तरह शिष्य को योग बनाने में गुरू की अहम् भूमिका होती है उसी तरह धरती को पुष्पति एवं पल्लवित करने में धूप की भूमिका होती है परन्तु वसन्त को ऋतुराज बनाने में फागुन की धूप की भूमिका को नकारा नहीं जा सकता।

फागुन की सुनहरी धूप मनस्थल के सुसप्त भावों को झंकृत कर देती है परिणाम स्वरूप प्राणी अपने स्वप्न को साकार करने के प्रयास में कर्मरत हो जाते है। प्राणी जगत् नवीन स्फूर्ति से भर जाता है। फागुन के विभात की छटा मोहक होती है इसी तरह संध्या का समय भी अति मनोहर होता है। भगवान अंशुमाली जब प्रतीची के अंतिम छोर पर पहुँचते हैं तो उनकी रश्मिे धरती का स्पर्श नहीं कर पाती, परन्तु आकाश में उड़ते हुए सोनबालकों की पंक्तियों को अब भी स्पर्श कर रही थी। इसलिए सोनबालकों का सौन्दर्य अद्वितीय हो गया था। अन्नत पक्षी भी अपने नीड़ के लिए उड़ रहे थे परन्तु वे शान्त थे, कहीं भी कलरव का स्वर सुनायी नहीं पड़ रहा

था।

फागुन का व्योम वस्तुतः स्वच्छ ही होता है परन्तु यदा–कदा छोटे–छोटे अभ्र के टुकड़े न जाने कहा से आ जाते है। प्रतीची से रवि की किरणे अंतिम समय जब इन अभ्र शावकों को अपने अंक में भरती है तो ये मंचल उठते है। हर्ष तिरेक की यह स्थिति इनके मुखमंडल पर स्पष्ट दिखायी देने लगती है। इनका यह रूप देख कर कदाचित भ्रम हो जाता है। वैसे तो यह घटना प्रायः घटती रहती है परन्तु फागुन का सूर्यास्त अरुणोदय की स्मृति अवश्य कर देता है। प्रियतम का सानिध्य पाकर रमणी के सौन्दर्य में चारु चाँद लग जाता है। अंधकार होने पर ही दीपक की पहचान होती है। इसी तरह संघर्ष के उपरान्त ही लक्ष्य की प्राप्त होती है। शीत को सहने की जो शक्ति रखता है उसी को वसन्त का दर्शन होता है।

प्रकृति का अपना क्रम अनवरत चलता रहता है जीवन है, तो फागुन भी बार–बार आता रहेगा, परन्तु हर बार कुछ बदला हुआ अवश्य होगा। तन–मन में गुदगुदी भरने वाली फागुन की धूप निःसन्देह अन्य ऋतुओं की अपेक्षा अनिंद्य है। इसकी सुन्दरता को इसी तरह कायम रखने के लिये धरती को स्वच्छ बनाये रखना परम आवश्यक है। फागुन की धूप की सुन्दरता भूतल की सुन्दरता के मिलान में दृष्टिगोचर होती है हमें इस सत्य को स्वीकार कर ही कार्य करना होगा वरना एक दिन फागुन की धूप भी अपनी सुन्दरता खो देगी।

■ ■ ■

कागज के फूल

कागज के पुष्पों की मनोज्ञता मुझे वास्तविकता से दूर कर रखा है हो सकता है मेरा ज्ञान सीमित हो परन्तु जहाँ तक मेरी दृष्टि जाती है मैं स्वयं को इन पुष्पों के सौन्दर्य में उलझा हुआ पाता हूँ। यद्यपि मैं यह भी जानता हूँ कि सौन्दर्य हृदय की वस्तु है इसे दृष्टि के द्वारा पढ़ा नहीं जा सकता परन्तु बिना यथार्थ ज्ञान के इस भ्रम से मुक्ति नहीं हो सकती। आज के समाज पर जहाँ तक दृष्टि गयी वहाँ तक मैंने पुस्तकों की लिखी बातों का जीवन से कोई सम्बन्ध नहीं देखा। वास्तविक सुमनों की अनिंद्यता को कागज के फूल मात दे रहे है यह सत्य नासूर की तरह हर क्षण मुझे व्यथित करता रहता है।

झूठ बोलना अब कला समझा जाने लगा है जिसे झूठ बोलना नहीं आता उसका भौतिक पतन निश्चित है। हर व्यक्ति को अपनी रोजी रोटी की चिंता होती है यदि आप सरकारी कर्मचारी है और आप को झूठ बोलना नहीं आता तो विश्वास कीजिए आप किसी भी पद पर हो अधिक समय तक टिक नहीं सकते। अस्तु ऐसी स्थिति में जिनको सत्य से प्रेम है सर्तक हो जाना चाहिए। व्यवहारिक जीवन में झूठ सफलता का मंत्र बन गया है। झूठ बोलना बुद्धिमता का प्रतीक है। सत्य का त्याग करने वाला कर्मचारी अपने विभाग में प्रतिष्ठा का पात्र बन जाता है।

किसी नागरिक का काम जो अधिक समय तक लटका कर उत्कोच लेकर ही करे वह प्रशंसा का पात्र बन जाता है। अधिकारीगण उस कर्मचारी को पंसद करते है जो चढ़ावे में शुद्ध देशी घी का भोग लगाता है। बिना अधिकारी की पूजा किये सफल कर्मचारी नहीं बना जा सकता।

सर्वगुण सम्पन्न व्यक्ति ही अधिकारी पद के लिये चयनित होता है। अधिकारीगण ही भारत भाग्य विधाता है। यह दूसरी बात है कि इनके कंठ में भी रस्सी का फंदा होता है। दरअसल इन्हें चरने की छूट है परन्तु सरकार के मंत्री इनके कंठ में रस्सी का फंदा इसलिए डालते है कि इन्हें अपनी पसन्द की जगह खूटा गाड़कर बाँधा जा सके। मंत्री महोदय बुद्धि में भले ही अधिकारियों से पीछे हो परन्तु माँ लक्ष्मी की कृपा से दिव्य दृष्टि प्राप्त कर लेते है। इसीलिये अधिकारियों को घास के साथ अशर्फियाँ भी चरवा देते है। मंत्री महोदय गोबर की टोकरी सर पर रख के जनता के सामने से सदन में सफाई के लिये ले जाते है। जनता मंत्री महोदय के इस कार्य की प्रशंसा करती हुई ताली बजा–बजा कर आत्मविभोर हो जाती है। यहाँ असली फूल मंत्री महोदय चुन लेते है तो अधिकारी–गण कागज के

फूल से ही संतुष्ट हो जाते है। परन्तु अवसर पाते ही अधिकारी काले नाग की तरह जनता को डंसना शुरू कर देते है आम आदमी इस तमाशे पर सिर्फ ताली बजाता रह जाता है।

महानपुरुषों के आचरण का हर युग में अनुगमन होता रहा है, मंत्री एवं अधिकारियों के गुणों का प्रभाव कर्मचारियों पर व्यापक पड़ा है, खरबूजे को देखकर खरबूजा रंग बदल देता है, इसी तरह लक्ष्मी की चाह में आम आदमी भी आचरण की परिभाषा बदलता जा रहा है। दूसरे के दर्द का किसी को परवाह नहीं, सुख का मतलब स्वयं का लाभ रह गया है। अपने लाभ के लिये झूठ बोलना फख्र समझा जाने लगा है। किसी व्यापार की शुरुआत करने से पहले यह समझ लेना जरूरी है कि यदि आप धर्म ग्रन्थों के चक्कर में उलझेंगे तो कभी भी सफल नहीं हो सकते। सत्य सबसे बड़ा तप है धर्म ग्रन्थों एवं महापुरुषों के जीवन का दर्शन है, परन्तु वर्तमान परिस्थति में सत्य बोल कर हम सब्जी की दुकान भी नहीं चला सकते।

हर व्यापारी झूठ बोलता है यदि हम किसी व्यवसायी व्यक्ति के पास अपना सामान यह सोचकर रख दे कि कल ले लेगें परन्तु यदि व्यापारी को मुनाफा हो रहा हो तो वह आप के सामान का भी व्यापार कर देगा। आप जायेंगे तो ऐसी कहानी सुना देगा कि आप दंग हो जायेंगे। सफल व्यक्ति रिश्तों की परवाह नहीं करते यदि उनको लाभ हो रहा हो तो सात वचनों का भी महत्त्व नहीं देते। उधार लेते वक्त हर व्यक्ति कहता है कि कल चुका दूँगा परन्तु कल कभी नहीं आता। उधार माँग कर काम चला लेना फिर नहीं देना राजनीत के अन्तर्गत आता है।

राजनीति की विकृति मानसिकता से जहाँ भद्रजनों को साँस लेना दूभर हो गया है वहीं ग्रह–ग्रह में कुकुरमुत्तों की तरह असंख्य नेता उग आये है। आजादी से पहले नेता त्याग, उत्कर्ष, एवं बलिदान के प्रतीक हुआ करते थे वहीं आज बाहुबली नेताओं के रूप में परिवर्तित हो गये है। झूठे बयान देकर वाह–वाही बटोरकर चुनाव के समय जनता रूपी फसल पर यूरिया की तरह छिड़का जा रहा है। जनता भी अब दूर दृष्टि नहीं बस त्वरित लाभ पाने हेतु अपने मत का प्रयोग कर रही है। किसान भी सिर्फ अपनी फसल को हरा–भरा देखना चाहता है। पड़ोसी कृषक की फसल जल विहीन सूखती देखकर उसे असीम सुख मिलता है स्पात् भक्त को भगवान के दर्शन से भी ऐसा आनन्द प्राप्त नहीं होता होगा। जिस तरह छोटी मछली को बड़ी मछली निगल लेती है उसी तरह गरीब व्यक्ति को पड़ोसी निगलने हेतु मुँह बाये हैं। इस विषम स्थिति में गरीब के प्राण बच सकते है यदि वह बेइमान है, हाँ यदि वह सज्जन है तो उसकी मौत निश्चित है।

बात बनाने का जिनके पास कौशल होता है वे जब चाहे अपनी बात को

परमाणु बम की तरह विस्फोट कर समस्त लोगों को अपने अधीन कर लेते है। इनके सानिध्य में जो भी आता है उसे वही बात सत्य प्रतीत होती है। दरअसल लुतरा व्यक्ति की समाज में कद्र होती है, हो भी क्यों न, ये महानुभाव ग्रामीण भद्रजनों के दूत होते हैं। गाँव में क्या हो रहा है सारा समाचार इनके मस्तिष्क में वेद–मतों की तरह सुरक्षित होता है।

यदि किसी व्यक्ति के हृदय में सत्य जीवित है तो वह सत्य की दुर्दशा देखकर रो अवश्य देगा, कर कुछ नहीं पायेगा। संसार में निर्णय आज बहुमत के आधार पर होता है। बहुमत वही प्राप्त कर सकता है जो बहुत से लोगों को आकर्षित कर सके। सम्भवतः लोग चमकने वाले पदार्थ देखकर ही आकर्षित होते हैं जिनके पास ऐसे पदार्थ होते है, और वे इनका बाखूबी प्रयोग करना जानते है, वे बहुमत प्राप्त कर लेते हैं। आप किसी की भी संपत्ति किसी भी प्रकार हड़प ले यदि लोगों को अपनी तरफ मिला लिया तो न्याय आप के पक्ष में चला आयेगा। न्याय तो बेचारा है जिसमें शक्ति होती है वह उसी के पास चला आता है।

सत्य कडुआ होता है अब आप ही बताये यदि आपके सामने छेना की मिठाई रखी हो तो क्या आप मिर्च खाना पसन्द करेंगे, कतई नहीं। लल्लो चप्पो करने वालों की वाणी में जो मिठास होती है वह हमें बिना खाये ही मिष्ठान का आनन्द प्रदान कर देती है, अब भला संसार में ऐसा कौन मूर्ख होगा जो सिर्फ मिर्च खाना पसंद करेगा। यह बात नहीं कि लोग मिर्च खाते ही नहीं, खाते है तभी तो चाट की दुकान पर मिठाई की दुकान से अधिक भीड़ होती है। दरअसल मिर्च खाने के लिये उसमें मिलावट कर उसकी कडुवाहट को कम कर दिया जाता है। सत्य को पचा पाना कठिन होता है इसलिये सत्य में झूठ मिला कर मजेदार बनाया जाता है। इन बातों की सत्यता कोई भी पारखी व्यक्ति कर सकता है जो पुष्प एवं कागज के फूलों में अंतर करने की क्षमता रखता हो।

दया उदारता, करुणा एवं ममता का गला घोटे बिना लल्लों झूठ बोलने को तैयार नहीं होती। अस्तु जो महानुभाव झूठ बोलने में महारथ हासिल करना चाहते है उन्हें मानवतावादी सोच का त्याग करना होगा। बड़े दुर्भाग्य की बात है कि विश्व में आज कोई भी ऐसा विश्वविद्यालय नहीं है जो झूठ बोलने का कौशल प्रदान करता हो। यद्यपि झूठ की कोई डिग्री अभी तक मेरी जानकारी में किसी भी महानुभाव को प्राप्त नहीं हुई है फिर भी बिना विद्यालय एवं शिक्षकों के जिस तरह झूठ बोलने वालों की फौज तैयार हो रही है उसे देखकर यही लगता है कि एक दिन पूरे विश्व में झूठ का परचम फहराएगा। आखिर क्या कारण है कि लोग झूठ की तरफ आकर्षित हो रहे है।

सम्पन्नता, निःसन्देह हर व्यक्ति अपने जीवन को सुखी बनाना चाहता है। सुख जहाँ से मिलता है उसे पाने के लिये सब लालयित रहते है। आज का मानव भौतिक सुख को ही वास्तविक सुख–मान बैठा है इसे पाने के लिये धन की परम आवश्यकता है। हृदय की रिक्तता आत्मानुभूति द्वारा ही भरती है परन्तु आज इसे भुला दिया गया है। इसको भरने का साधन पैसा पाने हेतु मानव सुगम रास्ते का प्रयोग कर रहा है। यह मार्ग झूठ एवं बेईमानी द्वारा त्वरित लाभ देने वाला है। सत्य एवं ईमानदारी का रास्ता टेढ़ा–मेढ़ा ही नहीं कंटकाकीर्ण है अतः लोग सुगमता से धन संग्रह हेतु झूठ बोलने के साथ बलात्कार एवं हत्या जैसे जघन्य अपराध करने में भी नहीं हिचक रहे हैं।

विश्व के प्रमुख उद्योगपतियों में ऐसा कौन होगा जिसने झूठ का आश्रय न लिया हो, संसार में एड़ी चोटी के अधिवक्ताओं को इस लिये सम्मान मिलता है कि पापी के पाप को अपनी वाणी से धोकर बेगुनाह सिद्ध कर देते है। ऐसा कौन–सा राष्ट्रपति या प्रधानमंत्री होगा जो झूठे भाषण न देता हो। नेता पल–पल में अपना बायान बदलते रहते है जहाँ तक दृष्टि जायेगी आपको झूठ की फसल लहलहाती नजर आयेगी। वायु के झोंकों को रोका नहीं जा सकता इसी तरह झूठ की शक्ति को नकारा नहीं जा सकता। विजय का मुख्य सोत्र शक्ति होती है और आज झूठ एक शक्ति के रूप में उभर कर आया है। विश्व के अनेक देश पड़ोसी देशों की सीमा का अतिक्रमण कर रखा है। वात्ताएँ विफल हो रही है क्योंकि इनके मूल में झूठ ने स्थान बना लिया है सत्य क्या करे शक्ति की जीत होती है।

कर्त्तव्य पालन में कठिनाई ही कठिनाई है। कभी–कभी ऐसा लगता है कि सत्य एवं ईमानदारी की बातें लिखकर कवि एवं लेखकों ने लोगों को गुमराह किया है। शिशु के मस्तिष्क में इन कवियों की बात यदि बैठ जाए तो वह बड़ा होकर पूरे जीवन छटपटाता रह जाता है। मृत्यु रूपसी के समान दिखायी देने लगती है। संसार में कोई अपना दिखायी नहीं देता। असल में सत्य का नशा पागलपन की स्थिति पैदा कर देता है। धरती पर गिने चुने ही लोग होते है जिनके अंदर सत्य का प्रकाश होता है जिसे सत्य का प्रकाश मिल जाय वह उससे मुँह मोड़ नहीं सकता। परिणाम यह होता है कि अपने ही शत्रु बन जाते है। जिसे सत्य से प्रेम होता है उसकी संतुष्टि झूठ में नहीं हो सकती इसी कारण सत्यव्रती को त्रलोक तृण के समान लगता है। वह संसार का त्याग कर देगा परन्तु सत्य का त्याग नहीं कर सकता यदि किसी की ऐसी स्थिति हो जाए तो वह सनकी नहीं तो और क्या कहा जायेगा।

सत्य का अन्त दुःखद होता है झूठे लोग सत्य को बोटी–बोटी कर मजा लेकर

खाते है। परन्तु सत्यवादी झूठ का आश्रय लेकर प्राण भी बचा ले तो भी अन्दर–ही–अन्दर सुलगता रहता है। मिलावट वह भी ऐसी जो सहजता से पकड़ में न आये ऐसे लोग जीवन के हर क्षेत्र में प्रगति करते है। देह आकर्षण ऐसा कौन जिसे प्रभावित नहीं करता। यह दूसरी बात हैं कि यह प्रभाव हर व्यक्ति पर पृथक्–पृथक् उसके विवेक के अनुसार पड़ता है फिर भी वाह्य आकर्षण को पूर्णतया खारिज नहीं किया जा सकता। यही कारण है कि लोग लल्लो–चप्पो करके अपना स्वार्थ सिद्ध करने में सफल हो जाते है। मुँह देखी बात करने वाले आदर के पात्र होते है और सत्य कहने वालों को लोग गाली देते है। सत्य पर चलने वालों को हर युग में यातना सहना पड़ा है परन्तु वर्तमान परिपेक्ष्य में इसका स्वरूप इतना विकृति हो गया है कि यदि लोगों की भूल से इधर दृष्टि भी चली जाय तो तुरन्त नेत्र बंद कर लेते हैं।

कागज के फूलों ने वास्तविक सुमनों के सौन्दर्य को मात दे दिया है। कृत्रिम, पुष्पों के सौन्दर्य का निखार दीर्घ जीवी होता है कदाचित लोग इसी लिए इनको अधिक पसन्द करते है। कागज के फूल गुलदस्ते में अधिक समय तक चमक एवं सुगंध बरकरार रखते है जबकि वास्तविक फूल शाम होते ढल जाते है। कितना भी प्रयास किया जाय डाली से पाटल को तोड़कर उसमें प्राण का संचार नहीं किया जा सकता। देह में प्राण न हो तो शव की सुन्दरता किसी को मोहित नहीं कर सकती। यदि शव को रासायनिक क्रिया द्वारा सुरक्षित भी रखा जाय तो भी वह मात्र देखने के काम आयेगा। अस्तु प्राण विहीन सौन्दर्य हृदय को स्पर्श नहीं कर सकता।

फूल का गुलदस्ते में सजकर कुछ घंटे बाद मुरझा जाना ही इस बात का प्रमाण है कि वह वास्तविक फूल है। वास्तविक पुष्प कुम्हला जाते हैं जब की कागज के फूल हँसते रहते है। अस्तु हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते है कि जिन लोगों के हृदय में दया, ममता, एवं करुणा के भाव होते है संसार उनके प्रति उदासीन हो जाता है। लोग सौन्दर्य के दीवाने ही नहीं अपितु इसे अधिक समय तक गुलदस्ते में सजाकर रखना चाहते है। इसलिए कागज के फूलों को महत्त्वपूर्ण स्थान देते है।

कागज के फूलों ने अपने सौन्दर्य से लोगों को इस तरह मोहित कर दिया है कि अब वे अर्ध मूर्छित अवस्था में पहुँच गये है। जो व्यक्ति इस अवस्था को प्राप्त कर लेता है उसे अपने सुख के सिवा कुछ दिखायी ही नहीं देगा। ऐसे महापुरुष नैतिक एवं अनैतिक की परिभाषा से परे निद्वन्द्व वनराज सदृश विचरण करते है। जो चीज पसन्द आ जाय वह उनकी होकर ही रहेगी। समाज का निर्माण ऐसे ही महापुरुषों के द्वारा हुआ है यही कारण है कि समाज में वास्तविक फूल की परख करने वाला दिखायी नहीं दे रहा है।

फूल कृत्रिम हो या वास्तविक भले ही दर्शक इसका निर्णय न कर सके परन्तु जिस व्यक्ति ने गुलदस्ता का निर्माण किया है वह सत्य के परिचत होता है। दूसरों को धोखा दिया जा सकता है परन्तु जैसे हम स्वयं को धोखा देने लगते है वैसे ही हमारी हृदय की लौ बुझ जाती है। हृदय की बत्ती बुझते ही घोर तिमिर वहाँ अपना डेरा डाल देता है इस स्थिति में व्यक्ति को पता ही नहीं चलता वह क्या कर रहा है, देह से होने वाली क्रिया द्वारा हर व्यक्ति अपने पीछे निशान छोड़ता है जिसे वायुमण्डल धीरे–धीरे समाप्त कर देता है जिस व्यक्ति के हृदय का आलोक बुझ जाता है उसके जीवन का कोई अर्थ ही नहीं रह जाता।

भूतल पर न जाने कितने प्राणी है अभी तक कोई सर्वमान्य मत नहीं, मानव ही वह प्राणी है जो विवेक द्वारा सदा यह प्रयास करता रहा है कि जीवन का क्या प्रयोजन है। क्या अपने सुख से लिपट कर रेशम के कीड़े की तरह समस्त जीवन इति कर देना बुद्धिमता का प्रतीक है। जिस कुटुम्ब के लिये हम पाप–पुण्य में भेद करने को तैयार नहीं, क्या उसके द्वारा हमारी पहचान बन पायेगी। इस विषय पर चिंतन करने की आवश्यकता है। सृष्टि का क्रम है एक जीव दूसरे का भक्षण कर अपने प्राण की रक्षा करते हुये अपने अस्तित्व को बरकरार रखता है, जीवन के इस प्रवाह को प्रकृति अपने प्रयोजन हेतु संचालित करती है।

प्रकृति के नियम को कोई प्राणी तोड़ नहीं सकता, उदर को भरे बिना जीवन को बरकरार नहीं रखा जा सकता। जिन्दा रहने के लिये सभी पेट भरते हैं परन्तु क्या सिर्फ जिन्दा रहना ही जीवन है। मेरे मत से जिन्दा रहने की अपेक्षा महत्त्वपूर्ण है अपने अस्तित्व को संसार में स्थापित करना, जो प्राणी अपने विवेक को जागृत कर चिंतन करेगा वह पायेगा कि हृदय को अंधकार मय करके बेतहाशा दौड़कर एक दिन कुछ नहीं मिलेगा। प्रकाश की एक किरण अंधकार का अंत कर देती है जब तक मानव अपने हृदय में तेल संग्रह कर दीपक नहीं जलायेगा, तब तक कागज के फूल कागज के नहीं दिखायी देंगे।

■ ■ ■

स्मृतियाँ

संसार परिवर्तनशील है यहाँ हर पल परिवर्तन होता रहता है परन्तु यह सहजता से समझ में नहीं आता। शिशु बालक, किशोर प्रौढ़ एवं कब वृद्ध हो जाता है पता ही नहीं चलता। देह का परिवर्तन समय के अधीन होता है परन्तु इसकी अनुभूतियाँ मानस पाटल में स्मृतियों के रूप में सुरक्षित होती है। परिवर्तन स्वाभाविक हो या अस्वाभाविक इसके आगे एक घटना घटती रहती है परन्तु यह इतनी सूक्ष्म होती है कि सहजता से दिखायी नहीं पड़ती। जीवन निरन्तर आगे बढ़ता रहता है जिस तरह रॉकेट के पीछे से निकलता धुँआ गगन में एक लकीर का निर्माण करता है उसी तरह जीवन के पीछे भी चिन्ह छूटते जाते है परन्तु ये अदृश्य होते है। विरले ही लोग इनका ध्यान रख पाते है। जो घटनायें अस्वाभाविक होती है उन से हर प्राणी प्रभावित होता है। मानव हृदय में अदृश्य शक्ति होती है जिसे विकसित किये बिना सही गलत का निर्णय नहीं हो सकता।

अस्वाभाविक घटनाएँ उन्हें भी प्रभावित करती है जिनका इनसे कोई सरोकार नहीं होता दो–चार लोग जहाँ पर बैठे वहीं पर ऐसी घटनाओं की चर्चा छेड़ देते है परन्तु जिन लोगों के साथ ऐसी घटनाएँ होती है उनके मानस में ये सुरक्षित हो जाती है। इस तरह वाह्य जगत में होने वाली समस्त घटनाएँ हर व्यक्ति को किसी–न–किसी तरह प्रभावित करती है, परन्तु इनका प्रभाव हर व्यक्ति में एक जैसा नहीं हो सकता। एक घटना से एक व्यक्ति को जो संकेत मिलता है वही दूसरे व्यक्ति के दूसरी दिशा में मोड़ देता है, घटनाएँ लोगों के हृदय में कौतुहल उत्पन्न करती हैं। इसी प्रभाव से कला का जन्म हुआ है।

जीवन में घटनाओं का होना स्वाभाविक है परन्तु जो घटनाएँ हमारे अनुकूल होती है उनसे हमें सुख की अनुभूति होती है। हमारे सारे कर्म लोभ के अधीन होते है इसीलिये असफलता हमें निराश कर देती है। आशा एवं निराशा धूप–छाँव की तरह जीवन भर साथ नहीं छोड़ती इसलिये स्मृतियाँ भी खट्टी–मिट्टी तो कुछ बिना स्वाद की होती है। जीवन की सारी कडुवाहट अचेतन मन में जमा रहती है अवसर पाकर वह हमारे विवेक पर हावी हो जाती है, ऐसी स्थिति में जीवन से ही घृणा होने लगती है। जब ऐसी स्थिति आ जाये कि घटनाओं की देखगे के सिवा कोई उपाय ही न रह जाए तो किया भी क्या जाए, का निर्णय नहीं हो सकता। संतान की नालायकी को हर व्यक्ति पचा सकता है पर माता–पिता की नालायकी पर सहजता से विश्वास नहीं होता। पर माता–पिता भी नालायक होते है इस सत्य को खारिज नहीं किया जा सकता।

नालायक माता–पिता की संतान यदि उठना चाहे तो उसे समाज में उपहास का पात्र बना दिया जाता है। नाजायज संतान की तरह नालायक माता–पिता की संतान का लोग जीवन दूभर कर देते है। जिस मानव के साथ ऐसी घटनाएँ होती है या तो वह अपने जीवन से पलायन करना चाहेगा अथवा मिसाल बनने का प्रयास करेगा। घटनाओं से उबरने की क्षमता बुद्धि प्रदान करती है। घटनाओं से उबरने के उपरान्त भी स्मृतियाँ हमारा पीछा नहीं छोड़ती।

जिसने गरल का चषक नहीं पिया वह दूसरे की पीड़ा सहजता से समझ नहीं सकता। जीवन की कड़ुवाहट यद्यपि हमें विचलित कर देती है परन्तु दुःख के साथ एक विचित्र अनुभूति भी दे जाती है। संसार में ऐसे अनेकों दृष्टान्त है जिन्होंने आत्मग्लानि का चषक पीकर भी संसार को अमृत प्रदान किया है। महाभारत में कर्ण इसका ज्वलन्त उदाहरण है। संसार का अपमान पीकर बाण संस्कृत के महान कवि बन गये, तो महाकवि कबीर एवं तेलगू के वेमना की जीवन गाथा को भुलाया नहीं जा सकता।

दुःखद स्मृतियों को निचोड़ कर जो रस प्राप्त होता है वह भी अमृत–तुल्य होता है। इस रस का पान किये बिना कोई भी महान नहीं बन सकता। हमें हर स्थिति में संयम रखना चाहिए संयम तभी कायम रह सकता है जब धैर्य धारण करने की क्षमता हो। जीवन में स्मृतियाँ बनती एवं बिगड़ती रहती है कारण कुछ भी हो बस हम इन स्मृतियों को उस दर्पण में देखे जिसमें बिंब दिखायी देता हो।

दुःख से बनने वाली स्मृतियों हमारे विश्वास को झकझोर देती है यदि इस स्थिति में मनोबल गिर गया तो पतन निश्चित है। संसार से टकराने की शक्ति मनोबल से ही प्राप्त होती है अतः हमें मनोबल को सदा बरकारार रखना चाहिए। जो लोग मनोबल की शक्ति को नहीं पहचान पाते वे दुःखद घटनाओं से घबरा जाते है। मानव मस्तिष्क में ऐसी शक्ति समाहित है जो हर प्रश्न का उत्तर देने की क्षमता रखती है आवश्यकता इस बात की है कि हम इसे पहचाने। हमारा कोई अपमान कर रहा है तो उससे झगड़ा करना मूर्खता होगी। यदि किसी व्यक्ति ने यह कार्य किया तो हमें ऐसा कार्य करना चाहिए कि जिसके सामने वह व्यक्ति लुप्त हो जाये। इसी तरह यदि गाँव हम पर हँसा हो तो हम ऐसा कार्य करे कि सारा गाँव एवं समाज उसके सामने विलुप्त हो जाये। अपमान का उत्तर किसी का अपमान करके नहीं दिया जा सकता।

लक्ष्य विहीन जीवन निर्थक हो जाता है, इसलिए हर व्यक्ति को लक्ष्य निश्चित करना चाहिए। बिना बुद्धि को मार्जन किये लक्ष्य का बोध नहीं हो सकता। बुद्धि को स्वस्थ मात्र ज्ञान के द्वारा ही किया जा सकता है अतः हमारे अन्दर ज्ञान पिपासा उत्पन्न होनी चाहिए। यह पिपासा उत्पन्न तभी होगी जब हम में चिंतन करने की

शक्ति हो। चिंतन द्वारा विचार को परिष्कृत करके सत्य का बोध हो सकता है जब तक सत्य का बोध नहीं होगा तब तक स्मृतियों दिगभ्रमित करती रहेगी। इस संसार में ऐसा कोई भी व्यक्ति नहीं मिल सकता जिससे सदा सुख ही मिलता रहे। परिवर्तनशील संसार में कुछ भी स्थिर नहीं हो सकता, फिर रिश्तों की दुहाई देना व्यर्थ है। स्वार्थ व्यक्तित्व को बदरंग कर देता है परन्तु इसे छिपाने के लिए चतुर लोग गहरा रंग पोत लेते है। रंग जब आकर्षण का केन्द्र बन जाता है तब वस्तु की वास्तविक स्थिति छिप जाती है परन्तु वह लुप्त नहीं होती।

धोखा तभी होता है जब हम किसी पर विश्वास करते है। कभी–कभी आस्था भी दुःख का कारण बन जाती है। जब ऐसी परिस्थित से बुद्धि टकराती है तो मानव मूल्य हिलते नजर आते है तब हृदय चीत्कार उठता है। संसार एवं रिश्तों से भ्रम टूट जाता है परन्तु दुर्भाग्य कि बात यह है कि इस घाव की दवा की जगह मोह की पट्टी का प्रयोग किया जाता है। इससे घाव नहीं भरते अपितु अंदर–ही–अंदर सड़ने लगते है। मोह व्यक्ति को कमजोर एवं कर्त्तव्य से विमुख कर देता है।

सुख में ही दुःख छुपा होता है परन्तु सुख सभी पाना चाहते हैं दुःख नहीं। दुःख को दूर भगाने में मानव का समस्त जीवन अर्पित हो जाता है फिर भी वह दुःख को भगा नहीं पाता। छाया का जिस तरह कोई–न–कोई कारण होता है उसी तरह जीवन से ही स्मृतियों का निर्माण होता है। सुख के बाद यदि दुःख आता है तो सुखद स्मृतियाँ से सुख नहीं मिलता। इसी तरह दुःख के बाद जब सुख आता है तो दुःखद स्मृतियों से मन को संताप जरूर होता है। दरअसल मान एवं अपमान में ही हम जीवन को बाँध देते है, हमारा अपमान किसने किया याद रहेगा, पर हमारा उपकार किसने किया, भूल जाते हैं।

दुःखद स्मृतियाँ जीवन को मधुर बनाने में जो योगदान देती है इसके लिए हमें इनका अनुग्रहीत होना चाहिए। इन्हीं स्मृतियों से हमें आत्मबल एवं संघर्ष करने की शक्ति मिलती है। दुःखद स्मृतियाँ ही दुःख से मुक्त होने का वर्त्म प्रशस्त करती है। जिसने दुःख का अनुभव नहीं किया वह मुक्त नहीं हो सकता। स्मृतियाँ निर्माण में वे घटनाएँ भी महत्त्वपूर्ण होती है जो आस–पास घटित होती है। परन्तु ये स्मृतियों धुधँली होती है यदि बुद्धि इन्हें तराशने की क्षमता रखती है तो इनका उपयोग जीवन को मधुर बना सकता है। स्मृतियों का प्रयोग जो अपनी त्रुटियों को दूर करने में करते है वे लोग ही संसार में महान कार्य कर पाते है।

जीवन में स्मृतियाँ बनती एवं बिगड़ती रहती है हमारा ध्यान इस बात पर होना चाहिए कि स्मृतियाँ हमारे मार्ग में बाधा उत्पन्न न कर सकें। इसलिए सहनशील होना आवश्यक है जो सहनशील नहीं वे ज़रा–सी बात पर भड़क जाते है। क्रोध चिंगारी का कार्य करता है चिंगारी जब अग्नि में प्रज्जवलित हो जाती है तो सब

कुछ स्वाहा हो जाता है इसलिए क्रोध पर नियंत्रण आवश्यक है। जिसने क्रोध पर नियंत्रण पा विवेक को जागृत कर कार्य किया है उसने ही शत्रु पर विजय पायी है। वाक् युद्ध से युद्ध अन्यतम् है।

कक्ष में अंधकार होने के उपरान्त भी कर से वस्तुओं का स्पर्श कर हम दरवाजे तक पहुँच जाते हैं जीवन की समस्त समस्याओं का निजात बुद्धि द्वारा सम्भव है बस बुद्धि को स्वस्थ रखने की क्षमता होनी चाहिए। संसार में ऐसा कोई भी तत्त्व नहीं जो मानव को सुख एवं संतोष सदा–सदा के लिये दे सकें इसलिये हानि लाभ से परे मानव को अपना कर्त्तव्य पालन करना चाहिए। जिसे कर्त्तव्य पालन करना आता है वह ही मुक्ति का मार्ग खोज सकता है।

स्मृति सुखद हो या दुःखद इनका गुणगान करके कुछ भी प्राप्त नहीं किया जा सकता। किसी को व्यथा सुनाने से मन हल्का हो जाता है परन्तु दूसरे की पीड़ा अधिकांश लोगों के लिये मनोरंजन मात्र होती है। दुष्ट प्रवृत्ति के लोग असहाय गरीब मजलूम लोगों की पीड़ा का लाभ कमाने लगते है। मजबूरी का लाभ उठाना इनका धर्म होता है। अतः अपनी व्यथा का अपने विवेक द्वारा ही निदान खोजना सर्वोत्तम है।

स्मृतियों का मंथन अवश्य करे परन्तु उसके प्रवाह में बहे नहीं तटस्य रहे तभी शुत्र मित्र में भेद किया जा सकता है। बाहरी शत्रुओं से निपटना आसान होता है विनाश का कारण घरेलू शत्रु ही होते हैं, इनसे सर्वदा सर्तक रहना चाहिए। मित्र का मिलना कठिन है इसलिये सत्कर्म को मित्र बनाना चाहिए। कोशिश के उपरान्त भी मानव स्वाभाव स्मृतियों से पूर्णतया मुक्त नहीं हो सकता परन्तु इनमें निखार अवश्य लाया जा सकता है। दूसरों के व्यवहार का उत्तर हमें सर्वदा अपने ही ढंग से देना चाहिए।

वे स्मृतियाँ जो हृदय में दया, ममता, एवं करूणा के भाव को जल प्रदान करती है हमारी हितैषी होती है, जो घृणा द्वेष का भाव जागृत करे उन्नति में बाधक होती है। अतः स्मृतियों के प्रवाह में बहकर कर्म करने की अपेक्षा सर्वदा विवेक से कार्य करना सुखमय जीवन का मंत्र है। भूतकाल का अनुभव जो भविष्य को ध्यान में रख कर करता है उसका वर्तमान निश्चित मंगलमय होगा।

■ ■ ■

पर्दा

सोचो यदि पर्दा न होता तो संसार कितना बिदूर्प होता सारी कुरूपता को इस पर्दे ने ढक रखा है। जब पर्दा हटता है तब संसार का वास्तविक स्वरूप दिखायी पड़ता है तब ह्रदय दो टूक हो जाता है। ह्रदय को तोड़ने एवं जोड़ने का कार्य पर्दा करता है। पर्दा कई तरह और अनेकों रंग का होता है। लोग अपने को छुपाने के लिये पर्दे का भिन्न–भिन्न प्रकार से उपयोग करते है।

पर्दे के माध्यम से बात को इस तरह गढ़ दिया जाता है कि सब कुछ गोल–मोल हो जाता है, यथार्थ को छिपाने में इसका प्रयोग किया जाता है। नेता अधिवक्ता एवं चतुर लोग प्रायः इस प्रकार के पर्दे का प्रयोग करते है। दरअसल यह पर्दा इतना महत्त्वपूर्ण है कि इसका उपयोग करने वाला सब के आदर का पात्र हो जाता है। इसका प्रारम्भ घुमाव दार बातों से शुरू होता है झूठ इसका आधार स्तम्भ है परन्तु इस झूठ को इस तरह ढक दिया जाता है कि इसकी जगह मूर्ति नजर आने लगती है। यह मूर्ति साधारण नहीं होती इसलिए सब को आकृष्टि कर लेती है।

हर व्यक्ति को अपने धर्म से प्यार होता है इसी के वशीभूत वह अपने धर्म के प्रतीकों से आस्था रखता है। हिन्दु मिट्‌टी की मूर्ति को प्रणाम करता है, पर मुस्लिम नहीं करेगा, पर यदि मूर्ति स्वर्ण की हो तो उसे कोई भी स्वीकार कर लेगा। आस्था मूल्यांकन नहीं करती, बात बनाने की कला जिसको आती है वह जीवन के किसी भी क्षेत्र में परास्त नहीं हो सकता। अपनी झूठी बात सिद्ध कर देगा, इसके लिये वह किसी भी नियम के अधीन नहीं होगा, क्योंकि नियम का निर्माण वह स्वयं अपनी बात से करने में समर्थ होता है। ऐसे लोगों से दूर रहने में ही भलाई है।

आत्मा स्वयं प्रकाश है पर स्वार्थ का पर्दा जब उस पर पड़ जाता है तो वह अपना स्वरूप भूल जाता है। वैसे भी दीपक तले अंधेरा होता है। हमें दूसरों की बुराई स्पष्ट दिखायी पड़ती है। अधिकांश जनों को दूसरों की नुक्ताचीनी करने में जो रस मिलता है उसका आनन्द समुद्र मंथन से प्राप्त अमृत पान करने वालों देवों से भी श्रेष्ठ होता है। इनका प्रफुलित मुख मंडल पूनो के मयंक को भी मात दे देगा। दो युगल के प्रथम मिलन का चरमोत्कर्ष भी इस आनन्द के सामने तुच्छ हो जायेगा। निंदा रस अवर्णनीय है इस रस का पान करने वाले महानुभाव स्यात् महाकवि सूरदास की इन पंक्तियों को गुनगुनायेगें, अविगत गति कुछ कहत न आवत।

हम संसार में चाहे जहाँ चले जाय यह पर्दा सर्वत्र दृष्टिगोचर होगा व्यापारिक

जगत में इसे बखूबी प्रयोग किया जाता है। आज कोई वस्तु अपनी गुणवत्ता के लिये महत्त्वपूर्ण नहीं होती जितनी पर्दे के कारण होती है। गुटका, बीडी, क्रीम पाउडर आदि तरह–तरह के सामान पर्दे के कारण ही सुन्दर बन जाते है। कहीं–कहीं वस्तु से अधिक पर्दे का मूल्य होता है। वस्तु से अधिक पर्दे को सुरम्य बना कर मुनाफा कमाया जा सकता है यह र्निविवाद सत्य है। परन्तु ध्यान रहे पर्दा वस्तु को सुन्दर दिखाता है बना नहीं सकता।

जो चीजे मनोरम दिखती है वे वस्तुतः वैसी नहीं होती पर यह भ्रम सहजता से नहीं टूटता। वस्तु का उपयोग ही उनकी वास्तविक स्थिति से परिचित करता है। इसलिये किसी वस्तु या व्यक्ति को देखकर निर्णय नहीं लिया जा सकता। आवरण की आसक्तता सतही स्तर का ज्ञान होता है इसलिये पर्दा यथार्थ को छिपा देता है लोग जैसे है वैसे दिखना नहीं चाहते इसलिए पर्दे का उपयोग करते है।

विवाह त्यौहार, पार्टी या कोई भी मांगलिक कार्यक्रम बिना पर्दा के सफल नहीं हो सकता। कार्यक्रम की तारीक निश्चित होते पर्दे का आकार बनना शुरू हो जाता है स्पात् कोई ही ऐसा व्यक्ति होगा जो इस समय अपनी बजट को ध्यान में रखकर कार्यक्रम बनायेगा। पर्दे को शानदार बनाने के लिए ऐसे अवसर पर कर्जा लेने वाला स्वयं को बुद्धिमान समझता है क्योंकि यहाँ पर्दा इज्जत का प्रतीक बन जाता है। जहाँ इज्जत का प्रश्न आ जाये वहाँ अपनी नाक कौन कटवाना चाहेगा। हिन्दुस्तानियों की आँख फूट जाय, हाथ पैर कट जाये, परवाह नहीं करते परन्तु यदि नाक कट जाए तो जीना भी व्यर्थ समझते है।

धन के द्वारा बड़प्पन का प्रदर्शन किया जा सकता है परन्तु बड़ा बना नहीं जा सकता। इस धरती पर न जाने कितने कुबेर आये परन्तु आज उनका कही भीं नामोनिशान नहीं मिलता इस सत्य को कोई भी पर्दा ढ़क नहीं सकता। पर्दा उसी को छुपा सकता है जो इसके दायरे में आ जाता है। अगर लोगों के सोचने का दायरा सीमित हो जाए तो फिर उन्हें पर्दा ही दिखायी देगा। समाज पर जहाँ तक दृष्टि जाती है कुरूपता ही कुरूपता नजर आती है। स्यात् ऐसा पहले भी रहा होगा परन्तु वर्तमान युग में मानव की स्वार्थ परायणता की सारी सीमायें समाप्त हो गयी है। शव पर श्रद्धांजलि आँसू की नहीं अब पुष्प मालाओं की दी जा रही है। लोगों के सोचने का दायरा स्व सुख में सिमट गया है।

सीमित सोच का परिणाम परिवार को छिन्न–भिन्न कर देता है परिवार को स्वस्थ रखने के लिए व्यक्ति को अपने स्वार्थ से पर्दा हटा देना चाहिए यदि ऐसा न हो सके तो कम–से–कम पारदर्शी पर्दे का प्रयोग करें। पर्दा यदि पारदर्शी हो तो अवयव के सौन्दर्य में निखार ला देता है। प्रकृति हर निर्माण अपने पूर्णत्व के लिए

करती है तो साथ–ही–साथ असुन्दर को समाप्त भी करती जाती है। प्रकृति सदा सुन्दर रहना चाहती है। इस सौन्दर्य को पर्दा छिपा नहीं सकता। परन्तु प्रयास किया जाता है तब व्यक्ति स्वयं तक सीमित हो जाता है ऐसे लोगों से परिवार में कलह पैदा हो जाती है ऐसा सोच रखने वालों दम्पत्तियों में विवाह विच्छेद हो जाता है। नारी पुरुष की रिक्तता मात्र देह आवश्यकता की पूर्ति तक ही सीमित नहीं होती अपितु जिन दम्पत्तियों में त्याग की भावना जितना अधिक विकसित होगी उनका वैवाहिक जीवन उतना अधिक सफल होगा। अतः जीवन को मधुर बनाने के लिये सेवा एवं त्याग के भाव को हृदय में उत्पन्न करना होगा। स्व का पर्दा हटना उपयुक्त होगा।

घूँघट करना या न करना व्यक्तिगत विचार पर केन्द्रित है इसके लिये किसी को बाध्य नहीं किया जा सकता, व्यक्तित्व का निर्माण विचारों से होता है विचार अगर परिष्कृत न हो तो आचरण की नींव मजबूत नहीं हो सकती। हृदय को शुद्ध किये बिना कोई पवित्र नहीं हो सकता। जिसका हृदय स्वच्छ है वह ही स्वयं पर नियन्त्रण पा सकता है। पाप देह से नहीं मन से होता है। पर्दा आचरण का निर्माण नहीं कर सकता। अपितु, व्यक्तित्व को छुपा देता है।

खाद्य पदार्थ में यदि मिलावट की जाय तो इसका प्रभाव सेहत पर पड़ेगा ठीक इसी तरह सौन्दर्य प्रसाधन की मिलावट त्वजा को क्षति पहुँचती है। इसके बावजूद मानव स्वाद का मोह छोड़ नहीं पाता। स्वाद पूर्ति हेतु व्यजनों को चटपटा बनाने के लिये अत्यधिक मसाले एवं रंगों का प्रयोग किया जाता है। बासी भोजन न करने की सलाह देने वाले अपने घर में तरह–तरह के नमकीन, बिस्कुट एवं फास्टफूड का प्रयोग करते है। अपत्ति काल में लागू होने वाला नियम सामान्य काल में निर्थक हो जाता है। रोगों से सुरक्षित रहना दवा की अपेक्षा हितकर होता है यह जानते हुए भी पर्दें की चमक–दमक पर मुग्ध होकर हम अपना स्वास्थ्य बिगाड़ लेते है।

पर्दा सत्य को भले छिपा न सके पर भ्रम की स्थिति में हमें डाल ही देता है। पर्दे के पीछे क्या है यह जानने को हम व्यग्र हो जाते है। इस स्थिति में पर्दा ही असली लगने लगता है। जब तक यह पर्दा हमारी आँखों पर पड़ा रहता है तब तक वह वस्तु हमें वैसे दिखती है जैसे हम है। वस्तु की वास्तविकता की अनविज्ञता संशय का जन्म दे देती है। संशय की स्थिति में हमारे विचार ही स्वलम्बन बनते है। दो युवा आपस में बात कर रहे हो तो देखने वाले लोगों को उनका भाई बहन का रिश्ता समझ में नहीं आता, दरअसल अच्छे आचरण वाले व्यक्ति को भ्रम वंश बुराई में अच्छाई दिखायी देगी तो अधम श्रेणी के लोगों को अच्छाई में भी बुराई दिखायी देगी। पर्दे का यह कमाल प्रशंसनीय है।

शीलनता भद्रता एवं मृदु वाणी का आश्रय लिये बिना पर्दा कुरूपता को छिपा नहीं सकता। विनम्रता हृदय में शीतलता का अहसास करा देती है इसीलिए देह सौन्दर्य की अपेक्षा हृदय के सौन्दर्य को श्रेष्ठ कहा जाता है। परन्तु हृदय के सौन्दर्य का नेत्रों द्वारा दर्शन नहीं हो सकता। नेत्रों को आकृष्ट करने वाला सौन्दर्य अकाशीय विद्युत सदृश होता है इसका प्रभाव चिरस्थायी नहीं हो सकता। प्रकृति नया सृंजन एक–एक को मिला कर करती है। बाह्य के साथ जहाँ आंतरिक सौन्दर्य का सम्मिश्रण दिखायी पड़ता है वहाँ वातावरण सुरभित ही जाता है जो किसी को भी बिभोर कर सकता है। परन्तु जिस तरह पर्दा कुरूपता को छुपाता है उसी तरह सुन्दरता को भी छुपा देता है।

हर व्यक्ति का अपना दृष्टिकोण होता है यह दृष्टिकोण किसी बाह्य आवरण द्वारा निर्मित नहीं होता। यह ठीक है कि शिशु के विकास में माता–पिता परिवार एवं समस्त परिवेश का योगदान होता है परन्तु इसे ग्रहण करने की सब की पृथक्–पृथक् क्षमता होती है। व्यक्तित्व निर्माण में यह क्षमता सहायक होती है इसी के द्वारा दृष्टिकोण निर्मित होता है दृष्टिकोण द्वारा आदतों का निर्माण होता है ये आदतें भी एक तरह की पर्दा होती है जो हमें छुपा देती है।

आदतों में परिवर्तन सहजता से नहीं हो सकता ये जैसी बन जायेगी हम वैसे ही दिखायी देगें पर्दे से इन्हें अधिक समय तक छिपाया नहीं जा सकता। दो प्रेमी पति–पत्नी बनाने के बावजूद अपनी आदतों के कारण पृथक् हो जाते है। आदतों का सुधार यद्यपि कठिन है पर हम दूसरे की भावना का कद्र कर सकते है। दूसरे की भावना को समझने वाले की सहनशीलता बढ़ जाती है। सहनशीलता द्वारा ही हम दूसरों से आदर पा सकते है। स्वभाव पर पर्दा डालने की कोशिश समस्याओं का निदान नहीं कर सकती। सूर्य काले घनों में छुप जाता है परन्तु निशा नहीं होती मनुष्य की पहचान चरित्र द्वारा होती है पर्दे द्वारा नहीं। अतः जीवन के किसी भी क्षेत्र में बाह्य दिखाया की अपेक्षा गुणवत्ता को ही प्राथमिकता देना मानव कल्याण हेतु हितकर होगा। शरीर एवं समाज का कल्याण इसी में निहित है।

■ ■ ■

प्रीतिभोज

क महोदय का अनुचर मेरा नाम लेकर जोर से पुकारा, सुनकर मैं हड़बड़ा गया। मेरी हालत उस गरीब किसान जैसी हो गयी जिसका कुर्की वॉरन्ट आता है। बाहर आकर देखा तो महाशय मुस्करा रहे थे, उनकी विनम्रता देखकर मैं हतप्रभ हो गया। जेष्ट मास में बिना अभ्रो के एकाएक बरसात मुझे प्रतीत नहीं हो रहा था। गाँवों में बाहुबलियों की जय जयकार होती है, परन्तु आज उनकी उदारता ने मुझे चकित कर दिया। मैं सोच मग्न था कि महानुभाव ने कार्ड निकाल कर मुझे देते हुए कहा, क महोदय ने आप के लिये भेजा है, यह कहकर महाशय अलविदा हो गये।

वे महानुभाव चले गये परन्तु उनके शब्द मेरे हृदय में चुभे हुये थे। क महोदय ने यह कार्ड आप के लिये भेजा है मेरे लिये आप शब्द का प्रयोग सम्भवता गाँव में प्रथम बार और वह भी गाँव के सम्मानित व्यक्ति द्वारा प्रयोग हुआ। मेरे लिये यह विश्व का आठवा अजूबा था। गाँव के लोग अक्सर मुझे जिन शब्दों से सम्बोधित करते है उनका भी व्याकरणिक महत्त्व है, जिस तरह घर में सड़े हुये भोजन को श्वानों को दे दिया जाता है उसी तरह जो शब्द कहीं प्रयोग में नहीं आते गाँव के भद्रजन मुझे अर्पित कर देते है। यदि मैं कुछ बोल दूँ तो पिटाई निश्चित है इससे यह अनुमान लगाना बहुत सहज है कि गाँव वाले मेरा कितना सम्मान करते है यही सब सोचकर आप शब्द मुझे बहुत विचित्र लगा। मानों किसी गधे को आज अश्व कह पुकारा गया हो।

कार्ड लेकर घर आया कँपकंपाते हाथों से उसे खोल कलधौत के समान उसके शब्द चमक रहे थे। अपलक कुछ पल उसे निहरता रहा, उसकी सुन्दरता ने नेत्र बंद कर दिये कर से उसे सहलाने लगा। कार्ड सहलाने से जो सुख की अनुभूति हुई वह मेरे उस सुख को भी फीका कर गयी जो पहली बार सुहाग शर्वरी को प्राणवल्लभा भार्या के कपोल छूकर हुई थी। कार्ड को सहला कर मुझे असीम सुख मिला तो दूसरी तरफ अपनी विवशता पर आँसू आ गये। मैं सोचने लगा स्यात् इस कार्ड को पड़ पाता तो ब्रह्मानंद की प्राप्ति हो जाती। मुझे उन माता–पिता पर क्रोध आया जो संतान तो उत्पन्न कर देते है, परन्तु, उसे अंग्रेजी नहीं पढ़ाते।

आज कल कार्डो का प्रचलन हो गया है जन्म, मरण, परिणय कोई भी कार्यक्रम हो बिना कार्ड छपवाए विधवा के ओप के समान सुन्दर होकर भी सुन्दर नहीं कहा जायेगा। जिस तरह नक्शे के माध्यम से वास्तविक स्थिति को समझ लेते हैं उसी तरह कार्ड की भव्यता से कार्यक्रम की विशालता का अनुमान लग जाता है। कार्ड की कीमत स्नेह की ऊँचाई को प्रदर्शित करने का पैमाना बन गयी है। दरअसल प्रीतभोज के लिए दिये जाने वाले कार्ड थर्मामीटर है इनके द्वारा दूध में कितना जल

है आसानी से आँका जा सकता है। कार्यक्रम की वृहद्ता कार्ड द्वारा निश्चित हो जाती है। प्रीतभोज के गिने चुने कार्ड मुझे मिले है और कई बार प्रीतभोज में गया भी हूँ पर मैं इस निष्कर्ष पर पहुँचा कि लोग अधिक कार्ड छपा लेते है या अपने समान साभ्रांत अभिजात लोगों को बँटने के उपरांत बच जाते है तो मुझे कचड़ादान समझ कर अर्पित कर देते है। एक महाशय के बर्थ–डे पार्टी में गया परन्तु जो अनुभव हुआ वह कल्पनातीत है, यदि लिख दूँ और उन्हें पता लग जाए तो मेरी मौत निश्चित है।

लेखक को समाज में गया गुजरा समझा जाता है किसी भी उत्सव में जाओ लोग दूर से हँसते एवं मजाक करते है। मदारी का बंदर जिस तरह बच्चों के मनोरंजन का साधन होता है उसी तरह लेखक को देखकर लोग मजा लेते हैं। बड़ा समाज सुधारक बना है कुछ लोग व्यंग करते तो कुछ लोग लेखक की मजबूरी का फायदा उठाने में कोई कसर नहीं छोड़ते। पहले आश्वाशन देते फिर गलाकाट देते यदि उनसे कहो झूठ क्यों बोला तो पागल घोषत कर देते हैं। गाँवों में बेइमानों का बहुमत है अतः चुप रहने में ही भलाई है। गाँव छोड़कर जा नहीं सकता अतः समाज के साथ चलना ही पड़ेगा। यही सोचकर क महोदय के प्रीतभोज में जाने का निर्णय लिया।

क महोदय बहुत बड़े अधिकारी है वे किस विभाग एवं किस पद पर कार्यरत है मुझे ज्ञात नहीं, कुछ दिन पहले उनके सुवन का परिणय था। जनेत बहुत दूर शहर में गयी थी। गाँव के अधिकांश लोग जनेत में गये थे। घर–घर में जनेत का आँखों देखा हाल लोग सुना रहे थे। मेरे पास कोई नहीं आया आये भी तो क्यों?गाँव के लोग मधुमक्खियों की तरह फूलों के पास चक्कर लगाते नजर आयेगें लेखक के पास होता क्या है मात्र शब्द अब जरा सोचिए संसार में ऐसा कौन मूर्ख होगा जो इन शब्दों के चक्कर में मधु की मिठास त्याग करे ग्रामीण जनों की बुद्धिमता काबिले तरीफ होती है ये लोग राजहंस की तरह नीर से क्षीर को पृथक करने की क्षमता रखते है। ऐसे प्रतिभावान लोगों को शब्दों के जाल में फंसाया नहीं जा सकता। ये महापुरुष राजनीत में मर्मज्ञ होते है स्वयं गुनाह कर दूसरों को बदनाम ही नहीं जेल पहुँचा देते है। जो लोग निर्दोष को दोषी साबित कर सकते है उन्हें शब्दों से क्या लेना देना ऐसे महानुभाव शब्दों के अर्थ में नहीं उलझते अपितु शब्द का मन चाहा अर्थ लगवा देते है।

लोग मेरे पास नहीं आते फिर भी उनकी बाते वायु देवता की कृपा से मेरे श्रवण तक पहुँच ही जाती है। यदि लोगों का बस चले तो हवा को भी रोक दे, परन्तु सच है प्रकृति के सामने मानव विवश हो जाता है। क महोदय के जनेत का समाचार मैंने सुना कि नर्तकी को क महोदय ने ग्यारह लाख ग्यारह हजार ग्यारह सौ ग्यारह रुपये नगद एवं साथ में जो समान दिया उसकी कीमत को आँकना कठिन था।

क महोदय का अनुचर प्रतिभोज का कार्ड जिस दिन से देकर गया मेरी नींद उड़ गयी। पूरे गाँव में उनके रुतबे के चर्चे हो रहे थे उनकी बातें सुनकर मेरे हृदय पर चक्षुश्रवा लोटने लगता कोसने लगता अपने आप को क्या मिला लेखक बनकर, शाम तक दाल रोटी भी नसीब नहीं होती। हिन्दी के लेखक की जो दशा है वह अकथनीय है कितना अच्छा लिखो लोगों के पास पढ़ने का समय नहीं, प्रकाशक बिना पैसा के छपाने को तैयार नहीं। सत्य से लोगों का मोह भंग होने के कारण साहित्य के प्रति लोग उदासीन हो गये है, इस स्थिति में लेखन कार्य से पेट नहीं भरा जा सकता, इस सत्य को स्वीकार करना पड़ेगा। परन्तु आज मुझे अपने पेट से ज्यादा क महोदय के प्रतिभोज में उपहार देने की चिंता थी।

किसी से मद्द की भी उम्मीद नहीं इस संसार में ऐसा कोई भी व्यक्ति नहीं जो मेरी वेदना समझ सके। इस स्थिति में किस का आश्रय लूँ मन व्यग्र हो उठा। जब मैं हार जाता हूँ तभी परमात्मा का ध्यान आता है। आज जब मुझे संसार से कहीं भी सम्बल नहीं मिला तो मेरा ध्यान माँ सरस्वती की प्रतिमा पर चला गया। माँ की पीतल की मूर्ति क महोदय को भेट कर दूँ, पर वे महानुभाव कहीं इसका गलत अर्थ न लगा ले। जहाँ तक मैंने शादी एवं उत्सवों में उपहार की बातें सुनी हैं कहीं भी किसी ने सरस्वती की प्रतिमा नहीं दी है इस आशंका से हृदय डर गया अतः मैंने मूर्ति बेचने का निर्णय ले लिया।

बड़ी मुश्किल से सौ रुपये का बन्दोवस्त हो सका। दस–दस के नोट थे मुश्किल से सौ का नोट मिला। अब कपड़ों की चिंता सताने लगी ऐसे कपड़े पहनकर वहाँ गया तो लोग क्या कहेंगे, झूठी इज्जत का भूत मेरे ऊपर हावी हो गया इसलिए कि मैंने विद्या की देवी सरस्वती की प्रतिमा बेच दी थी। क महोदय के प्रीतभोज का आयोजन गाँव से सात किलोमीटर दूर एक होटल के प्रांगण में हो रहा था। मेरी वृद्ध साइकिल आज मेरा–बोझ ढोने में असमर्थ थी।

शाम को पाँच बजे पैदल प्रीतभोज के लिये चल पड़ा गाँव के अधिकांश लोग वाहन से जब मेरे आगे निकलते तो हार्न जरूर बजा देते। कुछ लोग गाड़ी रोक कर मेरी तरफ देखते जब उनसे मेरी आँखे चार होती तो उनके मुख पर वितृष्णा युक्त स्मित तैर जाती। किसी असहाय, मजलूम को देखकर अब लोगों को सुखानुभूति होने लगी है आज का समाज कहाँ कहा जा रहा है समझ में नहीं आता। मुझे अपने ऊपर पूरा भरोसा है इसलिए किसी से मदद माँगने की अपेक्षा पैदल ही गन्तव्य तक पहुँच गया वहाँ पर भी परचितों ने हँसी उड़ायी पर क्या करूँ यह तो मेरी नीयत बन गयी है।

क महोदय के प्रीतभोज का आयोजन देखकर मेरे होश उड़ गये। गणतन्त्र दिवस के दिन साउथ ब्लाक नार्थ ब्लाक एवं राष्ट्रपति भवन की जो सुन्दरता रोशनी

से प्रदर्शित की जाती है वह यहाँ के कार्यक्रम के सामने फीकी पड़ रही थी। भोजन करने के लिये अनेकों पांडाल लगे थे तरह–तरह के व्यंजन देखकर मुझे लगा इतनी व्यवस्था दुर्योधन कृष्ण के लिये भी नहीं कर पाया होगा। यह दूसरी बात थी कि कृष्ण सनकी थे तभी तो दुर्योधन के छप्पन प्रकार के व्यंजन छोड़कर विधुर के यहाँ केले का छिलका खाने चले गये। मुझे कृष्ण का यह रूप विचित्र लगा। तरह–तरह के व्यंजनों की सुंगध से मेरी भूख बढ़ गयी जी में आता आज इतना खाऊँगा की जीवन पर्यन्त भूख ही न लगे।

मेरे पास मात्र सौ रुपये थे भय के साथ शर्म भी महसूस हो रही थी। इतने महान मानव को सौ रुपये भेट कर नर्क जाने की तैयारी कर ली थी पर क्या करू मेरी विवशता कौन समझ सकता था। लोग पंक्ति बद्ध हो बड़े–बड़े पॉकेट अबरी में लपटे उपदा कर रहे थे। एक महाशय वहाँ पर बैठे नाम लिख रहे थे उन्हें देखकर मुझे चित्रगुप्त की याद आ गयी। देह छोड़ने के उपरान्त जीव जब यमलोक जाता है तो उसका बहीखाता चित्रगुप्त के पास ही होता है। यमराज को उस जीव के क्रियाकलापों से वही अवगत कराते है। सर को झटका बेकार में मैं भी क्या–क्या सोचने लगता हूँ। चुपचाप उपहार देने वालों की पंक्ति में खड़ा हो गया। नम्बर आया तो सौ रुपये का नोट निकाल कर चित्रगुप्त के हवाले कर दिया। मुझे आश्चर्य हुआ चित्रगुप्त ने मेरा नाम नहीं पूछा। बात अखर गई तो मैने स्वयं अपना नाम उन्हें बता दिया। चित्रगुप्त मुस्काये अहमक आदमी भीख देने वालों का नाम मेरे बहीखाते में नहीं लिखा जाता।

चित्रगुप्त की बात सुनकर लोगों का ठहाका गुंजायमान हो गया आत्मग्लानि से मेरा सिर झुक गया। मौका पाकर चुपचाप वहाँ से खिसका मन में आया घर चला जाऊ पर दूसरे क्षण यह भय मुझ पर हावी हो गया कि यदि क महोदय से मिले बिना चला गया तो गाँव में कैसे रहूँगा। यही सोच कर इधर–उधर घूमने लगा। तभी क महोदय का दर्शन हुआ। बाल भास्कर प्राची से निकलते है तो समस्त सृष्टि जैसे उनके स्वागत में भाव विह्वल हो जाती है उसी तरह क महोदय को घेरे अन्नत लोग आनन्द सागर में तैर रहे थे। क महोदय जिस व्यक्ति से कुशल क्षेम पूछते वह अपने जीवन का धन्य समझ रहा था।

भय एवं आत्मग्लानि से मेरा सिर ऊपर नहीं उठ रहा था। मरता क्या न करता की स्थिति में अहिस्ता–अहिस्ता चलता हुआ क महोदय के समीप पहुँचा। तभी एक महाशय ने मेरा गला पकड़ कर कहा, बेकूफ आदमी कहाँ जा रहा है। साहब जी से मिलना है मैने जीवन की सारी शक्ति लगा कर यह शब्द कहा। महाशय मुस्काये ऐरे गैरे न जाने कहाँ से चले आते है। महाशय के शब्द ह्रदय में चुभ गये उस क्षण मुझे जो पीड़ा हुई उसे छिपा न सका अतः कार्ड को निकाल कर श्रीमान् जी को देते हुये

कहा, साहब जी ने प्रीतभोज कार्ड मुझे भेजा था। उन महानुभाव ने मेरे हाथ से कार्ड ले क महोदय को दे दिया। क महोदय ने कार्ड को बड़े गौर से देखा, फिर मुस्कुराये नालायक आदमी, एक नाम के अनेकों आदमी होते है यह कार्ड गलती से मेरे अनुचर ने तुम्हें दे दिया होगा समझ गये, तुम जैसे तुच्छ मानव से हमारा क्या सम्बन्ध हो सकता है। तुम से अच्छे तो जानवर होते है जिन से दूध एवं माँस प्राप्त होती है तुम तो भूतल पर भार हो। इतना उपदेश देकर क महोदय मेहमानों से कुशल क्षेम पूछने में व्यस्त हो गये।

क महोदय का अनुचर निश्चित ही मुझे गलती से कार्ड दे गया था यह सत्य मुझे आत्मविश्लेषण करने हेतु विवश कर दिया लोग मुझे कार्ड देते है पर मैं कभी उन से नहीं पूछा कि मेरा नाम गलती से तो नहीं लिख दिया। अपनी गलती पर पछताने के सिवा मेरे पास अन्य विकल्प भी नहीं था। क महोदय की बात अन्य भद्र जनों ने सुनी, इस पीड़ा के साथ अच्छा भी हुआ कि अब गाँव के लोग मुझे गलती या भ्रम वश कार्ड तो नहीं देगें। और मैं अब जीवन में ऐसी भूल नहीं करूगा यही सोचकर चुपचाप वहाँ से खिसकना उचित समझा।

पांडाल से बाहर निकलते वक्त एक बार फिर मेरी दृष्टि छप्पन प्रकार के व्यजनों पर चली गयी। आज दोपहर को भोजन नहीं किया था पूरा दिन जल पीकर बिताया यही सोचा था आज खूब खाऊँगा परन्तु वाह रे दुर्भाग्य गरीब मानव को स्वादिष्ट भोजन कहाँ नसीब होता है। लोग अपने बराबर वालों से मित्रता एवं व्यवहार करते है यदि पैसे पास न हो तो रिश्तेदार पहचानने से इंकार कर देते हैं। क महोदय इतने महान मानव, वे भला मुझे कैसे पहचानेंगे फिर उन्होंने मुझ पर बहुत बड़ा उपकर किया जो जीवित छोड़ दिया अन्यथा जो पाप मैंने किया था वह मृत्यु दण्ड से भी धुलने वाला नहीं था।

शुभ्र ज्योत्सना से विभा आच्छादित थी। वर्त्म स्पष्ट दिखायी दे रहा था फिर भी मन में द्वन्द्व था। भूख का अंत हो चुका था न जाने क्यों ऐसी तृप्ति की अनुभूति पहले कभी नहीं हुई थी। सरस्वती की मूर्ति बेचने का दुःख भी खत्म हो गया था, परन्तु कृष्ण के प्रति मेरे मन में जो विचार कुछ देर पहले आया था परिवर्तित हो गया था। विधुरानी के हाथों से केलों का छिलका खाकर जो उन्हें तृप्ति हुई थी वह हजारों वर्ष पुरानी वायु मण्डल में घूमती हुई मेरे भी उदर में पहुँच चुकी थी, अन्यथा क्या कारण हो सकता कि दिन भर कुछ न खाने के उपरान्त भी जो संतुष्टि मिल रही थी वह संसार के समस्त व्यंजनों के स्वाद से अन्यतम् थी। उर पुलकित था कदम अपने आप आगे निकल रहे थे परन्तु मन अब भी सोच मग्न था, वाह रे आदमी धन्य है तू अब विज्ञापन के द्वारा करने लगा प्रेम प्रचार, तेरे प्रीतभोज को सहस्त्रशः धिक्कार।

■ ■ ■

कुटिया

क्षुधा पूर्ति उपरान्त हर प्राणी को आश्रय की आवश्यकता होती है जहाँ पर निर्भय होकर निशा में सो सके। पूरे दिन क्षुधा पूर्ति के उद्यम में इधर–उधर भटकते पक्षीगण संध्या होते नीड़ की तरफ चल देते है। सचमुच क्षुधा भटकने को विवश कर देती है। जीवन की सबसे बड़ी आवश्यकता भूख है। जल एवं भोजन हमें जीवन दायिनी शक्ति प्रदान करते है तो वस्त्र देह की सुरक्षा करते है। अन्न वस्त्र के उपरान्त मानव को एक सुरक्षित स्थान की जरूरत होती है जिसे घर कहा जाता है। जननी के उपस्थ में आते जैसे शिशु भय से रहित हो जाता है उसी तरह दिन भर श्रम करके जब आदमी गृह में आता है तो सारी थकान काफूर हो जाती है।

घर के अनेकों प्रायवाची शब्दों में कुटिया शब्द अत्यन्त अनिंद्य है। प्राचीन काल में जिस मानव को ज्ञान प्राप्त हो जाता था वह सारे बन्धनों को तोड़कर सत्य के अनवेषण हेतु चल देता था। वह निर्जन वन में कुटिया बना कर रहता था। मर्यादा पुरुषोत्तम श्रीराम जब वनवास कर रहे थे तो वे भी पर्णकुटी बना सीता एवं लक्ष्मण के साथ निवास करते थे। ज्ञानी, संयासी एवं गृहस्थ कोई भी हो कुटिया का आश्रय सब को लेना ही पड़ता है।

आज भी भूतल पर न जाने कितने लोग हैं जिनके पास कुटिया नहीं है। दिन भर संघर्ष करने के उपरान्त भी परिवार को पौष्टिक भोजन क्या, दाल–रोटी भी मुहैया नहीं करा पा रहे हैं। जिनका सारा जीवन रोटी एवं वस्त्र में उलझकर रह जाए वे न तो बच्चों को शिक्षा दिला सकते हैं न ही सिर छुपाने के लिये कुटिया का निर्माण कर सकते है। हाँ अपने अभिशप्त जीवन की छाया संतान में द्रुत गति से परिवर्तित करते जा रहे हैं।

गरीबी, कुपोषण एवं शोषण अनेकों रोगों का जन्म देती है। अमीर कभी नहीं चाहेगा की गरीबी खत्म हो इसलिए कि अमीर गरीब को खिलौना बना कर खेलता आया है। धनवान व्यक्ति के लिये गरीब मनोरंजन का वस्तु मात्र है। चलचित्र के कारुणिक दृश्य ह्रदय को प्लावित कर सकते है परन्तु गरीब असहाय का शव लोगों के विनोद का साधन बन जाता है। धनाढ्य एवं कुटिल लोग दूसरों की पीड़ा समझने में असमर्थ होते है क्योंकि ये इतने ऊँचे पहुँच जाते हैं कि वहाँ से आम आदमी चींटी सदृश नजर आता है। मनुष्य, मनुष्य से पशु जैसा व्यवहार सादियों से करता आया है आज इसका रूप भले ही बदल गया हो परन्तु वास्तविकता नहीं बदली है। गरीब का हर जगह शोषण किया जा रहा है।

हर व्यक्ति के जीवन का सपना होता है कि उसके पास कुटिया हो, परन्तु

कुछ गरीब लोग ही अपना सपना अनथक परिश्रम के बल पर पूर्ण कर पाते है। गरीब के जीवन की एक तिहाई कमाई अधिकारी, कर्मचारी एवं मालिक किसी–न–किसी तरह डकार ही जाते है। यदि कोई उन से यह जानना चाहे तो वे बड़े गर्व से कहते है कि हमें भी ऊपर वाले साहबों को देना पड़ता है अपने बेतन से तो कोई दे नहीं सकता लिहाजा उत्कोच लेना हमारी मजबूरी है। किसी भी कार्यालय में जाओ किसी भी काम के लिये जाओ फार्मूला वही है। धन्य है भारत वर्ष आज भी यहाँ ज्ञानियों कि कमी नहीं है ये सोना एवं मिट्टी का एक ही भाव लगाते है।

गरीबों का शोषण उनके मुख से रोटी छीन कर ही नहीं अपितु और भी कई तरीकों से किया जाता है। उन्हें मानसिक रूप से प्रताड़ित किया जाता है वर्त्म बंद कर दिया जाता है कुछ बोल दे तो पिटाई भी कर दी जाती है। गरीब जाये भी तो कहा पुलिस का चरित्र अकथनीय है। पुलिस पैसों के लिए कानूनी कार्यवाही करती है या फिर दबाव में आकर। किसी मंत्री या अधिकारी का आदेश मिल गया तो न्याय की परिभाषा बदल जाती है। न्याय न मिलने का एक कारण साक्ष्य है दबंग लोगों के भय से कोई सत्य नहीं बोल सकता क्योंकि सत्य बोलने का दण्ड गुण्डे सदा देते आये है। सत्य के लिए सुकरात को यदि गरल पीना पड़ा था तो प्रभु ईसा को शूली पर चढ़ा दिया गया था। आज भी संसार में ऐसे ही लोगों का बहुमत है फिर भला ये सत्य को कैसे जिंदा रहने दे सकते है।

गरीब की आमदनी सीमित होती है एक तिहाई भाग अमीर किसी–न–किसी तरह हड़प ही लेते है बाकी जो बचा पेट की आग बुझाने में स्वाहा हो जाता है। यदि कोई पेट काट कर कुछ बचाये भी तो वह रीति–रिवाज की बेदी पर बलि हो जाता है। गरीब का शत्रु अमीर तो प्रत्यक्ष दिखायी पड़ता है परन्तु ये रीति–रिवाज एवं कुरीतियों गरीबों की अप्रत्यक्ष दुश्मन है। गरीब के जीवन की कमाई का एक तिहाई भाग इन रीति–रिवाज एवं अंधविश्वासों को निर्वाहन करने में समाप्त हो जाता है। दुःख इस बात का है कि गरीब जानबूझकर अपने पैर पर कुल्हाड़ी मार रहा है। कहीं शराब पीने का रिवाज है जो धीरे–धीरे आदत में परिवर्तित हो जाता है और ये आदते गरीबों की कमर तोड़ देती है। इसे विडम्बना नहीं तो और क्या कहा जाय कि स्वयं गरीब भी अपना उद्धार करना नहीं चाह रहा है।

समाज में ऐसे लोग है जो चाहते है कि गरीब सदा गरीब ही बना रहे वे उसे जागने के जगह मालपुआ की भेट कर रहे है। दूर दृष्टि रखने वाले लोगों की संख्या सीमित होती है अधिकांश लोग तुरन्त लाभ के महत्त्व को स्वीकार करते है, यही कारण है कि सरकार की गुमराह करने वाली नीतियाँ लोगों को प्यारी लगती है। कुछ लोग गरीबों के उत्थान की बाते तो करते है परन्तु दूसरी तरफ रीति–रिवाज

अंधविश्वास को बनाये रखने में अहम् भूमिका निभा रहे है जाति एवं धर्म को लेकर की जा रही राजनीति इसका ज्वलन्त प्रमाण है। मनुष्यता के मर्म को अपने स्वार्थ की पूर्ति के लिए अपने–अपने ढंग से परिभाषित करने वाले विद्वानों की आज बहुलता है। ये लोग अपने वाक् शक्ति द्वारा मानवता रूपी वृक्ष को शाखाओं में विभक्त कर रहे है।

विश्व जनसंख्या का एक तिहाई भाग गरीबी रेखा के नीचे जीवन यापन कर रहा है। इनमें से एक तिहाई भाग भारत में निवास करता है। गरीबी कुपोषण का जन्म देती है कुपोषण के कारण अनेकों शिशु काल कलवित हो जाते हैं तो अनेकों स्वास्थ्य की समस्या लेकर बड़े होते है। जहाँ ये शारीरिक स्तर से कमजोर होते है वहीं इनका मानसिक स्तर भी विकसित नहीं हो पाता है। गरीब बच्चों का अच्छे विद्यालय में पढ़ना असम्भव है। गरीब बच्चों के लिये सरकार द्वारा किया जाने वाला प्रयास तब तक सफल नहीं हो सकता जब तक देश में दोहरी शिक्षा प्रणाली कायम हैं। जिस तरह हाथी के खाने एवं दिखाने वाले दाँत होते है उसी तरह भारत में प्राइवेट एवं सरकारी शिक्षा हो गयी है। गरीबों के बच्चों को साक्षर बनाने से गरीबों का भला नहीं हो सकता जब तक प्रतिस्पर्धा में इन बच्चों को खड़ा नहीं किया जायेगा तब तक धनाढ्य वर्ग के बच्चे ही उच्च पदों पर आसीन होते रहेगें। इस तरह अमीर गरीब की खाई प्रति दिन बढ़ती जायेगी।

शिक्षा का उद्देश्य बच्चों को प्रकाश देना होना चाहिए। जिसे प्रकाश मिल जाये वह घोर तम में अपना पथ खोज लेता है। शिक्षा के माध्यम से बच्चों का सर्वांगीण विकास होना चाहिए। ज्ञान जब तक क्रिया रूप में परिवर्तित नहीं होगा तब तक अभीष्ट की प्राप्ति नहीं हो सकती। श्रम का महत्त्व समझे बिना कोई स्वलम्बी नहीं बन सकता। अस्तु हमें यह समझना चाहिए कि कोई भी काम छोटा या बड़ा नहीं होता है। महत्त्वपूर्ण यह होता कि हम जो कार्य कर रहे है उसे पूरी निष्ठा एवं इमानदारी से करें।

भ्रष्टाचार मात्र एक देश की समस्या नहीं है यह ठीक है कि इसका प्रभाव हर देश में एक जैसा नहीं होता। परन्तु यह सच है कि भ्रष्टाचार ने गरीबी बढ़ने में अपना योगदान दिया है। जिस तरह देह में प्राण का महत्त्व है उसी तरह जीवन में सदाचार का स्थान है। आचरण से पृथक होकर मानव पशु बन जाता है फिर उसके लिए नियम एवं कानून का महत्त्व नहीं रह जाता वह निर्भय वनराज के सदृश विचरण करने लगता है। ऐसे मानव पर जब प्रतिबन्ध लगाया जाता है तो तिलमिला उठता है इस स्थिति में वह कुछ भी कर सकता है।

मानव स्वभाव को समझ पाना अत्यन्त कठिन है। पशु–पक्षी अपनी संतान के लिये दिन भर भटकते रहते है। एक–एक तिनका लाकर चिड़िया नीड़ का निर्माण

करती है तथा चोंच में दाना ला–लाकर बच्चों को दिन भर चुनाती रहती है। बच्चे जब समर्थवान हो जाते है तो चिड़िया निश्चिन्त हो जाती है। दरअसल पशु एवं पक्षी के संतान प्रेम में स्वार्थ नहीं होता वे कर्त्तव्य का ही जीवन पर्यन्त निर्वाहन करते है परन्तु मानव में ऐसा कर्त्तव्य भाव सर्वदा विलुप्त होता है। आसक्ति जरूर होती है तभी तो परिवार के हेतु मानव धन संग्रह करने में नीति अनीति का पालन नहीं करता। दूसरी तरफ मनुष्य अपनी ही संतान से शत्रुता का व्यवहार करता दृष्टिगोचर होता है। स्यात् इसीलिए मानव को विचित्र प्राणी कहा जाता है।

अधिकांश लोग भाग्य पर विश्वास करते है वे संताने तो उत्पन्न कर देते है पर उसके लिये संघर्ष करना नहीं चाहते। ऐसे बच्चों पर जो बीतती है उसकी कल्पना से हृदय विदीर्ण हो जाता है। ऐसे बच्चे छोटी आयु से ही होटल एवं दुकानों पर काम करने लगते है तो कुछ बच्चे रेलवे स्टेशन एवं किसी भी सार्वजनिक जगह भीख माँगते नजर आते है। कुछ माता–पिता ऐसे भी होते है जो बच्चों से भीग मँगवा कर अपना पेट भरते है। जिन बच्चों के साथ ऐसे घटनाएँ होती है वे समाज में उपहास का पात्र बन जाते है। गरीबी बढ़ने के अनेकों कारणों में एक कारण स्वयं गरीब भी है।

जब तक हम स्वयं अपना उद्धार नहीं करना चाहेंगे तब तक भगवान भी हमारा कल्याण नहीं कर सकता। गरीब जब तक उठने का प्रयास नहीं करेगा तब तक सरकार द्वारा संचालित योजनाओं का उद्देश्य सफल नहीं हो सकता। देश की बढ़ती हुई जनसंख्या ऐसी विकराल समस्या है जो हमारी अर्थव्यवस्था को प्रभावित करती है इस सत्य को स्वीकार कर हर व्यक्ति को अपना कर्त्तव्य निभाना चाहिए। यह धारणा नितान्त हास्यास्पद है कि संतान से मानव को स्वर्ग की प्राप्त होती है। पुत्र के लिये पुत्री की अवहेलना विकृति मानसिकता का प्रमाण है जिसके लिए कन्या भ्रूण हत्या करवा दी जाती है अथवा पुत्र के लिये कई कन्याओं का जन्म दे दिया जाता है जिनका उचित भरण–पोषण नहीं हो पाता है।

पुत्र उत्पन्न होने पर खुशी मानना एवं कन्या के जन्म पर खामोशी छाना सभ्य समाज की पहचान नहीं हो सकती। बेटा–बेटी का भेद हमारी विकृति मानसिकता का सूचक है आधुनिकता पर दाग है। भले ही विज्ञान ने आज अनेकों उपलब्धि प्राप्त की है पर हमारे सोच में अब भी दकियानूसी भरी हुई है तभी तो मनुष्य की पहचान मनुष्यता नहीं अपितु उसके धर्म एवं जाति से हो रही है। ज्ञान की अवहेलना हो रही है। शिक्षा मात्र अर्थ प्राप्त का साधन बन कर रह गयी है धन ही समस्त गुणों का आश्रयदाता बनता जा रहा है। संवेदना प्रतिपल मरती जा रही है जीवन का लक्ष्य स्व सुख में सिमट गया है।

मानव का सोच एवं चिंतन उसको उसी तरह बना देता है। मनुष्य जिस

समाज में रहता है वह उसका निर्वाहन भी उसी तरह करने लगता है। समाज में व्याप्त कुरीतियाँ इसलिए समाप्त नहीं होती क्योंकि हम उनको ढोने के आदी हो जाते है। यह जानते हुए भी कि हमारी आदते खराब है फिर भी हम उन्हें छोड़ने का प्रयास नहीं करते। नारी के प्रति पुरुष की सोच सर्दियों से सकारात्मक नहीं रही इसलिए धर्म की आड़ में नारी को विभिन्न बंधनों में जकड़ा गया है। नारी कोई वस्तु नहीं सही–गलत निर्णय लेने की क्षमता उसमें भी है आवश्यकता उसे जागृत करने की है। वास्तव में जिसके पास ज्ञान होगा वह स्त्री–पुरुष या जाति–धर्म का बंधन स्वीकार नहीं कर सकता, क्योंकि ब्रह्मज्ञानी के लिए समस्त सृष्टि ही ईश्वरमय हो जाती है।

गरीबों के प्रति जिनके मन में सच्ची हमदर्दी है उन्हें गरीबों के उत्थान में अपना योगदान देना चाहिए यह काम मात्र सरकार का नहीं अपितु सभी मनुष्यों का है कि सभी मनुष्य–मनुष्य की तरह जीवन यापन कर सके। गरीबों को इस विषय पर गम्भीरता से चिंतन करना चाहिए कि उनकी संतान अभिशप्त जीवन से मुक्त हो सकें। इसके लिए परिवार सीमित करना अनिवार्य होगा। संतान ईश्वर का उपहार है परन्तु गढ़ने की जिम्मेदारी माता एवं पिता की है। जो माता–पिता अपना यह दायित्वपूर्ण नहीं करते वे मनुष्य कहलाने के हकदार नहीं हो सकते। मनुष्य का उद्धार संतान से नहीं अपितु स्वयं के कर्म से होता है। वासना को तृप्त करने के लिए अनेकों साधन है। विज्ञान ने इस दिशा में काफी प्रगति की है फिर इनका उपयोग करने में संकोच क्यों?

भूख लगी हो तो सूखी रोटी भी स्वादिष्ट हो जाती है। यदि हमें अपने कर्त्तव्य का बोध हो तो वासना हमारा विनाश नहीं कर सकती। अपने सुख के लिए दूसरे के जीवन को दग्ध कर देना मनुष्यता नहीं हो सकती। यह बात गरीबों को अच्छी तरह समझ लेनी चाहिए। गरीब जागे एवं बुराई को छोड़कर संतान को अच्छी शिक्षा दिलाकर भारत वर्ष को महान बनाने में अपना योगदान दें। जब तक भारत के एक तिहाई ये लोग मूलभूत सुविधाओं से युक्त नहीं हो जाते तब तक भारत विकसित राष्ट्र नहीं बन सकता। जिन्हें भारत से प्रेम है और वे इसे विकसित राष्ट्र बनाना चाहते है उन्हें सबसे पहले यह काम करना चाहिए कि हर गरीब के पास अपनी कुटिया हो?

■ ■ ■

हमसफर

जगत के सार्वभौमिक सत्य को हमें स्वीकार करना पड़ेगा कि जीवन का आरम्भ एवं अंत एकांकी होता है। जीवन के आरम्भ एवं अंत से आज भी पर्दा उठ नहीं पाया है अस्तु विचारकों में मतभेद है। यह मतभेद ही हमें इस निष्कर्ष पर पहुँचाता है कि जीवन के अंतिम पड़ाव का ज्ञान हमारे पास सीमित है। जीवन के आरम्भ एवं अंत के बीच के फैसले को कम करने में समय अपना महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाता है इस लिये जो समय के मूल्य को समझते है वे जीवन को व्यर्थ जाने नहीं देते।

मृत्यु जीवन का अंत नहीं अपितु एक विश्राम है गन्तव्य है हर प्राणी का। इस गन्तव्य तक पहुँचने के लिये प्राणी हमसफर की तलाश करता है। जीवन मात्रा अन्नत है जहाँ तक दृष्टि जाती हर प्राणी किसी–न–किसी का अवलम्बन लिये दृष्टिगोचर होता है। अकेला आया प्राणी अकेले चलने में जब स्वयं को थका हुआ महसूस करने लगता है तो इस स्थिति में हमसफर की तलाश शुरू कर देता है। संसार की वास्तविकता को आज तक कोई समझ नहीं पाया वायु के झोंकों ने कभी उठाया तो कभी गिराया है। जीवन कभी ठहरता नहीं परन्तु कभी–कभी लगता है जैसे जीवन रुक गया इसे गतिमय रखने के लिये भी हमें हमसफर की आवश्यकता होती है।

जीवन प्रवाह है इसे गतिमय रखने के लिये भूख प्यास की तरह काम की भी आवश्यकता है। सृष्टि के मूल आधार काम को निंदनीय नहीं कहा जा सकता। हिन्दु धर्माचार्यो ने जीवन के चार लक्ष्यों में काम को भी स्थान दिया है। गृहस्थ आश्रम का निर्माण काम की पूर्ति हेतु ही किया गया है। नर मादा में आकर्षण कर प्रकृति उनके द्वारा अपना प्रयोजन सिद्ध करती है। यदि नारी पुरुष का आकर्षण इतना अनिंद्य एवं सशक्त न होता तो सृष्टि का संतुलन बिगड़ जाता। देह आकर्षण के वशीभूत ही आदम को इस धरती पर आना पड़ा था। सृष्टि के इस सत्य को यदि स्वीकार कर लिया जाय तो किसी प्राणी के चरित्र का मूल्यांकन उसकी मनोस्थिति से लगया जाना चाहिए। जिस तरह क्षुधा से व्यथित व्यक्ति अभक्ष्य भक्षण करके प्राण की रक्षा करता है तो ज्ञानी उसे दोषी नहीं समझेगा उसी तरह हमदर्द हमसफर पाकर यदि कोई प्राणी अपने दायित्व को पूर्ण करते हुये अभिषंग कर लेता है तो इसे गलत नहीं कहा जा सकता।

किशोर अवस्था सपनों की उड़ान लेकर आती है इस उम्र में पशु भी सपने देखते हैं। वृत्त के निर्माण में जिस तरह केन्द्र की मुख्य भूमिका होती है उसी तरह

इस आयु में किशोर अपने जीवन की धूरी किसी माणविका के सौन्दर्य में खोजने का प्रयास शुरू कर देता है। सौन्दर्य की शक्ति मानव क्या पशु–पक्षी को भी अपने तरफ आकृष्ट करती है। पतंगे का दीपक से आकर्षण नहीं तो क्या है जिसे पाने के लिये वह अपने प्राण को न्यौछावर कर देता है। नारी को सौन्दर्य प्रदान कर प्रकृति अपने अपूर्णत्व को पूर्ण करने का प्रयास करती है। निःसन्देह नारी सौन्दर्य प्रकृति की एक अनूठी रचना ही नहीं अपितु एक व्यूह है जो दार्शनिक को भी उलझा देता है। नारी सौन्दर्य ने मानव की कल्पना शक्ति को झकझोरा ही नहीं वरन् अनेको महापुरुषों को चिंतन की दिशा प्रदान की है।

सौन्दर्य निःसंदेह सर्वग्राही है फिर भी हर प्राणी सौन्दर्य को अपने–अपने ढंग से ही ग्रहण करता है। हर सुन्दर वस्तु हर व्यक्ति के लिये अनिंद्य नहीं हो सकती। जब मानव हृदय हमसफर की कल्पना करता है तो सौन्दर्य अपना प्रथम स्थान रखता है। दूल्हा दुल्हन के सौन्दर्य की चर्चा अक्सर हम लोगों के मुँह से सुनते है सौन्दर्य की बात तो सभी करते है परन्तु सौन्दर्य क्या है निश्चित परिभाषा दे पाना कठिन है। देह आकर्षण के वशीभूत बनने वाले हमसफर लम्बी यात्रा तक साथ नहीं चल सकते। युवा इस वास्तविकता से अनभिज्ञ होता है अतः उसके मानस पाटल में बनाने वाले चित्र से यदि कोई हू–बहू बाला मिल जाती है तो वह उसका दीवाना हो जाता है। नारी भी कुछ ऐसा ही चिंतन करेगी तभी तो वह भी अपने मन पंसद चित्र की दीवानी होती है।

सौन्दर्य के माध्यम से उत्पन्न होने वाला यह आकर्षण सतही स्तर का होता है परन्तु किशोरा अवस्था में मानव का चिंतन इतना गहन नहीं होता कि प्रेम की पराकाष्ठा तक पहुँच सकें। सुख सुन्दर व्यक्ति या वस्तुओं से नहीं, अपितु अभिमत को निर्मल करके ही प्राप्त होता है। परन्तु प्रारम्भ में सौन्दर्य आत्मगत नहीं वस्तुगत अधिक दिखायी पड़ता है। इसलिये हमसफर की तलाश करते समय यात्रा के अंतिम पड़ाव तक लकुटी की तरह सहारा देने वाली लाठी की चमक पर मुग्ध हो जाते है, परन्तु यह खोखली लाठी अधिक समय तक साथ नहीं देती शीघ्र ही इसका वास्तविक रूप भी सामने आ जाता है। इस स्थिति में व्यक्ति को असहनीय वेदना से गुजरना पड़ता है।

संसार में हर प्राणी को हमसफर की तलाश करनी पड़ती है बिना हमसफर के यह यात्रा अन्नत में विलीन नहीं हो सकती। फिर भी हर प्राणी का हमसफर एवं लक्ष्य पृथक्–पृथक् होता है। कोई एक दिन के लिये, तो कोई जीवन भर के लिये तो कोई जीवन के बाद भी हमसफर की कल्पना करता है। जिसकी जितनी दृष्टि होती है उसी के अनुसार वह हमसफर की आवश्यकता को भी समझता है और उसी श्रेणी के हमसफर की तलाश करता है। मुझे ऐसा हमसफर चाहिए जो हमारी मूक भाषा

के शब्द दे सकें। क्या इस तरह का हमसफर परिणय द्वारा प्राप्त हो सकता है।

परिणय वासना पूर्ति के माध्यम के सिवा और कुछ नहीं हो सकता। देह आकर्षण के वशीभूत मानव किसी को अंकशायिनी बनाकर कुटुम्ब का निर्माण कर सकता है परन्तु विचारों के सामान्वय बिना चाताक की तरह बिना श्वाति के प्यासा ही रहेगा। कितनी अजीब बात है कि कुछ लोगों के पास सब कुछ होकर भी कुछ नहीं होता जबकि कुछ लोगों के पास कुछ न होकर सब कुछ होता है। जिन्हें हमसफर की तलाश है और वे आयु के इस मोड़ पर खड़े है जहाँ से प्रेम शुरू तो होता है परन्तु उसके उतार चढ़ाव का ज्ञान नहीं होता ऐसे लोगों को सावधानी बरतने की आवश्यकता है। निःसन्देह मनस्थल के बिम्ब से जब तक कोई आकृति नहीं मिलेगी तब तक उसके लिये हृदय में प्यार उत्पन्न नहीं हो सकता। किसी के लिये हमारे हृदय में प्यार उत्पन्न हो इससे पहले यह परम आवश्यक है कि हम उसके विचारों को अपने विचारों द्वारा कसकर उसकी मजबूती जान लें।

किसी को हमसफर बनाने से पहले उसके विचारों को समझ लेना अपरिहार्य है यदि ऐसा नहीं हुआ तो निःसन्देह विचारों में सामांजस्य स्थापित करके जीवन को सुचार रूप चलाया तो जा सकता है, परन्तु जीवन किस दिशा में जा रहा है इसका भान रखना कठिन होगा। जिस मानव को दिशा का ज्ञान नहीं होता वह जीवन में लक्ष्य को प्राप्त नहीं कर सकता। हमें ऐसा हमसफर नहीं चाहिए जो हमारे जीवन में खुशियाँ भर दें हम ऐसे हमसफर की कल्पना करते है जो हमारे आँसू पोछने की क्षमता रखता हो। मैं दुःख से कभी नहीं घबराता परन्तु मानव की स्वार्थ परायणता की पराकाष्ठा देखकर आँसू अवश्य बहा देता हूँ। ऐसे समय हमसफर की कल्पना जाग उठती है जो स्वार्थ से परे हो।

संसार में कोई स्वार्थ से परे नहीं हो सकता बिना स्वार्थ के क्या कोई किसी से प्रेम करेगा। यद्यपि इस सत्य को खंडन करना मेरे लिये कठिन है फिर भी क्या भगवान का प्रेम भक्त से किसी स्वार्थ के वशीभूत होता है। जो पूर्ण हो उसे किसी अपूर्ण की क्या आवश्यकता। संसारिक प्राणी अपने अपूर्णत्व को पूर्ण करने हेतु ही किसी से प्रेम करते है नारी पुरुष के प्रेम का यही रहस्य है। जड़ पदार्थो से निर्मित देह की रिक्तता कभी पूर्ण नहीं होती यह चक्र है जिसमें देहे नयी देहों का निर्माण कर विलीन हो जाती है। परन्तु खेद है इस देह में रहने वाला चैतन्य प्रकृति के इस खेल का प्रयोजन समझने का प्रयास ही नहीं करना चाहता।

एकांकी जीवन जीना हर व्यक्ति के लिये सुगम नहीं हो सकता। अतः इस स्थिति से उबरने के लिये हम तरह–तरह के ऐसे कार्यों में संलग्न हो जाते है जिनके द्वारा मन को सुख मिले। मन को संतुष्टि पहुँचाने के लिए मानव आदि काल से कला का आश्रय लेता रहा है। ललित कलाओं द्वारा मन को संतुष्टि के सिवा कुछ

नहीं मिलता, परन्तु मन की संतुष्टि से बढ़कर और कोई बड़ा सुख भी नहीं हो सकता। मन को संतुष्ट करने के लिये सारा जीवन प्रयास किया जाता है फिर भी मन संतुष्ट नहीं होता, सर्व प्रथम लगता अमुक बाला को पाकर जीवन कृतार्थ हो जायेगा इस समय मन की संतुष्टी बाला के सौन्दर्य के शीतलता से मिलती प्रतीत होती है यही कारण उसको आत्मसात करने के लिये हृदय व्यग्र हो जाता है।

वासना के पूर्ति का सर्वमान्य सामाजिक नियम परिणय है यद्यपि देखने में यह सफल लगता है। वंश परम्परा की देन इसी पद्धति द्वारा हुई है। संसार में अनेकों वंश परम पराये एवं उनका इतिहास है। परन्तु जब भी मेरी दृष्टि मानव समूह से हटकर पशु एवं पक्षियों के समूह पर जाती है तो हतप्रभ हो जाता हूँ। चिड़ियों की चहचहाहट सुनकर मैं यह समझने की प्रयास करता हूँ कि वे क्या कह रही है। यद्यपि उनकी भाषा मेरी बुद्धि से परे है तथापि उनका स्फूर्ति से भरा शरीर एक दूसरे से लुरयाते एवं एक साथ अनेकों गौरैया को चुनते देख मैं इस निष्कर्ष पर नहीं पहुँच पाता कि इनमें कौन किसका पति एवं कौन किसकी पत्नी है। सब प्रसन्न है बस मुझको केवल इतना दिखता है। एक शक्कर के टुकड़े को दस चीटियाँ खाती है क्या संसार में प्रेम का ऐसा मिशाल मानव समूह में कहीं दिखायी देगा।

परिणय से कुटुम्ब का निर्माण हो जाता है परन्तु भार्या हमसफर नहीं हो सकती। देह आवश्यकता प्राकृतिक है। मात्र इसकी पूर्ति सफल दम्पत्ति जीवन का आधार स्तभ नहीं हो सकती। देह आवश्यकता पूर्ति की धुरी पर जीवन कायम है परन्तु जीवन का मर्म इससे परे है जिसे समझना सहज नहीं। घर से निकलने के उपरान्त भटक जाना स्वभाविक है परन्तु जो समय पर घर आ जाये उसे भूला हुआ नहीं कहा जा सकता। इसी तरह कर्त्तव्य–पालन करते हुये वासना की पूर्ति कर लिया तो उसे दोषी नहीं कहा जा सकता। परन्तु वासना जब कर्त्तव्य में बाधा उत्पन्न कर दे तो पाप में परिवर्तित हो जायेगी। एक संस्कृत विद्वान् का मत है। वरं वेश्या पत्नी न च पुनर विनीताः कुलवधू।

रमणी का लावण्य अथाह जल में घूमते भँवर की तरह चिंतन को अपने में समाहित करने का प्रयास करता है। इस स्थिति में दूर दृष्टि रख पाना कठिन होता है। इस सम्मोहन के वशीभूत नारी अवयव की सुकुमारता अभिमत को पल्लवित करती कल्पना लोक पहुँचा देती है। मृदुलता के वशीभूत स्वच्छ उर में पवित्रतम् भावों का सृजन होता है। इस स्थिति में नारी त्याग एवं ममता की मूर्ति प्रतीत होने लगती है तब उसके प्रति प्रेम का उदय हो जाना उषा की तरह हृदय से तिमिर का विनाश कर देता है। ऐसी रमणी को हमसफर बनाने के लिये हृदय को व्यग्र हो जाना स्वाभाविक है। परन्तु देह आकर्षण की कल्पना जब वास्तविकता से टकराती है तो नारी देह से परे दिखायी देने लगती है।

त्याग, करुणा, ममता, एवं दया की प्रतिमूर्ति नारी है। नारी में यदि इन गुणों का लोप हो तो वह उर्वशी होकर भी भार्या बनने लायक नहीं हो सकती। पत्नी एवं हमसफर में अंतर होता है पत्नी अधिकारों की बात करती है सात् वचनों में बंधी होती है उसका अपना कुटुम्ब होता है। परन्तु हमसफर इन सब से परे इस अन्नत यात्रा में एक पल भी रुके बिना बस अपने हमसफर के वर्त्म को कंटकों से बचाने का प्रयास करता है। स्वयं जलकर प्रकाश का उत्सर्जन इसलिये करता है कि उसके हमसफर के करीब तिमिर न आ सके। हमसफर वही होता है जो अपने हमसफर के लिये यात्रा करता है उसकी अपनी कोई मंजिल नहीं होती, इसलिए उसका अपना सुख–दुःख नहीं होता बस अपने हमसफर के अधरों पर स्मित देखना चाहता है इसी कोशिश में उसका सारा जीवन अर्पित हो जाता है।

प्रकृति का नियम है रंग अपने ही रंग में विलीन होता है यदि ऐसा नहीं हुआ तो दो रंगों के मिलने पर एक का बोध नहीं होगा। रंग बदरंग हो जायेगा। संसार द्वन्द्वात्मक है अस्तु हम किसी से प्रेम करें और उसका उत्तर वह प्रेम ही देगा आवश्यक नहीं, उसका उत्तर घृणा भी हो सकता है ऐसी स्थिति में स्वयं पर संयम रखना नितान्त आवश्यक है। पति–पत्नी बनने के बावजूद भी लोग विवाह विच्छेद कर लेते हैं ऐसा इसलिए होता है कि हमारी सोच स्वार्थ की संकीर्णता में उलझकर सुख की तलाश में एक के बाद एक और गलती करती रहती है। सुख आंतरिक शान्ति से ही प्राप्त किया जा सकता है बाहरी जगत में यह दिखायी तो देता है परन्तु पकड़ में नहीं आता। जो तुम से प्रेम करे उससे घृणा मत करो। भौतिक सुख एवं परिवार का निर्माण कर लेना अलग बात है परन्तु जीवन का सफल उपयोग कर लेना सबके बस की बात नहीं है।

जीवन का सफल उपयोग वही कर सकता है जिसको सच्चा हमसफर मिल जाता है। सच्चा हमसफर वही बन सकता है जिसको अपने वास्तविक लक्ष्य का बोध होता है। दो प्रेमी पति–पत्नी बनने के उपरान्त भी अलग क्यों हो जाते है क्या उनकी देह की आवश्यकता पूर्ति नहीं होती। होती है परन्तु सिर्फ देह की आवश्यकता की पूर्ति द्वारा जीवन को मधुर नहीं बनाया जा सकता। समलैंगिक विवाह को अप्राकृतिक इस लिये कहा जाता है कि इसके द्वारा नवीन परिवार क सृजन नहीं हो सकता, परन्तु वासना की संतुष्टि से बढ़कर इन्हें जो संतोष प्राप्त होता है उसी के वशीभूत वे एक दूसरे को हमसफर बना लेते है। इनकी दीवानगी प्रशंसनीय है। प्रतिमा भक्त के लिये प्रतिमा नहीं स्वयं भगवान होते है कोई भले इसे पागलपन कहे परन्तु प्रतिमा के दीवानों का आनन्द कोई सच्चा प्रेमी ही समझ सकता है।

प्रेम की उत्पत्ति भले ही देह आकर्षण से हो परन्तु मानवीय उच्चतम् मूल्यों का

सृजन इसी भाव के वशीभूत होता है। जिस व्यक्ति को प्रेम करना नहीं आता वह कभी भी त्याग नहीं कर सकता बिना त्याग के मानव का निर्माण नहीं हो सकता। यदि हम पशुता की बात करे तो कहीं–कहीं पशु मानव से श्रेष्ठ दिखायी पड़ता है। अतः प्रेम विहीन हृदय को यंत्र कहना उपयुक्त होगा। स्वार्थ के द्वारा ही इसका संचालन होता है। किसी से प्रेम करना मानव हृदय की सार्थकता है परन्तु प्रेम करने से पहले यह जान लेना नितान्त आवश्यक है कि क्या आप जिससे प्रेम कर रहे है वह इस योग्य है। पात्र में यदि छिद्र हो तो कितना भी जल भरो बह जायेगा। इसलिये पात्र की खूबसूरती पर मुग्ध होने के उपरान्त भी यह ज्ञान अवश्य करे कि उसमें कही छिद्र तो नहीं है।

जो तुम से प्रेम करे उसकी भावना का कद्र करो परन्तु उसे परखे बिना हमसफर न बनाएँ। पत्नी बन जाना आसान है कुछ लोग विवाह से पूर्व एक दूसरे को जानते भी नहीं क्या उसका वैवाहिक जीवन सुखमय व्यतीत नहीं होता। विवाह के बंधन में बँधने के उपरान्त समाज एवं धर्म की आड़ लेकर जीवन निर्वाह कर लेना जल के प्रवाह में बहने जैसा है लोगों की भीड़ में गुम हो जाना है। ऐसा जीवन कोई मायने नहीं रखता जो खद्योत की तरह एक पल चमक कर बुझ जाता है जीवन की सार्थकता तभी है कि धरती पर वह अपनी ऐसी चमक छोड़े कि उसके जीवन के अंत के बाद भी दीपक की तरह लोगों को आलोक देता रहे।

नारी, पुरुष एक दूसरे के पूरक है इसलिए जो नियम इसमें विषमता को रखकर लागू होता है, मुझे स्वीकार नहीं। पत्नी हमसफर नहीं हो सकती जो लोग हमसफर की तलाश में है उन्हें अपने विचारों से मिलने वाली बाला को ही पत्नी बनाना चाहिए। विचारों में सामन्जस्य स्थापित किया जा सकता है परन्तु जिन्होंने नकली पंख लगा लिये है वे अधिक समय तक व्योम में विचरण नहीं कर सकते। सत्य का नकल नहीं हो सकता, सत्यनिष्ट हृदय ही सत्यनिष्ठ हृदय की वेदना समझ सकता है। हमसफर कोई भी हो सकता है इसके लिये पत्नी होना अनिवार्य नहीं। वास्तविक हमसफर वही है जो समस्त बंधनों से रहित अपने हमसफर को अंतिम लक्ष्य तक पहुँचाने के लिये समीर की तरह उसे शक्ति प्रदान करता है इस लिये हमसफर सगुण ही नहीं निर्गुण भी हो सकता है।

■ ■ ■

मुक्ति का मंत्र

प्राचीनकाल में ऋषि गण मंत्र का जाप करके अपने इष्ट को प्रसन्न कर अभीष्ट वरदान प्राप्त कर लेते थे। पुराणों में ऐसी अनेको कथाएँ विद्यमान है। राक्षस भी मंत्र के प्रभाव से अपना मनोरथ सिद्ध करते थे। यह बात बहुत विचित्र लगती है कि विधाता उनके मनोभावों को जानते हुये कि ये शक्ति का दुरुपयोग करेंगे फिर भी उनकी तपस्या का फल प्रदान कर देते थे। वास्तव में कर्म का फल कभी अक्षय नहीं होता, परिश्रम करने वाले का उद्देश्य जानते हुये भी प्रकृति उसे पुरस्कृत करती है सृष्टि का यह नियम अटल है। आम एवं बाबूल के तरु एक साथ बढ़ते है, धरती दोनों को भोजन प्रदान करने में भेद नहीं करती। प्रकृति का नियम पक्षपात पूर्ण नहीं हो सकता सृष्टि का यही मूल मंत्र है।

संसार का मूल मंत्र स्वार्थ है। रिश्ते नाते, प्यार मात्र शब्द है इनका अर्थ समझ पाना जटिल है। जननी जनक भी स्वार्थ से परे नहीं होते फिर संसार के किस रिश्ते को निःस्वार्थ कहा जाय। जगत में इस सत्य को हमें एक दिन स्वीकार करना पड़ेगा कि अकेले आये हुये प्राणी को यात्रा भी अकेले करनी पड़ेगी। रिश्ते मात्र, स्टेशन है यहाँ थोड़ी देर विश्राम के सिवा कुछ नहीं मिल सकता। थके हुये प्राणी को जब थोड़ा–सा आराम मिल जाता है तो वह अपना गन्तव्य भूल जाता है प्लेट फार्म को घर समझ बैठता है, परन्तु यह भ्रम अधिक समय तक कायम नहीं रह सकता शीघ्र ही उसे वास्तविकता का बोध हो जाता है।

वास्तव में रिश्तों का रस चटपटा होता है इसी कारण हम अदला–बदली के आदी हो जाते है। माता–पिता भी बदल जाते है, जब कोई किसी की संतान को गोद ले लेता है। भार्या–भरतार अदला–बदली होते है कौन–सा रिश्ता है जो बदल नहीं जाता। संसार के सभी रिश्ते बनावटी होते है इसीलिये ये कभी भी टिकाऊ नहीं हो सकते। जो वस्तु टिकाऊ न हो वह चाहे कितनी भी चमकीली हो एक दिन अपनी अनिंद्यता अवश्य खो देगी। वास्तव में कुछ वस्तुएँ अपने चमकीलेपन के कारण हमें अपनी तरफ आकर्षित करती हैं परन्तु उनको छूने के बाद यदि वातावरण के अनुकूल उन्होंने अपने तापमान को बरकरार नहीं रखा तो हम उन्हें छोड़ने को व्यग्र हो जाते है। इसको छोड़ा उसको पकड़ा इसी भी जीवन की इति श्री हो जाती है। साधारण–सी बात आखिर हमारी समझ में क्यों नहीं आती है कि संसार का मूल–मंत्र स्वार्थ है।

स्वार्थ को स्वार्थ के द्वारा काटा नहीं जा सकता। जब हमारा स्वार्थ डगमगाता

है तब हमें दूसरों की बुराई स्पष्ट दिखायी देने लगती है। स्वार्थ के वशीभूत ही हम किसी से प्रेम करते है। यदि हमारे स्वार्थ सिद्ध में व्यवधान उत्पन्न हो जाए तो प्यार घृणा में परिवर्तित हो जाता है जिस तरह रवि की गति से परछाई का सम्बन्ध है उसी तरह समस्त रिश्ते स्वार्थ के धरातल पर टिके है। शिशु के प्रति माँ का प्यार भी निःस्वार्थ नहीं, अपितु प्रकृति प्रदत्त उस शक्ति के आधीन होता जो सृष्टि के संचालन में अपना महत्त्वपूर्ण योगदान देती है। समस्त चराचर इसी शक्ति के अधीन अपने संतान का भरण–पोषण करते है परन्तु पशु, पक्षी, एक सीमा के उपरान्त इस शक्ति के प्रभाव एवं रिश्तों से मुक्त हो जाते है पर मानव के स्वार्थ की सीमा असीमित है इसलिये वह रिश्तों के मोह से मुक्त नहीं हो पाता।

तरुओं का झुकाव प्राची की तरफ अधिक होता है क्योंकि दिवाकर की यात्रा इसी दिशा से आरम्भ होती है। अनुकूलता ही झुकाव का कारण है। माता–पिता में भी जो शिशु को आकर्षित करने में अधिक निपुण होगा उसकी तरफ शिशु का झुकाव धीरे–धीरे स्वभाव में स्थायी रूप से बैठ जायेगा। जो झुक जाता है वह सीधा नहीं हो सकता कारण कुछ भी हो, यदि कोई तराशना चाहेगा तो उसे उपहास का पात्र बना दिया जायेगा। कुटुम्ब में सही बात कहने वाले का मजाक उड़ाया जाता है क्योंकि स्वार्थ हमें सत्य से पृथक् कर देता है। स्वार्थ का सीधा सा मतलब फायदा है यह फायदा कई तरह का होता है लोग कड़वी दवा का प्रयोग भी लाभ के लिये करते है यदि रोग खत्म हो जाये तो जिस तरह दवा बंद कर देते है उसी तरह स्वार्थ सिद्धि के उपरान्त चतुर लोग रिश्तों की आवश्यकता भी समाप्त कर देते है।

असल में रिश्ते भी माला की तरह है जो लोग इनका जाप करते है उन्हें इनको पीछे तो करना ही पड़ेगा। एक मनका के पीछे होने के उपरान्त ही दूसरी अंगुली के समीप आती है मनकाओं के बदल जाने से मंत्र नहीं बदला करता क्योंकि मंत्र तो गुरु का दिया हुआ अनमोल अस्त्र है। अस्त्र नहीं तो सुरक्षा भी नहीं वास्तव में अस्त्र ही शक्ति का पुँज है इसी कारण हर देश आधुनिक विनाशकारी अस्त्रों को संग्रह करते है। जिस तरह विजय का मंत्र अस्त्र है उसी तरह व्यक्ति का मंत्र स्वार्थ होता है। अपने स्वार्थ हेतु ही वह रिश्तों की माला जपता है जैसे ही उसका स्वार्थ सिद्ध हुआ रिश्ते बेमानी हो जाते है। पुत्र के लिये माता–पिता का प्यार तब तक आकर्षण का केन्द्र है जब तक उसकी आवश्यकताएँ पूर्ण होती रहती है आवश्यकताओं का अंत रिश्तों का अंत कर देता है इसी तरह जरूरत रिश्तों का निर्माण करती है।

प्राणी जगत में अकेला जन्म लेता है रिश्तों को पकड़ कर ही वह आगे बढ़ता है। शिशु जैसे–जैसे बड़ा होता है स्वयं को रिश्तों से घिरा हुआ पाता है। वृक्ष की मूल जड़ से निकल कर अनेकों जड़े उसे सम्बल प्रदान करती है। इसी तरह मानव

को रिश्तों से सांत्वना प्रदान होती है। कभी –कभी तो ऐसा भी लगता है जैसे हम पूर्णतया रिश्तों पर आश्रित है। जिन व्यक्तियों में ऐसी धारणा बन जाती है उनका मूल विकास कुंद हो जाता है। तीव्र वायु का वेग उन वृक्षों को उखाड़ देता है जिनकी मूल जड़ का विकास नहीं होता। मूल जड़ से निकली जड़ें चाहे कितनी लम्बी हो जाए वे वृक्ष को वह मजबूती नहीं दे सकती जो मूल जड़ प्रदान करती है। वृक्ष अपनी लम्बाई के बराबर यदि अपनी मूल जड़ को गहराई में उतार दे तो वह आँधियों से भयभीत नहीं हो सकता। इसी तरह जो मनुष्य रिश्तों पर आश्रित होकर जीवन यापन करते है एवं अपनी मूल जड़ अर्थात् स्वयं की शक्ति को पहचान कर उसको विकसित नहीं करते उनको कभी–न–कभी रोना अवश्य पड़ता है।

रिश्ते कितने ही आत्मीय हो एक दिन उनका स्वरूप बदल जाना निश्चित है। संसार में कुछ भी स्थिर नहीं फिर रिश्ते स्थिर कैसे हो सकते है। मानवीय स्वार्थ ने रिश्तों का निर्माण किया है। जीवन गतिमय है और यह गति ही रिश्तों के मानदण्ड को परिवर्तित करती है। रिश्तों की वैसाखी के अपेक्षा हमें स्वयं की शक्ति से संसार में पहचान बनानी चाहिए, सफलता का मूल मंत्र यही है। संसार में जिन लोगों ने महान कार्य किये है, उन्हें अकेले ही आगे बढ़ना पड़ा है। रिश्ते सम्बल एवं भटकन दोनों प्रदान करते है, तथा एक जैसे सदा नहीं रहते, इसलिये उपयुक्त यही होगा कि रिश्तों के निर्वाहन में कर्त्तव्य को महत्त्वपूर्ण स्थान दें।

भावना के प्रवाह में बहकर जब ठहरते है तो पास में पानी की बूँद भी नहीं होती। इस छटपटाहट को शब्द–बद्ध नहीं किया जा सकता। जब जीवन का लक्ष्य केवल सुख हो जाता है तो दूसरों की भावना का अर्थ समझा नहीं जा सकता। जब तक दूसरों की पीड़ा की अनुभूति स्वयं में नहीं होगी तब तक भावना का महत्त्व समझा नहीं जा सकता। भावना विहीन हृदय पाषाण सदृश संवेदना से रहित मानव को यंत्र में परिवर्तित कर देता है। जिस हृदय में करुणा नहीं वह मनुष्य कैसे हो सकता है विश्व की जनसंख्या बढ़ रही है परन्तु मनुष्यों की संख्या घट रही है।

भौतिकवाद ने मानव जीवन में अभूतपूर्व परिवर्तन किये है आज का मानव संवेदना खो चुका है इसलिये अब वह मात्र यंत्र बन गया है। व्यवसायीकरण के इस दौर में रिश्तों का अमूल हो जाना आश्चर्य की बात नहीं अपितु सामान्य बर्ताव में शामिल हो गया है। लोग बराबर वालों से रिश्ते जोड़ते है। रिश्तों के निर्माण का केन्द्र बिन्दु धन बन गया है इस स्थिति में रिश्तों का मूल्यांकन किया जाए तो इनसे रक्त नहीं पानी टपकेगा। रक्त के रिश्तों का कोई अर्थ नहीं रह गया है। इस विषम परिस्थिति में जिन्हें अपने भविष्य से प्रेम है उन्हें संघर्ष करके अपने लक्ष्य को प्राप्त करना चाहिये, अन्यथा एक दिन पछताना पड़ेगा।

संसार का मूल मंत्र स्वार्थ है इसे प्राप्त करने के लिये मानव आदि काल से व्रत, तप, एवं पूजा करता आया है। तपस्या का परिणाम अवश्य प्राप्त होता है कर्म का विधान यह अटल है। महत्त्वपूर्ण बात यह है कि हम जिस मंत्र का जाप कर रहे है उसके द्वारा पाना क्या चाहते है। यदि पाने की इच्छा मानव खो दे तो वह मुक्त हो जाता है। इसलिए जो मंत्र का जाप करते है वे निष्काम नहीं हो सकते। यदि हम किसी के दरवाजे पर बैठ जाए और उसकी एक कप चाय पीलें तो हमें उसकी हाँ में हाँ मिलना पड़ेगा। उत्कोच का प्रभाव आज चारों तरफ अपना हुनर दिखा रहा है जो कार्य व्रत पूजा एवं तपस्या से सम्पन्न नहीं होता उसे रिश्वत देकर आसानी से पूरा किया जा रहा है।

लक्ष्मी का सौन्दर्य नेत्रों को ही नहीं अपितु धारणा को भी शिथिल कर देता है। उलूक को वाहन बना कर स्यात लक्ष्मी यही संदेश देती है कि दिवा एवं निशा का अंतर मानव समझ सके। पाप एवं पुण्य में जब तक भेद करने की क्षमता हमारे अन्दर विकसित नहीं होगी तब तक हम दूर तक नहीं देख सकते। कदाचित् कुछ लोग दूर देखने की कोशिश नहीं करते, क्योंकि वे इसे ऊर्जा का व्यय समझते है। लोभ जीवन को गतिमय रखने में सहायक है परन्तु जब इसका संतुलन बिगड़ जाता है तो व्यक्ति लड़खड़ाने लगता है इस स्थिति में विवेक रुग्ण हो जाता है। मानव की समस्त ऊर्जा मात्र धन एवं भोग में सिमट कर रेशम के कीड़े की तरह अंधकार में विलीन हो जाती है। जानवर कितनी दूर तक चर सकता है इसका निर्धारण उसके गले में बँधी रस्सी की लम्बाई निश्चित करती है खूटा को उखाड़े बिना जानवर स्वछंद चर नहीं सकता इसी तरह मानव का स्वार्थ उसके जीवन को वृहत बनता है। स्वार्थ जितना बड़ा होगा मानव भी उतना बड़ा बन जायेगा।

जीवन यदि यात्रा है तो इसका अखिरी पड़ाव भी होगा जहाँ पहुँच कर विश्राम मिल सकता है। इस विश्राम को प्राप्त करने के लिये जो मंत्र का जाप करते है वे अपने वास्तविक स्वार्थ को पहचान लेते है। संसार बाजार है हर प्राणी यहाँ सिर्फ क्रय करना चाहता है परन्तु खरीदा क्या जाय सबकी परख करने की अलग–अलग क्षमता है। क्षमता एवं परख के बावजूद भी बाजार से वस्तु क्रय तब तक नहीं हो सकता जब तक हम वस्तु का मूल्य चुका न दे। इस धारण से सिद्ध होता है कि संसार में हर वस्तु की कीमत है। संसार से कुछ पाने हेतु हमें इस नियम को पालन करना होगा। यदि कोई इस नियम को तोड़ना चाहता है तो उसे बाजार से पाने की कामना का त्याग करना होगा। क्या ऐसा सम्भव है?हाँ बस स्वार्थ के मंत्र का जाप उल्टा शुरू कर दे। संसार से पाने की जगह संसार को कुछ देना शुरू कर दें।

संसार में जो भी जन्म लेता है उसके पास कुछ–न–कुछ अलौकिक होता है।

परन्तु हर प्राणी इसे पहचान नहीं पाता। कोशिश से दुनिया में बहुत कुछ प्राप्त किया जा सकता है जीवन को दिशा देकर लक्ष्य तक पहुँचा जा सकता है। जगत में हर वस्तु की कीमत निश्चित हो सकती है सब कुछ बिक सकता है परन्तु मन की शान्ति कहीं से क्रय नहीं की जा सकती तथा समय को वापस बुलाया नहीं जा सकता। मंत्र का प्रयोजन जब तक स्वार्थ से बद्ध होगा तब तक हम संसार से चाहे कुछ भी प्राप्त कर ले परन्तु इनसे उलझाव के सिवा कुछ नहीं मिलेगा। संसार सागर है हर प्राणी तैर रहा है जैसे थका डूबना निश्चित है किनारा कहाँ है इस प्रश्न का उत्तर खोजने हेतु हम धरती पर आये हैं। इस प्रयोजन को सिद्ध करने हेतु जो मंत्र का जाप करेगा वह मुक्त हो जायेगा।

■ ■ ■